सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास के स्तर

एवं

पर्यावरणीय नियोजन का भौगोलिक अध्ययन

A Geographical Study Level of Agricultural Development

&

Environmental Planning in Sawai Madhopur District

भूगोल में विद्यावाचस्पति उपाधि हेतु

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध

2015

पर्यवेक्षक

डॉ. एच. एन. कोली

प्रवक्ता भूगोल विभाग,

राजकीय महाविद्यालय, रामगजमण्ड़ी, कोटा

शोधार्थी

ओमप्रकाश कोली

एम. ए. (भूगोल)

राजकीय महाविद्यालय, कोटा

(कोटा विश्वविद्यालय, कोटा)

Dr. H.N. KOLI **P.G.Department of Geography**

SUPERVISOR **Govt. Collage, Kota**

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled "A Geographical Study Level of Agricultural Development & Environmental Planning in Sawai Madhopur District" Submitted for the degree of doctor of philosophy in the subject of Geography of the Uinversity of Kota, Kota is Bonafied research work carried out by Omprakash Koli under our Supervision and guidance. No part of this original work has been Submitted for the degree before any University. The assistance and help received during the couse of Investigation has been Fully acknowledged.

He has also Completed the residental requirement of 200 days including the days spent on fieldwork. The thesis is in our opinion, complete and suitable for presentation for the award of Doctor of Philosophy.

Date **Dr. H.N.KOLI**

Supervisor

आभार

वर्तमान में भूगोल विषय में शोध सम्बन्धी कार्य अत्यधिक महत्त्व रखता है। भूगोल एक अन्तर्वैज्ञानिक एवं अन्तर्विषयक विषय माना जाता है, जिसका मुख्य लक्ष्य प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण का सामंजस्य पृथ्वीतल के विभिन्न क्षेत्रों में निरन्तर परिवर्तनशील परिस्थितियों के साथ कृषि विकास के स्तर के साथ–साथ पर्यावरण नियोजन के स्वरूप में एक बहुआयामी कार्य हैं। भारत व अन्य अल्प विकसीत और विकासशील देशों में बढ़ती हुई खाद्यान्न की मांग की पूर्ति के लिए कृषि विकास के स्तर को बढ़ाना एक सामान्य प्रकिया है। सभी देश अपनी खाद्यान्न की मांग को पूरा करने के लिए कृषि विकास के स्तर से सम्बधित विभिन्न स्वरूपों के लिए योजनाऐं बनाते हैं। इसलिए सवाई माधोपुर जिले में ''कृषि विकास के स्तर एवं पर्यावरणीय नियोजन का भौगोलिक अध्ययन'' पर शोध कार्य का अपना महत्त्व हैं। इस विषय पर आवश्यक आंकड़ों, जानकारियों के संकलन एवं यथोचित सामग्री प्राप्त कर उसके प्रत्येक मनके को सहेज कर योजनाबद्ध तरीके से सुस्थापित करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध ग्रन्थ के निर्माण में कुछ विशिष्ट विद्ववानों, व्यक्तियों तथा संस्थाओं का सहयोग एवं मार्गदर्शन प्राप्त हुआ हैं।

अपने जीवन के इस दुर्लभ एवं स्वर्णिम सुअवसर को प्राप्त करने में अत्यन्त प्रसन्नता एवं गौरव का अनुभव करते हुए इसका श्रेय परम श्रद्धेय डॉ. एच. एन. कोली के श्री चरणों में समर्पित करता हूँ जिन्होंने समय–समय पर अपना शानदार निर्देशन, बहुमूल्य मार्गदर्शन तथा आलोचनात्मक, संगठनात्मक, रचनात्मक सुझावों के साथ अपने व्यक्तिग स्नेह एवं आशीष से पोषित करते हुए शोध ग्रन्थ को यथोचित रूप प्रदान करने में अपना अमूल्य योगदान दिया है।

शोधार्थी प्रस्तुत शोध ग्रन्थ को पूर्ण करने के लिए डॉ. अजय विक्रम सिंह, डॉ. एम. जेड. ए. खाँन, डॉ.सीमा सिंह चौहान, डॉ. एल. सी. अग्रवाल, भूगोल विभाग, राजकीय महाविद्यालय, कोटा, एच.एल. शर्मा व के. के. मीना, भूगोल विभाग, राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर, डॉ. बाबू लाल महावर, (राजनीतिक विज्ञान) राजकीय महाविद्यालय, गंगापुर सिटी, चाचा जी रामचरण कोली, भूगोल व्याख्यता, राजकीय सीनियर सैकेण्डरी स्कूल, बहरावण्डा खुर्द, के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए में ह्रदय से आभारी हूँ , जिन्होंने इस दौरान प्रेरणा एवं उत्साहवर्धन करते रहे हैं।

शोधार्थी केन्द्रीय एवं राज्य सरकार, जिला मुख्यालय, तहसील मुख्यालय, भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों एवं पटवार मण्डल के सभी विभागों को हार्दिक धन्यवाद देना चहाता हूँ, जिन्होंने अध्ययन के लिए आंकड़े एवं सूचनाऐं उपलब्ध करानें में सहरानीय योगदान दिया हैं।

शोधार्थी जिले के भू–अभिलेख कार्यालय के पटवारी श्री राधेश्याम मीना व जिला कृषि अधिकारी कमलेश पहाड़ियाँ को हृदय के अन्त स्थल से धन्यवाद देना चहाता हैं , जिन्होंने कृषि भूमि से सम्बधिंत आंकड़ें उपलब्ध करने में सहयोग दिया हैं।

शोधार्थी अपने मित्रों बेन्टेश कुमार मीणा, लक्ष्मीनारायण, दीपचन्द बैरवा, रामवतार मीना, हनुमान महावर, डॉ. बुद्धी प्रकाश गोत्तम, राधेश्याम कोली, रघुवीर प्रसाद महावर, मनीष मीना, से मिले सहयोग के लिए हृदय के अन्तः स्थल से इन सबका में हार्दिक आभार प्रकट करना चहाता हूँ। मैं उन समस्त विचारों एवं लेखकों के प्रति आभारी हूँ , जिनकी कृतियाँ एवं रचनाओं से इस शोध प्रबन्ध के लेखन में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग मिला हैं।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की निर्विहन पूर्णता हेतु प्रेरणा स्त्रोत रहे मेरे पूज्य पिताजी श्री बंशी लाल कोली व वंदनीय माताजी श्रीमति गीता देवी के चरण कमलों में हृदय के गहनतल से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ , जिन्होंने पूरी तत्परता से समय पर आवश्यक सुविधाओं यथोचित मार्गदर्शन के जरिए मुझे सम्बल व शक्ति प्रदान की एवं अपना वरद्हस्त बनाए रखा। मैं उनके प्रति आजीवन कृतज्ञ हूँ।

शोधार्थी अपने छोटे भाईयों हीरालाल , तेजपाल , धर्मेन्द्र ,सोनू व बहिन सीमा एवं अपनी पत्नी श्रीमति नैना को भी धन्यवाद देता हूँ। जिन्होंने शोध के दौरान सहयोग किया हैं।

मैं मित्र धर्म का निर्वाह करने वाले सभी साथियों का आभार प्रकट करता हुआ शोध प्रबन्ध को परिश्रम पूर्वक मुर्द्रित करने में एवं समयबद्ध कार्य को पूर्ण करनें में टंकण कार्य में कुशल अशोक कुमार, प्रियंका कम्प्यूटर , कोटा का हार्दिक आभार अभिव्यक्त करता हूँ।

ओमप्रकाश कोली

.

अनुक्रमणिका

विषय–वस्तु	पृष्ट सं.
प्रथम – अध्याय	1–14
प्रस्तावना	
अध्ययन का उद्देश्य	
शोध परिकल्पना	
अध्ययन क्षेत्र का चयन	
अब तक किया गया कार्य	
अध्ययन विधि तन्त्र एवं आंकड़ों का संकलन	
अध्ययन की रूपरेखा	
द्वितीय – अध्याय	15–70
सवाई माधोपुर जिले की भौगोलिक एवं	
सांस्कृतिक पृष्टभूमि	
ऐतिहासिक पृष्ट भूमि	
क्षेत्र का महत्त्व	
स्थिति एवं विस्तार	
उचावच्च	
भूगर्भिक संरचना	
अपवाह तंत्र	

जलवायु	
मिट्टी	
जनसंख्या	
यातायात एवं संचार	
तृतीय – अध्याय	71–140
कृषि भूमि उपयोग एवं सिंचाई प्रतिरूप में आया परिवर्तन	
कृषि भूमि उपयोग का वर्गीकरण	
कृषि भूमि उपयोग में आया परिवर्तन (सन् 1992–93 से 2012–13)	
➢ वन क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन	
➢ कृषि अनुपलब्ध भूमि एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन	
➢ कृषि अयोग्य भूमि एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन	
➢ परती भूमि एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन	
➢ शुद्ध बोया गया क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन	
➢ कुल बोया गया क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन	
➢ दो फसलीय क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन	
कृषि प्रतिरूप एवं कृषिगत लक्षण	
➢ शस्य गहनता एवं उसमें आया परिवर्तन	

- शस्य श्रेणीकरण
- खरीफ फसलों के अर्न्तगत क्षेत्र एवं आया परिवर्तन
- रबी फसलों के अर्न्तगत क्षेत्र एवं आया परिवर्तन
- शस्य संयोजन प्रदेश– वीवर व दोई

सिंचाई प्रतिरूप

- सिंचाई का महत्त्व
- सिंचाई सुविधाओं का विकास
- सिंचाई के स्त्रोत एवं साधन–नहरे, कुऐं, तालाब और नलकूप
- सिंचाई गहनता एवं उसमें आया परिवर्तन
- सिंचित व असिंचित क्षेत्र एवं उसमें आया परिवर्तन
- सिंचित क्षेत्र में वृद्धि
- फसलों के अनुसार सिंचित क्षेत्र
- शुष्क कृषि पद्धति

चतुर्थ – अध्याय 41–165

कृषि में तकनीकीकरण का विकास

कृषि में तकनीकीकरण का महत्त्व

कृषि में हरित कान्ति का प्रभाव

कृषि में विद्युत का प्रयोग

- जिले में कृषि यन्त्र व औजारों में आया परिवर्तन
- जिले में रासायनिक खाद के प्रयोग में आया परिवर्तन

उन्नत बीजों , रासायनिक खाद, कीटनाशक

व पौधें संरक्षण औषधियों का प्रयोग

कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरणीय सम्बन्ध

पंचम् – अध्याय	166–180
कृषि विकास स्तर का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव	
कृषि विकास स्तर का प्राकृतिक पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव	
रासायनिक उर्वरक व कीटनाशक औषधियों का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव	
सिंचाई का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव	
षष्टम्–अध्याय	181–204
पर्यावरणीय नियोजन	
पर्यावरणीय प्रबन्धन के सिद्धान्त	
पर्यावरणीय संरक्षण की विधियाँ	
➢ ऊर्जा संरक्षण ➢ वन संरक्षण ➢ भूमि संरक्षण ➢ जल संरक्षण	
सप्तम्–अध्याय	205–220
कृषि विकास स्तर का मापन तथा सारांश एवं भावि कृषि विकास हेतु सुझाव	
सन्दर्भ ग्रन्थ सूची	220–234

मानचित्रों की सूची

क्र. सं.	मानचित्र	पृष्ट सं.
2.1	अध्ययन क्षेत्र का स्थिति एवं विस्तार	17
2.2	भौतिक विभाग	19
2.3	उच्चावच	21
2.4	अपवाह तन्त्र	24
2.5	वर्षा का वितरण	27
2.6	मिट्टियाँ	34
2.7	नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या वितरण	42
2.8	कार्यशील जनसंख्या का वितरण	46
2.9	साक्षरता का वितरण – 2011	50
2.10	जनसंख्या वितरण – 2011	53
2.11	जनसंख्या घनत्व – 2011	57
2.12	यातायात	65
3.1A	वन क्षेत्र 2012 – 13	77
3.1B	वन क्षेत्र में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	77
3.2A	कृषि अनुपलब्ध भूमि 2012–13	80
3.2B	कृषि अनुपलब्ध भूमि में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	80
3.3A	कृषि अयोग्य भूमि – 2012–13	82
3.3 B	कृषि अयोग्य भूमि में आया परिवर्तन	82

	1992–93 से 2012–13	
3.4A	परती भूमि 2012–13	85
3.4 B	परती भूमि में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	85
3.5A	वास्तविक बोया क्षेत्र – 2012–13	88
3.5 B	वास्तविक बोया क्षेत्र में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	88
3.6A	शस्य गहनता 2012–13	93
3.6 B	शस्य गहनता में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	93
3.7A	सरसों का क्षेत्र 2012–13	108
3.7 B	सरसों के क्षेत्र में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	108
3.8A	गेंहू का क्षेत्र 2012–13	110
3.8 B	गेंहू के क्षेत्र में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	110
3.9A	सिंचाई गहनता 2012–13	131
3.9 B	सिंचाई गहनता में आया परिवर्तन 1992–93 से 2012–13	131
7.1	कृषि विकास के स्तर का आधुनिकीकरण मापन 2012–13	208

आरखों की सूची

क्र.सं.	आरेख	पृष्ट सं.
2.1	क्लाइमोग्राफ	31
2.2	सवाई माधोपुर जिला, राजस्थान व भारत में जनसंख्या में दशवर्षीय परिवर्तन	39
2.3	नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या में दशवर्षीय परिवर्तन	41
2.4	कार्यशील जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना	49
2.5	सवाई माधोपुर जिला, राजस्थान व भारत में साक्षरता में दशवर्षीय परिवर्तन	51
2.6	कुल जनसंख्या में स्त्री व पुरूषों की जनसंख्या 2011	55
2.7	सवाई माधोपुर जिला, राजस्थान व भारत में जनसंख्या में जनसंख्या घनत्व की वृद्धि दर–1931 से 2011	59
2.8	सवाई माधोपुर जिला व राजस्थान के लिंगानुपात में दशवर्षीय परिवर्तन	63
3.1	सवाई माधोपुर जिले में भूमि उपयोग– 2012–13	76
3.2	शस्य गहनता में आया परिवर्तन	92
3.3	खरीफ की फसलों में आया परिवर्तन–बाजरा, ज्वार, तील	101
3.4	खरीफ की फसलों में आया परिवर्तन–उड़द, मूंग, मूँगफली, सोयाबीन	104
3.5	खरीफ की फसलों में आया परिवर्तन–मक्का, ग्वार, अरहर	105
3.6	रबी की फसलों में आया परिवर्तन–सरसों, गेंहू, चना, जौ, तरामीरा	112

3.7	जिले में फसलों का क्रम 2012–13	117
3.8	विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में आया परिवर्तन	128
3.9	जिले में शुद्ध सिंचित व असिंचित क्षेत्र में आया परिवर्तन	134
4.1	डीजल पम्प सेटों में आया परिवर्तन	151
4.2	विद्युत पम्प सेटों में आया परिवर्तन	153
4.3	उन्नत किस्म के बीजों में आया परिवर्तन	156
4.4	रासायनिक खाद के प्रयोग में आया परिवर्तन	160

सारणियों की सूची

क्र.सं.	सारणियाँ	पृष्ट सं.
1.1	सवाई माधोपुर जिले में प्रशासनिक इकाइयाँ	5
2.1	सवाई माधोपुर जिले में वर्षा का वितरण–2004 से 2013	29
2.2	तापमान, आर्द्रता व वर्षा का वितरण– 2013	30
2.3	जनसंख्या वृद्धि दर–1931 से 2011	37
2.4	नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि दर–1971 से 2011	40
2.5	तहसीलवार नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या – 2011	43
2.6	तहसीलवार कार्यशील जनसंख्या – 2011	44
2.7	कार्यशील जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना–2011	47
2.8	तहसीलवार साक्षरता का वितरण– 2011	54
2.9	सवाई माधोपुर जिला, राजस्थान व भारत में जनसंख्या घनत्व –1931 से 2011	58
2.10	तहसीलवार जनसंख्या घनत्व 2011	60
2.11	लिंगानुपात का वितरण 1901से 2011	62
2.12	अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति का वितरण– 2011	66
3.1	जिले में भूमि उपयोग में आया परिवर्तन –1992–1993 से 2012–13	75
3.2	शस्य गहनता का वितरण 1992–1993 से 2012–13	91
3.3	शस्य श्रेणी क्रम का वितरण	95
3.4	खरीफ की प्रमुख फसलों में आया परिवर्तन– 1992–93 से 2012–13	98
3.5	रबी की प्रमुख फसलों में आया परिवर्तन–	107

	1992–93 से 2012–13	
3.6	प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण –2012	116
3.7	वीवर विधि द्वारा शस्य संयोजन 2012–13	118
3.8	दोई विधि द्वारा शस्य संयोजन 2012–13	120
3.9	दोई विधि अनुसार शस्य सम्मिश्रण	121
3.10	विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित भूमि का वितरण	126
3.11	जिले में शुद्ध सिंचित व असिंचित क्षेत्र में आया परिवर्तन	132
3.12	फसलों के अनुसार सिंचित क्षेत्र	136
3.13	प्रमुख फसलों में जल की आवश्यकता	137
3.14	प्रमुख फसलों में शुष्क कृषि क्षेत्र 2012–13	138
4.1	जिले में कृषि यन्त्र व औजारों में आया परिवर्तन	145
4.2	जिले में कृषि यन्त्रों की संख्या में आया परिवर्तन	149
4.3	जिले में डीजल पम्प सेटों का प्रयोग	150
4.4	जिले में विद्युत पम्प सेटों का प्रयोग	152
4.5	उन्नत किस्म के बीजों का वितरण	154
	2002–03 से 2012–13	
4.6	रासायनिक खाद का प्रयोग 2002–03 से 2012–13	159
4.7	पौधें संरक्षण औषधियों का प्रयोग	162
6.1	फसलों को फरबदल कर बोने के लाभ	195
6.2	मृदा अपरदन में ज्वार की फसल का प्रभाव	195
7.1	सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का मापन 2012–13	210

छायाचित्रों की सूची

क्र.सं.	छायाचित्र	पृष्ट सं.
1.	जिले में प्रवाहित होने वाली नदियाँ I चम्बल II बनास	23
2.	I वन क्षेत्र II परती भूमि	78
3.	कृषि अयोग्य भूमि	83
4.	I चारागाह II परती भूमि में खरफतवार	86
5.	खरीफ फसलों में I गन्ना II बाजरा	97
6.	.खरीफ फसलों में I सोयाबीन II तिल्ली	99
7..	खरीफ फसलों में I मूँगफली II मक्का	103
8.	रबी फसलों में I सरसों II गेंहू	106
9.	रबी फसलों में I चना II चावल	113
10.	सिंचाई के साधनों में I कुऐ II नहरें	125
11.	सिंचाई के साधनों में I तालाब II टयूबबेल	127
12.	I सिंचित क्षेत्र II असिंचित क्षेत्र	133
13.	I कृषि में यन्त्रों के प्रयोग में ट्रेक्टर	147
	II कृषि में रासायनिक दवाईयों का प्रयोग करते हुए किसान	
14	I गेंहू की उत्तम किस्म की फसलें	155
	II जिले में लकड़ी के हल व बैलों का प्रयोग	
15.	मृदा अपरदन	173
16.	ृक्षारोपण कार्यकम पर्यावरण संरक्षण हेतु	198

प्रथम – अध्याय

प्रस्तावना

- अध्ययन क्षेत्र का महत्त्व
- अध्ययन का उद्देश्य
- शोध परिकल्पना
- अध्ययन क्षेत्र का चयन
- अध्ययन क्षेत्र का परिचय
- अब तक किया गया कार्य
- अध्ययन विधि तन्त्र एवं आंकड़ों का संकलन
- अध्ययन की रूपरेखा

प्रस्तावना

कृषि परम्परागत राष्ट्रों में विशेष कर भारत में कृषि एक अजीविका है, एक व्यवसाय है, एक क्रिया–उद्यम है, एक व्यवसाय है कृषि एक परम्परा है, जीवन पद्धति है, एक समाज, सभ्यता एवं संस्कृति है। इस प्रकार भारत में कृषि, कृषि विकास व भूमि उपयोग एक व्यवसाय ही नहीं वरन् एक जीवन पद्धति है। यह एक सांस्कृतिक विरासत है, जो भारत को सदियों से जीवंत रखे हुए है। इस सन्दर्भ में यह मानव जाति के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास के इतिहास का वह तथ्य है जो मानव सभ्यताओं के विकास क्रम के साथ–साथ धरोहर के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी हमें प्राप्त हुई है।

आधुनिकीकरण ने प्राकृतिक संसासधनों का अधाधुंध उपयोग जैव तकनीकी एवं वैज्ञानिक अन्वेषण, आविष्कारों ने कृषि विकास के प्रारूप उत्पादन क्षमता , वितरण व्यवसाय आदि को एक नवीन रूप दिये है, वहीं इनमें जैविकीय तत्वों को बदल कर फसलों की परिस्थितिकी को ही बदल ड़ाला है। एक ओर बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्यानों की बढ़ती मांग को तो कृषि विकास के स्तर को बढ़ाकर कर लिए लेकिन दूसरी और पर्यावरणीय नियोजन को ध्यान में रखना हम सभी के लिए चिंता का विषय है।

कृषि भूगोल में कृषि विकास एवं नियोजन की संकल्पना विषय वस्तु के व्यवहारिक पक्ष को प्रस्तुत करती है। प्रायः कृषि विकास से तात्पर्य कृषि उत्पादकता वृद्धि से लिया जाता रहा है, कृषि उत्पादकता में यह वृद्धि वैज्ञानिक एवं तकनीकी विधियों खाद, बाजों, सिंचाई के आधुनिक साधनों व आधुनिक यन्त्रों के समावेश के फलस्वरूप सम्भव हुआ है। यहाँ पर कृषि वृद्धि और कृषि विकास में विभेद का ज्ञान आवश्यक है। यान्त्रिक क्रान्ति व हरित क्रान्ति के पूर्व कृषि को उत्पादकता में वृद्धि का स्थानापन्न माना जाता रहा है। परन्तु आज उत्पादकता में होने वाली वृद्धि के अपेक्षाकृत कृषि विकास को अधिक विस्तृत अर्थों में प्रयोग करते है।[1] विकास वृद्धि का पर्याय नहीं अपितु इसमें उत्पादकता वृद्धि के साथ ही उत्पादों का समान सामयिक वितरण तथा पर्यावरणीय सन्तुलन बनाये रखने पर भी विचार किया जाता है। इस प्रकार कृषि विकास का अभिप्राय उस उत्पादकता की वृद्धि से है जिसका लाभ समाज के सभी वर्गों को समान रूप से प्राप्त हो और पर्यावरण का स्वरूप भी विकृत न हो।[2] कृषि भू–दृश्य में विकास तभी सम्भव हो सकता है जब कृषि के स्वरूप को निर्धारण करने वाले सभी कारकों को योजनाबद्ध ढ़ंग से प्रयोग किया जाये । अब तक केवल उत्पादकता की ही तरह कृषि विकास में सामजिक कल्याण और पर्यावरणीय नियोजन के सन्तुलन सम्बधी तथ्यों को भी प्राथमिकता प्रदान की जा रही है , ताकि किसी भी प्रकार का असंतुलन उत्पन्न न हो ।

जब संसार के विभिन्न क्षेत्रों में कृषि का प्रादुर्भाव हो रहा तब भारत के उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र में सिन्धु घाटी में मिश्र घाटी की सभ्यता के समकालीन ही कृषि का विकास हो रहा था। इसलिए भारत उपमाहाद्वीप में भी कृषि का विकास अतिप्राचीन काल में हुआ लेकिन यह विकास जिसकी झलक आज भी भारतीय गाँवों में देखने को मिलती हैं।[3] किन्तु वर्तमान में कृषि क्षेत्रों में खादों का प्रयोग और सदुपयोग दोनों हुए है, अध्ययन क्षेत्र भी इन में से एक रहा है। यहाँ वर्तमान में कृषि विकास की झलक हरित क्रान्ति के साथ दिखलाई देती हैं। देश व राज्य की भाँती सवाई माधोपुर जिले में भी कृषि विकास निरन्तर बढ़ रहा है। सन 1992 में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 39.78 प्रतिशत था जो बढ़कर सन 2012–13 में 58.63 प्रतिशत हो गया है, 1992 से 2012 के दौहरान वास्तविक बोया गया क्षेत्र में 18.85 प्रतिशत वृद्धि हुई है।[4] जो जिले में कृषि विकास के स्तर को दर्शाता है।

कृषि विकास के कारण कृषि योग्य भूमि व पर्यावरणीय दशाओं पर निरन्तर दबाव बढ़ रहा है।

अध्ययन क्षेत्र का महत्त्व

कृषि विकास एवं पर्यावरण की दृष्टि से हमारा देश सम्पन्न है, परन्तु इस संसाधन का सही रूप में उपयोग कैसे किया जाये इस पक्ष के अध्ययन पर अधिक ध्यान नहीं दिया है। अनियन्त्रित कृषि विकास के कारण पर्यावरण प्रदुषण , पारिस्थितिकी असन्तुलन, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की असामान्य वृद्धि एवं विकास की गतियाँ, खाद्य संकट, भूखमरी व बैरोजगारी निर्धनता, अशिक्षा, सामाजिक, प्राकृतिक आपदा, वन विकास , आदि समस्याऐं विश्व समुदाय का ध्यान अपनी ओर आकृर्षित कर रही है। कृषि विकास एवं पर्यावरणीय नियोजन आपस में कारण तथा प्रभाव के सम्बन्धों को स्पष्ट करते है। अतः इनका एक साथ अध्ययन आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। इसी को दृष्टि गत रखते हुए शोध का महत्त्व निम्न कारणों से है–

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन में भूमि उपयोग के स्थानीक वितरण का अध्ययन किया गया हैं जिससे जिले में कृषि विकास से सम्बन्धि योजनऐं बनाने में सहयोग मिलेगा ,जो क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास में सहायक सिद्ध होगा ।

2 प्रस्तुत अध्ययन में सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास के स्तर एवं पर्यावरणीय नियोजन का अध्ययन किया गया है जिसमें जिले के अविकसीत क्षेत्रों का पता लगाया जा सकेगा ताकि उस क्षेत्र मे विकास से सम्बन्धित नवीन योजनाओं को क्रियान्वित किया जा सके।

3. प्रस्तुत अध्ययन में कृषि भूमि उपयोग एवं कृषि वितरण मानचित्र तैयार किये गये है जो सवाई माधोपुर जिले में अन्य अध्ययन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगें ।

4. यह शोध प्रबन्ध जिले के लिए उपेक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु नया आधार प्रस्तुत करेगा।

5. यह अध्ययन जिले के भावी विकास की व्यूह रचना प्रस्तुत करने में सहायक होगा।

6. जिले के नियोजन सम्बन्धित प्रस्ताव प्रस्तुत करने में सहायक होगा।

अध्ययन के उद्देश्य

शोध अधययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैः–

1. अध्ययन क्षेत्र के कृषि विकास स्तर का अध्ययन करना ।
2. भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप कृषि फसल प्रारूप का अध्ययन करना।
3. कृषि भूमि उपयोग एवं सिंचाई प्रतिरूपों में आया परिवर्तन का अध्ययन करना
4. जिले में कृषि विकास से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं का अध्ययन कर नियोजन हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।
5. वर्तमान में कृषि विकास में तकनीकीकरण का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना

प्रस्तुत शोध प्रबन्धन में निम्न परिकल्पनाओं को आधार बनाया गया है –

1. सवाई माधोपुर जिले में जनसंख्या वृद्धि एवं कृषि विकास के साथ–साथ पर्यावरण नियोजन में वृद्धि हुई है। कृषि विकास संतुलन की पिछली प्रवृतियों के आधार पर वर्तमान कृषि विकास का मापन ।
2. जिन क्षेत्रों में शुद्ध बोया गया क्षेत्र अधिक है वहाँ कृषि विकास अधिक हुआ है।

3. सिंचित क्षेत्रों में ही कृषि विकास अधिक हुआ है।

4. कृषि विकास में सिंचाई के साधन, प्रमाणित बीज, रासायनिक उर्वरकों एवं यन्त्रीकरण की प्रमुख भूमिका रही है।

5. कृषि विकास एवं कृषि जनसंख्या के मध्य धनात्मक सम्बन्ध है।

अध्ययन क्षेत्र का चयन

अध्ययन क्षेत्र राजस्थान के दक्षिण–पूर्व में स्थित महत्त्पूर्ण कृषि उत्पादक क्षेत्र है, जहाँ जनसंख्या का घनत्व राज्य की तुलना में अधिक है। कृषि उत्पादन की दृष्टि से भी सवाई माधोपुर जिला राज्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। जिला अध्ययन की दृष्टि से अछुता रहा है तथा जिले में कृषि के विकास स्तर एवं पर्यावरणीय नियोजन के अध्ययन हेतु शोधार्थी द्वारा इस क्षेत्र का चयन किया गया । इस पर अबतक वैज्ञानिक अध्ययन नहीं हो पाया है। इसके अतिरिक्त अध्ययन कर्ता स्वयं सवाई माधोपुर जिले का निवासी होने के कारण प्राथमिक एवं द्वितीय आंकड़े प्राप्त करने में सुगमता होना भी इस क्षेत्र के चयन का प्रमुख कारण रहा है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय

सवाई माधेपुर जिला राजस्थान राज्य के दक्षिणी–पूर्वी भाग में स्थित है। यह चौहान वंशीय राजाओं का शासित क्षेत्र है, यह भू–आकृतिक दृष्टि से अरावली व विंध्यन पर्वत श्रेणियों से घिरा है। इसकी चम्बल नदी मध्यप्रदेश राज्य के साथ प्राकृतिक सीमा बनाती है।

अध्ययन क्षेत्र के उत्तर–पूर्व में करौली, उत्तर में दौसा, उत्तर–पश्चिम में जयपुर, दक्षिण में कोटा, बूँदी व दक्षिण– पश्चिम में टोंक जिले स्थित है और दक्षिण–पूर्व में मध्यप्रदेश राज्य है। (मानचित्र 2.1) जिले में सात उपखण्ड़, 7 तहसील, 35 भू–अभिलेख निरीक्षक वृत, 287 पटवार मण्ड़ल, कुल राजस्व ग्राम 825 इनमें कुल आबाद ग्राम 747 व गैर आबाद ग्राम 78 है।[5] (सारणी संख्या 1.1)

विषय पर अब तक किये कार्य की समीक्षा

कृषि विकास का अध्ययन प्राचीन काल से किया जाता रहा है, यूनानी, रोमन, अरबी, चीनी व भारतीय भूगोलवेत्ताओं ने विश्व के विभिन्न भागों के कृषि क्रिया कलापों के फसल प्रारूपों की विभिन्नताओं के सन्दर्भ में किये है। भूगोलवेत्ताओं ने इसके अन्तर्गत भूमि उपयोग के साथ–साथ कृषि विकास के स्तर का विभिन्न क्षेत्रों में अनेक

रूपों में वर्गीकरण, वितरण एवं परिवर्तनों का अध्ययन कर उसकी अन्य क्षेत्रों से तुलना की है। कृषि भूगोल की पहली रचना **आर्थर यंग** की है जिने की मान स्मरणीय कृति है इंग्लैण्ड में पर्यावरण व फसल स्वरूप का सन् (1970) प्रस्तुत की गई है, इसमें पर्यावरण व कृषि विकास घटनाओं के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया है।

सारणी संख्या 1.1

सवाई माधोपुर जिले में प्रशासनिक इकाइयाँ

2012

क्र. सं.	उपखण्ड़	तहसील	भू–अभिलेख निरीक्षक वृत	पटवार मण्ड़ल	कुल आबाद ग्राम	गैर आबाद ग्राम	कुल राजस्व ग्राम
1	गंगापुर	गंगापुर	6	48	121	8	129
2	बामनवास	बामनवास	7	55	139	14	153
3	मलारना डूँगर	मलारना डूँगर	3	24	59	17	76
4	बौंली	बौंली	4	31	101	5	106
5	चौथका बरवाड़ा	चौथका बरवाड़ा	3	24	66	1	67
6	सवाई माधोपुर	सवाई माधोपुर	7	48	150	10	160
7	खण्डार	खण्डार	5	35	111	23	134
	कुल	7	35	267	747	78	825

स्त्रोतः राजस्व विभाग, सवाई माधोपुर ।

फॉन थ्यूनेन ऐसा पहला विद्वान था जिसमें कृषि भूमि उपयोग और फसल गहनता पर स्थानिक मॉडल तैयार किया है। कास्मोवस्की (1911) ने कृषि भूगोल का वैज्ञानिक आधार पर कृषि भूगोल की वैज्ञानिक स्थित की व्यवस्था की।

जॉनसन (1926) ने यूरोप के कृषि प्रदेशों का अध्ययन किया, गांगुली बी. एन (1938) ने गंगा नदी घटी में कृषि विकास एवं जनसंख्या पर कार्य किया, स्टाम्प एल. डी. (1948) ने बिट्रेन के एक वृहत भूमि उपयोग तैयार कर बिट्रेन की भूमि उपयोग एवं दुरूउपयोग पर कार्य प्रस्तुत किया, कार्ल ऑ सॉवर, वीवर, थोमेन आदि विद्वानों ने ऐसे कार्य में योगदान दिया हैं।

भारत में सर्वप्रथम इस क्षेत्र में **चटर्जी एस.पी.** (1945) ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इसके अतिरिक्त भारत के प्रसिद्ध भूगोलवेत्ताओं जैसे–प्रो. शफी एम., हुसैन माजिद, बी. एल. एस प्रभाराव, भाटिया , सिंह जसबीर, उल्लाह रफी आदि नाम भी अति महत्त्वपूर्ण है भारतीय कृषि विकास एवं भूमि उपयोग पर नवीन शोध कार्य हुए है–

1 **ग्रीन, डी.बी** (1975) : ने जनसंख्या के दबाव से कृषि में आये परिवर्तन का अध्ययन किया ।

2 **भारारा, एल. पी.**(1979) : ने मरूस्थलीय प्रदेश में कुछ सामाजिक व कृषि परिवर्तन पर अध्ययन प्रस्तुत किया है।

3 **सिंह, जसबीर** (1979) : ने हरियाणा के कृषि विकास स्तर का अध्ययन प्रस्तुत किया है।

4 **गुप्ता, एन.एल.** (1987) :राजस्थान में कृषि विकास विषय पर अपना अध्ययन प्रस्तुत किया है, दयाशंकर (1993) ने ''कृषि के परिवर्तनशील प्रतिरुपों का भौगोलिक अध्ययन विषय पर किया है, **के. सी. सेक्सना एवं एन. सी. शर्मा** (1976) ने शस्य विज्ञान के आधुनिक सिद्धान्त'' विषय पर, **एस. सी. चटर्जी** ने **''प्लानिंग और एग्रीकलचरल डवलपमेन्ट**'' विषय पर अपना महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

5 **डीलन व सिंह** (1990): ने कृषि भूगोल में कृषि विकास का अध्ययन किया है।

6 **शर्मा, एल. एन.**(1990): ने शुष्क सम्भाग की परिस्थितिकी पर सिंचाई प्रभाव का अध्ययन कर कृषि विकास स्तरों का अध्ययन प्रस्तुत किया है। **खान मजहर** (1996) ने भारतीय कृषि में चयनित फसलों का तुलनात्मक अध्ययन किया है।

7 **कलवार, एस. सी.** (1977) : ने क्रमशः जयपुर, चित्तौड़ विकास स्तर पर अध्ययन **डॉ. लक्ष्मी शुक्ला** (1977) प्रस्तुत किया है। एण्डसन (1965) ने मैसूर जिले का सिंचाई स्तर तथा कृषि विकास का अध्ययन कर कृषि विकास की समस्याओं को उजागर किया है।

8 **डॉ. एच.एन. कोली** (1995): ने हाड़ौती प्रदेश में जनसंख्या, खाद्य संसाधन एवं कृषि विकास नामक शीर्षक पर अध्ययन प्रस्तुत किया ।

9 **धाभाई, अशोक कुमार**(2006) : ने मांगरोल तहसील में बदलता हुआ कृषि भूमि उपयोग पर शोध कार्य प्रस्तुत किया है।

10 **रेणुका व अली** (1997) : ने सिंचाई व कृषि भूमि उपयोग पर प्रभाव व उत्पादन विषय पर अध्ययन प्रस्तुत किया है।

11 **दत्ता व देवीकर** (1998) : ने पुणे जिले की फसलों के क्षेत्रीय विषय पर अध्ययन किया है।

12 **गोस्वामी व दास** (1999) : ने असम राज्य के वर्तमान कृषि क्षेत्र में परिवर्तन एवं जिम्मेदार प्रमुख घटक सम्बन्धित कृषि उत्पादकता विषय पर अध्ययन किया है।

13 **कोठारी साधना** (1999) : ने उदयपुर जिले में सलुम्बर तहसील का कृषि भूमि उपयोग का प्रतिदर्शी के आधार पर निर्धारण किया है।

14 **डॉ.आर.के. गुर्जर** (1987) : ने इन्दिरा गाँधी नहर परिवर्तन क्षेत्र में हुए कृषि आधुनिकीकरण का अध्ययन किया है। **मेहश्वरी आर. सी.** ने अपने शोध में प्राकृतिक संसाधन तथा जैव शक्ति संसाधन आधारित सतत् कृषि विकास हेतु योजना प्रस्तुत की है।

16 **डॉ. रामा प्रसाद** (2002) : ने "National Geographical Jornal of india"

में प्रस्तुत अपना शोध पत्र में टोंक जिले में कृषि भू–दृश्य का परिवर्तन भूमि उपयोग प्रारुप पर लेख लिखे तथा ग्रामीण परिवेश के विकास नियोजन हेतु सुझाव प्रस्तुत किये। **डी. सी. वारई** ने कृषि भूमि उपयोग तथा विकास की नीति प्रस्तुत की। उन्होंने अपने शोध पत्र " Agricultural land use development strategies" में बताया कि विकास नीति बनाते समय कृषि, पशुपालन व भूमि उपयोग को ध्यान में रखना चाहिए ।

17 **नासिर यासमिन** : "In Dehradun Didtrict" नामक अपने शोध पत्र में कृषि विकास के लिए निम्न आधारों का चयन किया 1. सकल फसल क्षेत्र (GEA) में व्यापारिक फसलों का प्रतिशत क्षेत्र 2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र (NSA) मे शुद्ध सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत (NEA) 3. सकल सिंचित (NIA) मे शुद्ध संचित क्षेत्र (NIA) का प्रतिशत 4. सकल फसली क्षेत्र के प्रति हेक्टेयर क्षेत्र में प्रयोग किये गये रासायनिक उर्वरक 5. फसल गहनता 6. ग्रामीण साक्षरता दर 7. प्रत्येक दश लाख जनसंख्या पर हायर सेकण्डरी स्कूल 8. कुल जनसंख्या में साक्षरता दर

इनके अलावा अनेक विद्वानों ने कृषि भूमि उपयोग एवं कृषि विकास के स्तर पर अनेक पुस्तकें एवं शोध पत्र लिखकर भूगोल के विकास मे सराहनीय योगदान दिया है, जो कि इस शोध कार्य के लिए महत्वपूर्ण आधार होगें।

आंकड़ों के स्त्रोत एवं विधि तन्त्र

वर्तमान अध्ययन के लिए प्राथमिक तथा द्वितीय आंकड़ों की सहायता ली गई है। प्राथमिक आंकड़े सेम्पल सर्वे द्वारा क्षेत्र के अध्ययन से एकत्रित किये गये हैं।

द्वितीय आंकड़ें विभिन्न स्त्रोतों से एकत्रित किये गये हैं जनसंख्या आंकड़े निदेशक जनसंख्या निदेशालय, जयपुर से तथा विभिन्न वर्षों की जनगणना प्रतिवेदन सवाई माधोपुर से प्राप्त किये है।

कृषि भूमि उपयोग कृषि विकास स्तर से सम्बन्धित आंकड़े जिला भू अभिलेख कार्यालय सवाई माधोपुर से , राजस्थान रेवेन्य बोर्ड , राज्य व जिले के स्टेटिस्किल हैण्डबुक एवं इकोनोमिक एब्सट्रेक्ट ऑफ राजस्थान वार्षिक प्रकाशन से लिये गये हैं। कृषि विकास से सम्बन्धि आंकड़े जिला भू–अभिलेख से तथा जिला विस्तार कार्यालय , सवाई माधोपुर से लिये है।

भौगोलिक, भूआकृतिक और जलवायु के आंकड़े राज्य के खनिज विभाग, भारतीय मौसम विभाग कार्यालय, जयपुर तथा जिला कार्यालय से लिये गये है।

इस अध्ययन में कृषि विकास के स्तर एवं पर्यावरणीय नियोजन का अध्ययन किया गया है।

1 सह–सम्बन्ध गुणांक–

सह–सम्बन्ध गुणांक (r) ज्ञात करने के लिये कार्ल पियर्सन के निम्न सूत्रों का प्रयोग किया गया है–

सूत्र–

$$r = \frac{\sum dxdy}{\sum dx^2 \times \sum dy^2}$$

जिसमें–

r = सह–सम्बन्ध गुणांक

$\sum dxdy$ = सामान्तर माध्य से लिये गये x व y के विचलनों की गुणाओं का योग

$\sum dx^2$ व $\sum dy^2$ = x व y के विचलन वर्गों का योग

2 शस्य गहनता सूचकांक निम्नलिखित सूत्र की सहायता से ज्ञात किया है–

सूत्र –

$$\text{शस्य गहनता सूचकांक} = \frac{\text{कुल फसलीय क्षेत्र}}{\text{वास्तविक बोया गया}} \quad 100$$

3 सिंचाई गहनता सूचाकांक निम्नलिखित सूत्र की सहायता से ज्ञात किया हैं–

सूत्र–

$$\text{सिंचाई गहनता सूचकांक} = \frac{\text{कुल सिंचित भूमि का क्षेत्रफल}}{\text{कुल काश्त भूमि का क्षेत्रफल}} \quad 100$$

शस्य संयोजन ज्ञात करने के लिये वीवर विधि व दोई विधि की सहायता से ज्ञात किया गया है–

4 वीवर विधि – न्यूनतम विचलन विधि

सूत्र = $\propto = \frac{\overline{\sum d^2}}{N}$

d = यहाँ **d** का तात्पर्य फसलों के सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशत क्षेत्रों के अन्तर से है।

n = **n** से तात्पर्य सम्बन्धित संयोजन में फसलों की संख्या से हैं।

5 दोई विधि

सूत्र = $(\sum d^2)$

6 जनसंख्या घनत्व के लिए निम्नलिखित सूत्र की सहायता से ज्ञात किया गया है–

गणितीय जनसंख्या धनत्व = $\frac{\text{कुल जनसंख्या}}{\text{कुल क्षेत्रफल}}$ 100

अन्त में कृषि विकास स्तर के आधुनिकीकरण का मापन हेतु सामुहिक सूचकांक का प्रयोग किय गया है– इस लिए प्रमापीकरण विधि से ज्ञात किया है–

7 प्रमापीकरण विधि =

प्रथम चरण :– सूचकांकों का समान्तर माध्य ज्ञात करना

सूत्र = $\bar{X} = \frac{\sum X}{N}$

यहाँ $\bar{X}$ = समान्तर माध्य

X = सूचकांकों का कुल योग

N = सूचकांकों की कुल संख्या

द्वितीय चरण = सुचकांकों से प्रमाप विचलन ज्ञात करना।

सूत्र =

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}}$$

यहाँ पर σ = प्रमाप विचलन

d = $X - \bar{X}$ = वास्तविक माध्य से ज्ञात किया गया विचलन

d^2 = वास्तविक माध्य से निकले गये विचलनों का वर्ग

$\sum d^2 x$ विचलनों का कुल योग

N = सूचकांकों की संख्या

तृतीय चरण

प्रमापीकरण का मान = $\frac{x - \bar{x}}{\sigma}$

यहाँ पर X = सूचकांकों का वास्तविक मान

$\bar{X}$ = समान्तर माध्य

σ = प्रमाप विचलन

चर्तुथ चरण –

सामुहिक सूचकांक ज्ञात करना । प्रत्येक भू–अभिलेख निरीक्षक वृत के सभी सूचकांक के प्रमापीकरण मान को जोड़कर कुल योग में सूचाकांकों अर्थात 9 का भाग देते है।

अत : सामुहिक सूकांक = प्रमापीकरण के मानों का योग / सूचकांकों की संख्या

सामुहिक सूचकांक के आधार पर सवाई माधोपुर जिले को चार आधुनिकीकरण खण्ड़ों (निम्न विकसीत, मध्य विकसीत उच्च विकसीत व उच्चतम विकसीत) में विभाजित किया है।

अध्ययन की रूपरेखा

सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास स्तर एवं पर्यावरणीय नियोजन का अध्ययन 7 अध्ययों के अन्तर्गत किया गया है–

प्रथम अध्याय प्रस्तावना का है जिसमें अध्ययन का उद्देश्य, शोध परिकल्पना, अध्ययन क्षेत्र का चयन, विषय पर अब तक गये कार्य की समीक्षा, अध्ययन विधि तन्त्र एवं आंकड़ों का संकलन व अध्ययन की रूप रेखा का वर्णन किया गया है।

द्वितीय अध्याय सवाई माधोपुर जिले की भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ट भूमि, अध्ययन क्षेत्र का महत्त्व से सम्बन्धित है। जिसमें स्थिति एवं विस्तार उच्चावच, भूगर्भिक संरचना, अपवाह तन्त्र, जलवायु, मिट्टियाँ, जनसंख्या में –जनसंख्या वृद्धि , ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या वृद्धि , क्रियाशील जनसंख्या, जनसंख्या घनत्व, लिंगानुपात , अनुसूचित जाति व अनुसूचित जन–जाति, साक्षरता एवं यातायात व संचार सेवा आदि के अन्तर्गत क्षेत्र का अध्ययन किया गया है।

तृतीय अध्याय में कृषि भूमि उपयोग एवं सिंचाई प्रतिरूप में आया परिवर्तन से सम्बन्धित है जिसमें कृषि भूमि उपयोग में वन क्षेत्र व वन क्षेत्र में आया परिवर्तन, कृषि

अनुपलब्ध भूमि का क्षेत्र, एवं इसमें आया दो दशकीय परिवर्तन, कृषि अयोग्य भूमि का क्षेत्र, कृषि अयोग्य क्षेत्र में आया परिवर्तन, परती भूमि का क्षेत्र, परती भूमि के क्षेत्र में आया परिवर्तन, वास्तविक बोया गया क्षेत्र, वास्तविक बोये गये क्षेत्र में आया परिवर्तन, कुल बोया गया क्षेत्र, कुल बोये गये क्षेत्र में आया परिवर्तन, दो फसलीय, क्षेत्र में आया परिवर्तन व कृषि प्रतिरूप एवं कृषि गत लक्षण–शस्य गहनता, शस्य गहनता में आया परिवर्तन, शस्य श्रेणी क्रम, खरीफ की प्रमुख फसलें–बाजरा, ज्वार, उड़द, मूंग, अरहर, मक्का व मूंगफली व सोयाबीन , रबी की प्रमुख फसलें –सरसों, गेंहू , जौ , तारामीरा, चना , शस्य संयोजन प्रदेश–वीवर व दोई विधि के अनुसार सिंचाई प्रतिरूप–सिंचाई का महत्त्व , सिंचाई सुविधा का विकास, सिंचाई के साधन –कुऐं, नलकूप , नहर, तालाब सिंचित व असिंचित क्षेत्र , सिंचित व असिंचित क्षेत्र में आया परिवर्तन , सिंचित क्षेत्र में वृद्धि , सिंचाई गहनता , सिंचाई गहनता में आया परिवर्तन , फसलों के अनुसार सिंचित क्षेत्र व शुष्क कृषि पद्धति आदि का अध्ययन किया गया है।

चर्तुथ अध्याय कृषि में तकनीकीकरण का विकास से सम्बन्धित है जिसमें कृषि में तकनीकीकरण का महत्त्व , कृषि में हरित क्रांति का प्रभाव , जिले में कृषि यंत्र व औजारों में आया परिवर्तन– हल, गाडियाँ, ट्रेक्टर , गन्ने की घाणियाँ , थ्रेसर , विधुत का उपयोग– डीजल पम्प सेट , विद्युत पम्प सेट , उन्नत बीज का उपयोग गेंहू, सरसों, रासायनिक उर्वरकों का उपयोग , कीटनाशक व पौधा संरक्षण औषधियों का प्रयोग , कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरणीय सम्बन्ध आदि का अध्ययन किया गया है।

पंचम अध्याय में कृषि विकास पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव से सम्बधित है जिसमें कृषि विकास का प्राकृतिक पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव , सिंचाई का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव , रासायनिक उर्वरकों व औषधियों का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव आदि का अध्ययन किया गया है।

षष्टम अध्याय पर्यावरणीय नियोजन से सम्बन्धित है जिसमें पर्यावरणीय प्रबन्धन के सिद्धान्त , पर्यावरणीय संरक्षण की विधियों में – ऊर्जा संरक्षण , वन संरक्षण , भूमि संऱक्षण , जल संरक्षण आदि का अध्ययन है।

अन्तिम अध्याय सप्तम में कृषि विकास स्तर के आधुनिकीकरण का मापन एवं जिले की समस्ययाओं एवं उनके निराकरण के लिए महत्त्वपूर्ण सुझावों का समावेश किया गया हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गुप्ता, एन. एल. (1987) : ''राजस्थान में कृषि विकास'' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर।

2. कलवार, एस.सी. (2001) : ''पर्यावरण संरक्षण,'' पोइन्टर पब्लिकेशन, एस.एम.एस हाइवें, जयपुर।

3. श्रीवास्तव, दयाशंकर (1993) : '' कृषि के परिवर्तनशील प्रतिरूपों का भौगोलिक अध्ययन'', क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, पृष्ट–105,106,107।

4. जिला सांख्यिकीय रूपरेखा (1992 से 2012), जिला सवाई माधोपुर, राजस्थान।

5. जिला सांख्यिकीय रूपरेखा (2012), जिला सवाई माधोपुर, राजस्थान।

द्वितीय–अध्याय

सवाई माधोपुर जिले की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक पृष्टभूमि

- ऐतिहासिक पृष्ट भूमि
- क्षेत्र का महत्त्व
- स्थिति एवं विस्तार
- उचावच्च
- भूगर्भिक संरचना
- अपवाह तंत्र
- जलवायु
- मिट्टी
- जनसंख्या
- यातायात एवं संचार

ऐतिहासिक पृष्ट भूमि

जिला ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक दृष्टि से राजस्थान में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाए हुए है। जिले के इतिहास के कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य रहे है– जिले का इतिहास रणथम्भौर दुर्ग के इतिहास के साथ जुड़ा है। माधोसिंह प्रथम द्वारा रणथम्भौर दुर्ग को अपने राज्य में सम्मिलित करने के पश्चात 19 जनवरी 1763 ई. को अपने नाम से सवाई माधोपुर नगर की स्थापना की थी । जहाँ तक रणथम्भौर दुर्ग के निर्माण का प्रश्न है, इस विषय पर विद्वानों के अलग–अलग मत है–कोई इसे चन्द्रवंशी शासक हस्ती (जिसने हस्तिनापुर बसाया) के चचेरे भाई महेश्वर के राजा रंतिदेव के द्वारा निर्माण हो मानते हैं, तो कोई चौहान राजा रणथम्भन देव द्वारा निर्मित मानते है अनुमानतः इसका निर्माण आठवींशदी के आस–पास हुआ माना जाता है। प्रमाणों के आधार पर 1103 ईश्वी (विक्रम संवत1160) के पूर्व यह दुर्ग मौजूद था, क्योंकि पृथ्वी राज प्रथम के पितामह ने यहाँ स्थित जैन मंदिर पर स्वर्ण कलश चठाए थे।

1209 ई में कुतबुद्दीन ऐवक व 1226 में इल्तुतमिश ने रणथम्भौर दुर्ग की चढ़ाई की किन्तु प्रारम्भ में उन्हें निराशा ही हाथ लेगी अन्तत उन्होंने दुर्ग पर कब्जा कर लिया, 1282 ई. में जैत्रसिंह अपने जीवन काल में ही हम्मीर को रणथम्भौर दुर्ग की सत्ता सौंप दी थी।[1] हमीर चौहान को अपनी हठ के लिए संसार भर में जाना जाता है। "त्रिया तेल हठ चढ़ ने दूजी वार'' 1301 में अलाउद्दीन खिलजी ने दुर्ग पर आक्रमण किया अन्तत : हमीर की पराज हुई । अलाउद्दीन खिलजी का कब्जा हो गया । 1460 ई. में चित्तौङ के महाराजा कुम्भा ने मालवा के खिलजियों से इसे छीन लिया, किन्तु कुछ समय पश्चात ही पुनः मालव के खिलजियों ने इस पर अधिकार कर दौलत खां को यहाँ का गर्वनर नियुक्त कर दिया। 1519 ई. राणा सांगा ने रणथम्भौर को जीत कर मेवाड़ राज्य में सम्मिलित कर लिया । राणा सांगा की मृत्यु के बाद यह दुर्ग बावर के हाथों में चला गया ।

1555 ई. मे हुमायुँ को परास्त कर शेरशाह सूरी ने रणथम्भौर पर कब्जा किया । बाद में बूंदी के शासक राव सुरजन हाड़ा ने आदिलशाह के किलदार झुझार खां से इसे खरीद लिया।

1569 ई. में अकबर ने इस पर आक्रमण किया , किन्तु राव सुरजन हाड़ा टस से मस नहीं हुआ। अन्त में एक संधि के साथ रणथम्भौर दुर्ग अकबर को सौंप दिया गया। 1631 ई. में शाहजहाँ ने बिट्ठलदास गोड़ को यहाँ का दुर्गाध्यक्ष नियुक्त किया,

किन्तु औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् बहादुर शाह ने 1716 ई. में इसमें से मलारना का परगना आमेर के राजा जयसिंह को दे दिया। 1763 ई. में मुगल बादशाह ने रणथम्भौर दुर्ग को आमेर के राणा माधोसिंह प्रथम को सौंप दिया। तब से 1947 तक यह दुर्ग कछवाह वंश के शासकों के पास ही रहा। माधोसिंह प्रथम ने रणथम्भौर दुर्ग के दक्षिण में अपने नाम से सवाई माधोपुर नगर बसाया ।

जिले का क्षेत्र आजादी से पुर्व पुराने करौली राज्य तथा पुराने जयपुर राज्य की सवाई माधोपुर, गंगापुर व हिण्डौन निजामतों में जयपुर आता था। 15 मई 1949 को मत्स्य संघ का राजस्थान में विलय हुआ तथा सवाई माधोपुर जिले का गठन किया गया जिले में से 15 अगस्त 1992 में महुआ को अलग कर दौसा जिला बनाया। उसके बाद 19 जुलाई 1997 को सवाई माधोपुर जिले का पुर्नगठन कर करौली को पृथक जिला बनाया गया । जिला सवाई माधोपुर में सवाई माधोपुर, गंगापुर सिटी, बौंली, बामनवास तथा खण्ड़ार पंचायत समितियों को रखते जिले का वर्तमान स्वरूप सामने आया ।

भौगोलिक स्थिति एवं विस्तार

सवाई माधोपुर जिला अपनी गौरव शाली परम्पराओं की धरोहर है, यह न केवल इतिहास के महत्त्व का विषय है। बल्कि यह अपनी भौगोलिक, सांस्कृतिक, कृषि विकास एवं आर्थिक विशेषताओं के लिए जाना जाता हैं। यह अरावली व विंधयाचल पर्वत मालाओं एवं सघन वनों से घिरा हुआ हैं। सवाई माधोपुर जिला राजस्थान के दक्षिणी–पूर्वी भाग में 25°45′ से 26°41′ उत्तरी अक्षांश तथा 75° 59′ से 77° पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इसके उत्तर में दौसा, उत्तर–पूर्वी में करौली, उत्तर–पश्चिम में जयपुर, दक्षिण मे कोटा, बूँदी, दक्षिण–पश्चिम में टोंक जिला स्थित है। इसके दक्षिण में व उत्तर में चम्बल नदी इसे मध्यप्रदेश राज्य से अलग करती है। जिले की स्थिति एवं विस्तार को मानचित्र संख्या 2.1 में दर्शाया गया है।

भूगर्भिक संरचना

जिले का अधिकांश भाग प्राचिनतम भूखण्ड़ों से निर्मित है। जो केम्ब्रियन युग के पूर्व की आग्नेय चट्टानों तथा तलछट से बनी चट्टानों के रूपान्तरण का परिणाम है। अरावली पर्वत श्रंखला विश्व की प्राचिनतम अवशिष्ट पर्वत माला हैं। यहाँ विंध्यन पर्वत श्रंखला प्रायः समाप्त हो जाती हैं। जिले की अरावली श्रेणी में स्फटिक, अभ्रक, नीस व सिस्ट आदि चट्टाने अधिक पाई जाती है जबकि विध्यन श्रेणियों में कैमूर, रीवा, भण्ड़ेर प्रमुख है। अरावली व विध्यन श्रेणियाँ सवाई माधोपुर, खण्डार तथा चौथ का बरवाड़ा तहसीलों में विस्तत हैं तथा कुछ छोटी–छोटी पहाड़ियाँ इधर–उधर विखरें रूप में दिखाई देती हैं। यह क्षेत्र दो निम्न संरचनाओं और चट्टानों से बना है। भूगर्भिक संरचना धरातलीय उच्चावच तथा जलप्रवाह के आधार पर विस्तृत अध्ययन क्षेत्र सवाई

MAP No. 2.1

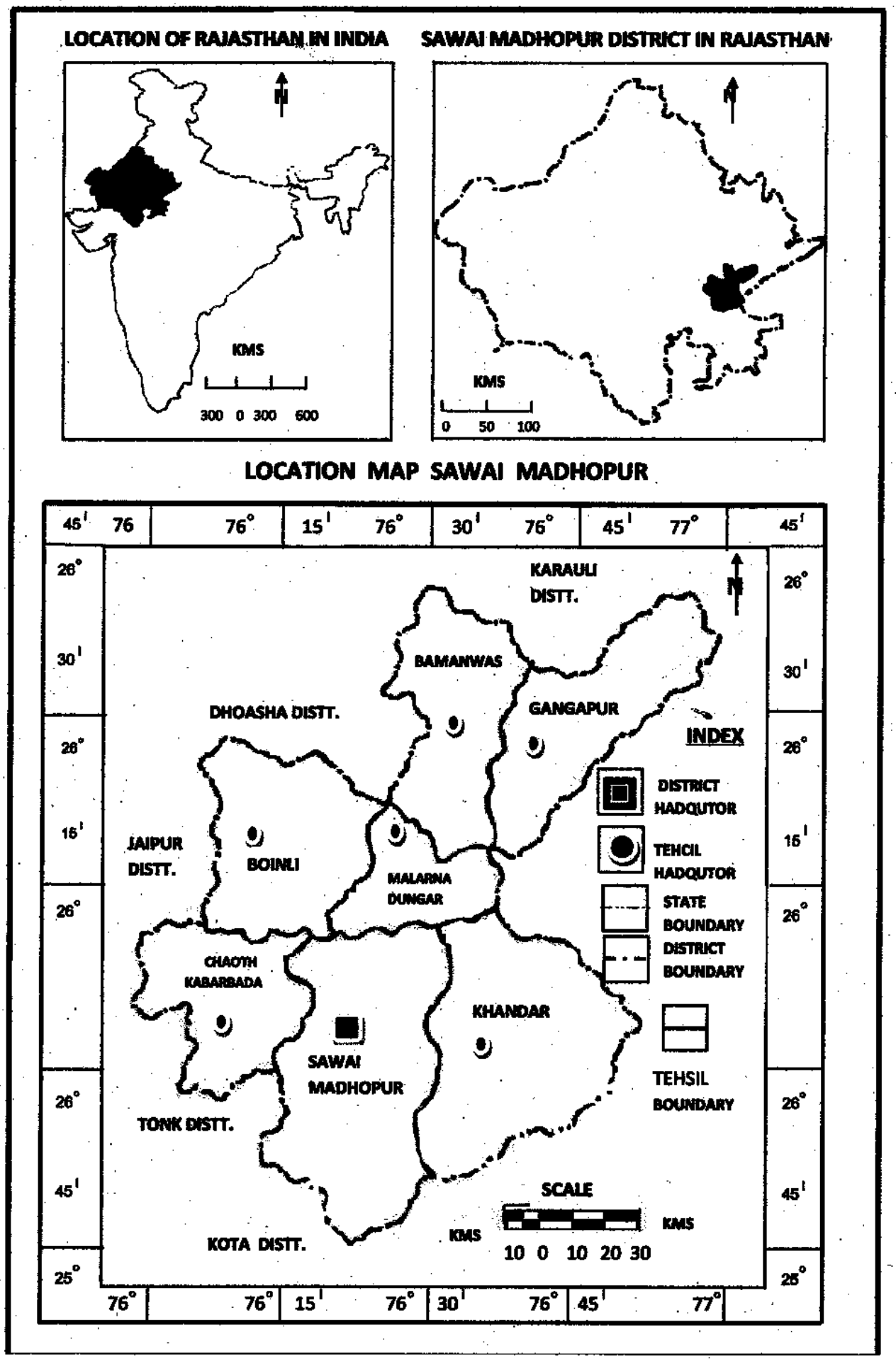

LOCATION OF RAJASTHAN IN INDIA
KMS
300 0 300 600
SAWAI MADHOPUR DISTRICT IN RAJASTHAN
KMS
0 50 100
LOCATION MAP SAWAI MADHOPUR
KARAULI DISTT.
BAMANWAS
GANGAPUR
DHOASHA DISTT.
INDEX
DISTRICT HADQUTOR
TEHCIL HADQUTOR
STATE BOUNDARY
DISTRICT BOUNDARY
TEHSIL BOUNDARY
JAIPUR DISTT.
BOINLI
MALARNA DUNGAR
CHAOTH KABARBADA
SAWAI MADHOPUR
KHANDAR
TONK DISTT.
KOTA DISTT.
SCALE
KMS
10 0 10 20 30
KMS

माधोपुर जिले को मोठे तौर पर पाँच मध्यम आकार के भौतिक विभागों में बांटे सकते है।[2]

1 खादर क्षेत्र (a) बनास नदी का खादर क्षेत्र (b) मोरेल नदी का खादर क्षेत्र

2 बांगर क्षेत्र (c) बनास नदी का बागर क्षेत्र (d) मोरेल नदी का बांगर क्षेत्र

(e) चम्बल विहड क्षेत्र

3 विंध्यन उच्च भूमि

4 अरावली उच्च भूमि

5 चम्बल–बनास दोआब क्षेत्र

1 खादर क्षेत्र

जहाँ नदियों का पानी प्रति वर्ष पहुँचता हैं वह क्षेत्र खादर कहलाता है। अर्थात उसे नवीन जलोढ़ भूमि कहा जाता हैं।

(a) बनास का खादर क्षेत्र

इस क्षेत्र के अन्तर्गत चौथ का बारवाड़ा मलारना डूँगर तथा खण्डार तहसील के उत्तरी भाग आते है। बनास नदी द्वारा बाढ़ के क्षेत्र में विछाए जाने वाले नवीन जलोढ़ को बनास नदी का खादर क्षेत्र कहते है। बनास के साथ–साथ अन्य छोटी छोटी धारा एवं बडे–छोटे नदी नाले प्रवाहित होते है। वर्षा के मौसम में ये धारायें उपजाऊ मिट्टी अपने साथ लेकर आती है। जिले के कुल खादर क्षेत्र का लगभग 60 प्रतिशत बनास के खादर क्षेत्र के रूप में है जो वर्तमान में बढ़ पैमान पर कृषि कार्यों में उपयोगी सिद्ध हो रही है, यहाँ सरसों, गेंहू, जौ व सब्जियों की पैदावार हो रही हैं।[3]

(b) मोरेल नदी का खादर क्षेत्र

यह क्षेत्र बौंली, मलारना डूँगर व बामनवास तहसीलों में स्थित है तथा बनास नदी के खादर क्षेत्र से मिला हुआ हैं। जिले के कुल खादर का लगभग 25 प्रतिशत क्षेत्र मोरेल नदी का खादर क्षेत्र हैं। इस खादर क्षेत्र का अधिक भाग मलारना डूँगर तहसील के उत्तर में है।

2. बांगर क्षेत्र

जहाँ प्रति वर्ष नदियों का पानी नहीं पहुँच पाता है, अर्थात पुरातन जलोढ़ मिट्टी बांगर कहलाती हैं।

MAP No. 2.2

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

PHYSICAL DIVISONS

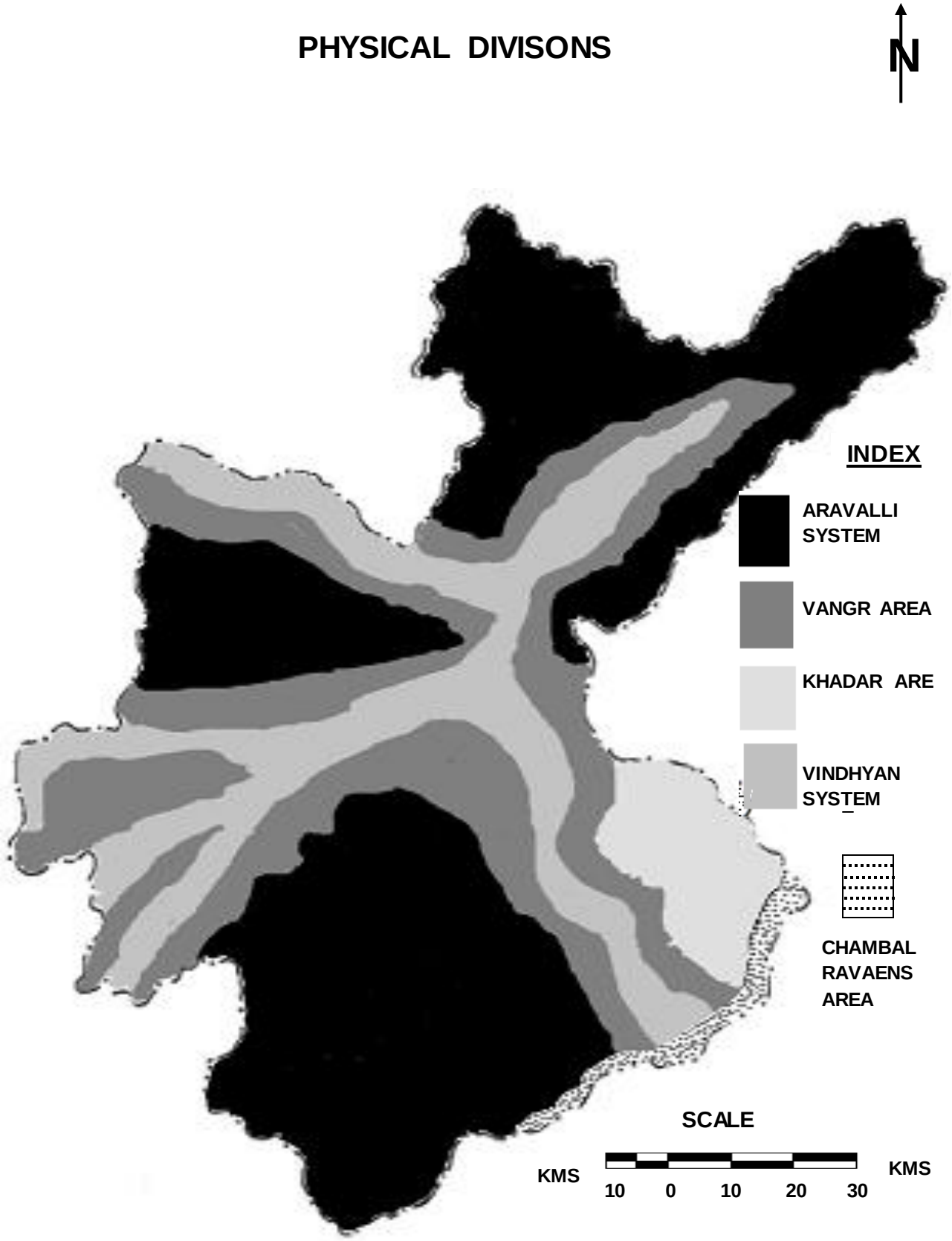

(a) बनास नदी का बांगर क्षेत्र : जिले में सर्वाधिक क्षेत्र पर फैला हुआ है जो खण्डार, मलारना डूँगर व चौथ का बरवाड़ा तहसीलों में विस्तृत हैं।

(b) मोरेल नदी का बांगर क्षेत्र : बौंली व मलारना डूंगर तहसीलों में अधिक फैला हुआ है। यह अनुपजाऊ क्षेत्र है।

(c) चम्बल विहड (रेवाइन्स) क्षेत्र : जिले में यह क्षेत्र खण्डार तहसील के उत्तर–पूर्वी भाग में विस्तृत है जो आज भी ड़ाकूओं का आश्रय स्थल बना हुआ हैं। यहाँ बबूल, कीकर, धोकड़ा व घास जैसी वनस्पति बड़ी मात्रा में पाई जाती हैं।

3. विध्यंन उच्च क्षेत्र

यह क्षेत्र जिले के दक्षिण व दक्षिणी–पूर्वी भाग में स्थित हैं। यह विध्यंन श्रंखला का हिस्सा है तथा अपवाह तंत्र द्वारा अपरर्दित क्षेत्र है। इस क्षेत्र का ढ़ाल दक्षिण से उत्तर–पूर्व की ओर है।

यह क्षेत्र चट्टानी युक्त वनाच्छादीत क्षेत्र है जो कृषि के लिए अनुपयुक्त हैं। स्थानिय भाषा में इसे ड़ांग क्षेत्र कहते है। इस क्षेत्र की प्रमुख पर्वत श्रेणियों में खण्डार पहाड़ी जो एक श्रंखला के रूप में बालेर से करौली तक विस्तृत हैं।

4. अरावली पहाड़ी क्षेत्र

जिले मे अरावली की पहाड़ियाँ दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पश्चिम में कहीं श्रंखला बद्ध है तो कहीं छीतराय हुए है। सवाई माधोपुर तहसील में यह श्रंखलाबद्ध रूप में फैली हुई है तथा सघन वनों से आच्छादीत है। रणथम्भौर टाईगर प्रोजेक्ट इन्हीं पहाड़ियों की बादियों में स्थित है। जो 392 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है। यहाँ कुशाल दर्रा जो जिला मुख्यालय तथा मध्यप्रदेश को सड़क मार्ग से जोड़ता है। जिले का 30 प्रतिशत वन क्षेत्र इसी क्षेत्र में फैला हुआ है। खनिज संसाधनों की द्रष्टि से भी यह क्षेत्र महत्त्वपूर्ण हैं। चौथ का बरवाड़ा, बौंली मलारना डूंगर बामनवास व खण्डार तहसीलों में दूर–दूर तक छोटी–छोटी पहाड़ियाँ फैली हुई है। जिले की सबसे ऊँची चौटी बामनवास तहसील में स्थित है। जिसकी ऊँचाई 527 मीटर है इसे बामनवास चौटी कहा जाता है।

5. चम्बल–बनास दोआब क्षेत्र

यह क्षेत्र खण्डार तहसील में फैला हुआ है जहाँ बनास नदी चम्बल में आकर मिलती हैं इसके मध्य का क्षेत्र दोआब कहलाता है। खण्डार तहसील इस दोआब पर बसा हुआ है। वर्तमान में चम्बल–बनास दोआब में बजरी खनन कार्य तिव्र गति से हो रहा हैं। रामेश्वर का प्राचीन मन्दिर इस दोआब क्षेत्र में स्थित है

MAP No. 2.3

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

RELIEF

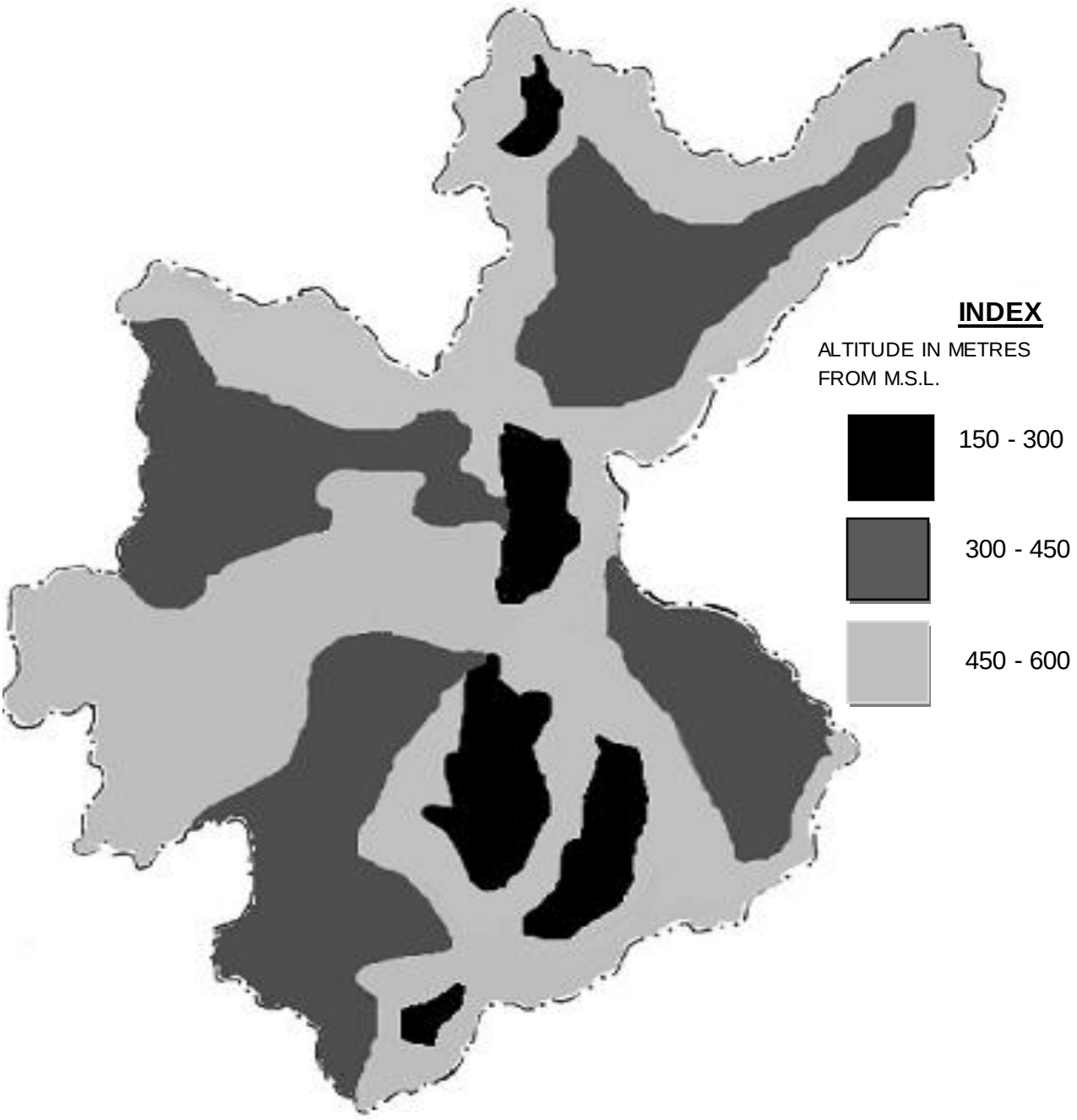

उच्चावच

उच्चावच की दृष्टि से सवाई माधोपुर जिले का अधिकांश भाग मैदानी है। इस क्षेत्र की समुद्र तल से औसत ऊँचाई 400 मीटर से 600 मीटर के मध्य हैं। जिले के पश्चिमी भाग में अरावली पर्वत श्रेणियाँ तथा दक्षिण–पूर्वी भाग में विंध्यन श्रेणी स्थित है। चम्बल बेसिन और बनास बेसिन आदि है। बनास बेसिन का निर्माण उसकी सहायक नदियाँ मोरेल कालिसिल व गुदला आदि के निक्षेप से हुआ हैं। इस बेसिन का विस्तार जिले में बौंली, मलारना डूँगर, चौथ का बरवाड़ा, सवाई माधोपुर व खण्डार तहसील में हैं। यह उपजाऊ मैदान है। बनास बेसिन की उत्तरी सीमा अरावली पर्वत माला द्वारा तथा दक्षिण सीमा चम्बल वेसिन द्वारा निर्धारित की गई है। इस बेसिन का ढाल उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व की ओर इस के मध्य में स्थित कुछ टिले नुमा भागों को पीड़मोंट मैदान कहते है। इस क्षेत्र में नीस सीस्ट चट्टानें मिलती हैं।

अरावली पहाड़ियों का सर्वाधिक विस्तार सवाई माधोपुर तहसील क्षेत्र में पाया जाता है। पहाड़ियों की औसत ऊँचाई लगभग 500 मीटर से अधिक है। बनास नदी इन्हीं पहाड़ियों में विर्सप के रूप में प्रवाहित होती है। खण्डार तहसील में खण्डार पहाड़ी जो 505 मीटर व गंगापुर में सपोटरा पहाड़ी 475 मीटर ऊँची है। दक्षिण में भैरों व ऊँट गिरी की चौटियाँ स्थित है। अरावली पर्वत श्रंखला का केन्द्रीय भाग सवाई माधोपुर व बूँदी जिले में हैं। जिले के पूर्वी भाग पर्वत श्रंखला के रूप में पाये जाते है जबकि पश्चिम भाग में पहाड़ियाँ छितराय रूप में पाई जाती है।

अपवाह तंत्र

अपवाह तंत्र जल प्रवाह प्रणाली का प्रदर्शन करता है। अपवाह तंत्र का निर्माण धरातलीय संरचना एवं प्रकृति के सहयोग से ढ़ाल के अनुरूप होता है। सवाई माधोपुर जिले में अपवाह तंत्र की दिशा उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व की ओर है। चम्बल व बनास नदियों को छोड़ कर जिले में बहने वाली सभी नदियाँ मौसमी प्रकृति की हैं। जो वर्षा ऋतु में ही प्रवाहित होती है। अपवाह प्रणाली किसी प्रदेश की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक , धार्मिक , भौगोलिक एवं कृषि विकास स्तर की पृष्ट भूमि प्रस्तुत करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। केवल चम्बल व बनास सदावहानी नदियाँ हैं। उत्तर–पश्चिम से पूर्व की ओर ढ़ाल सामान्य तथा दक्षिण–पूर्व की ओर तीव्र ढ़ाल है। जिले में गुदला मोरेल कालिसील सीप ढ़ील आदि मौसमी नदियाँ है। (मानचित्र संख्या 2.4)

चम्बल नदी

चम्बल नदी का प्राचीन नाम चर्मण्यवती हैं। इसको कामधेनु भी कहा जाता है। यह नदी मध्यप्रदेश में महू जिले के मेनपुरा के पास जनापाव पहाड़ी (616 मीटर) के

FLATE No. 1

I

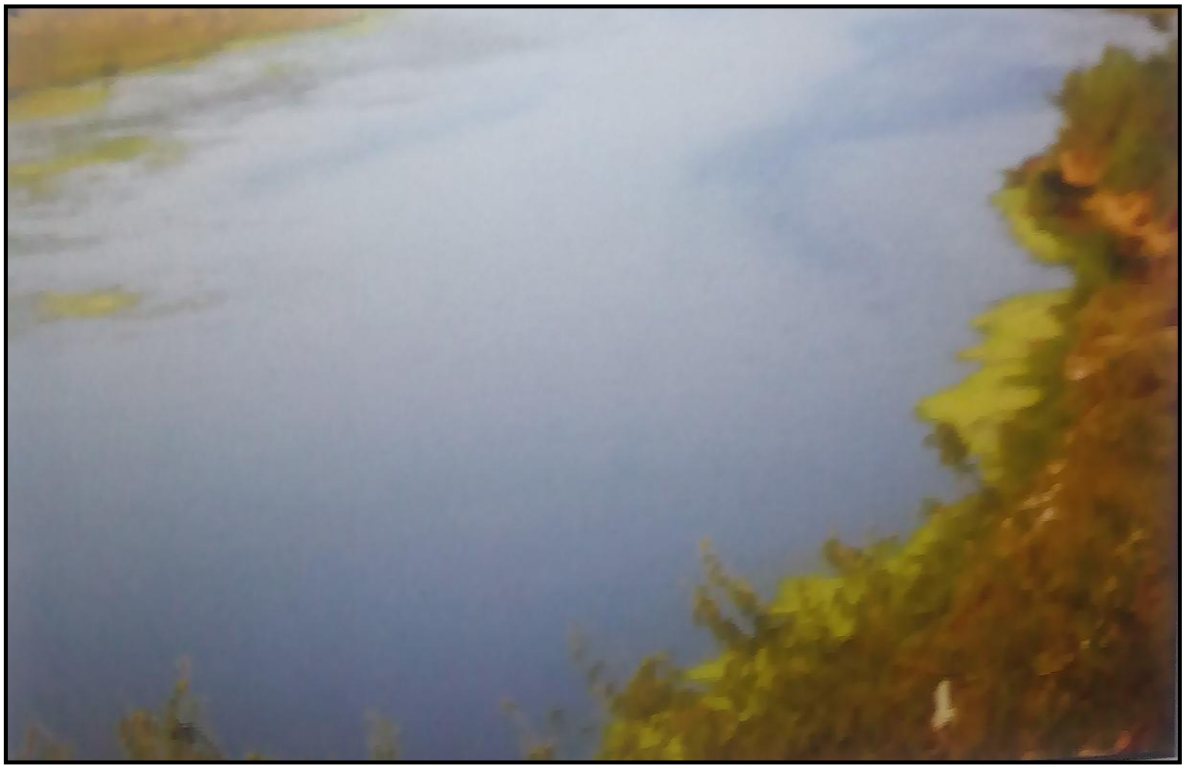

चम्बल नदी

II

बनास नदी

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

DRAINAGE

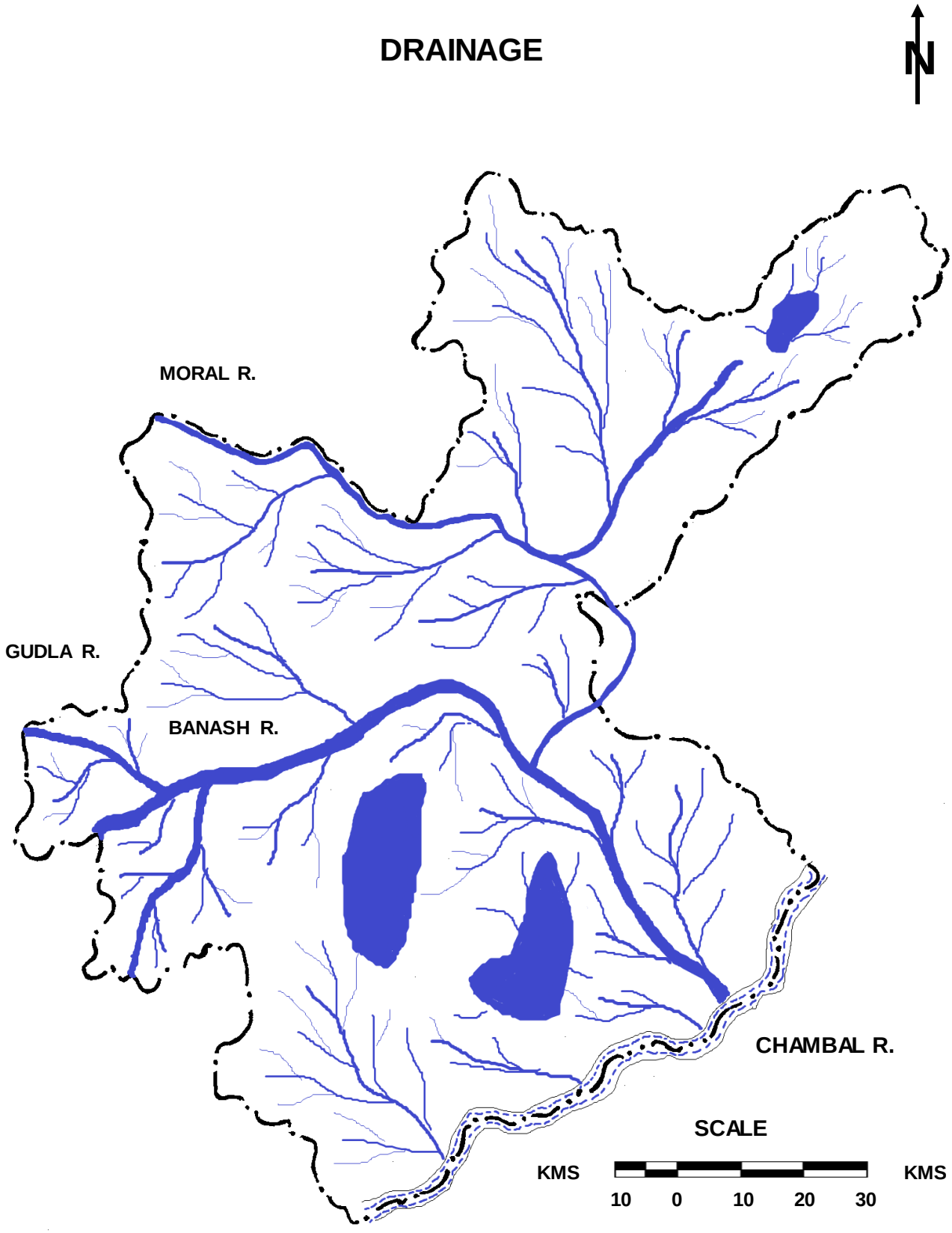

विध्यन कगारों के उत्तरी पार्शव से निकलती है। यह उत्तर दिशा में 257 किलोमीटर बहने के पश्चात चौरासीगढ़ के ऐतिहासीक किले के समीप एक गार्ज को पार कर राजस्थान में प्रवेश करती है। इस स्थान पर नदी का तल 300 मीटर चौड़ा है। आगे भैंसरोडगढ़ के समीप इसमे बामनी नदी आ कर मिलती है। यहाँ से 5 किलोमीटर आगे चुलिया जल प्रपात है। आगे हाड़ौती प्रदेश में प्रवाहित होकर जिले में चम्बल नदी सवाई माधोपुर तहसील के दक्षिण में फलौदी नामक गांव में प्रवेश करती हुई खण्डार तहसील के बड़वास नामक गांव तक प्रवाहित होते हुए आगे बढ़ जाती है।[4] जिले की दक्षिणी सीमा निर्धारित करती हैं। चम्बल नदी की सबसे बड़ी सहायक नदी बनास हैं जो अपनी उपसहायक नदियों द्वारा जल उपलब्ध करवाती है। जिले में इस नदी का समस्त प्रवाह क्षेत्र विहड़ों से युक्त हैं। इसकी कुल लम्बाई 966 किलोमीटर है जो राजस्थान में 135 किलोमीटर बहती हैं। जिले में मात्र 25–30 किलोमीटर प्रवाहित होती हुई करौली व धौलपुर जिलों में बहती हुई उत्तर प्रदेश में मुरादगंज के समीप यमुना नदी में मिल जाती हैं।[5]

बनास नदी

यह नदी चम्बल की प्रमुख सहायक नदी है जो राजसमंद जिले की खामनौर पहाड़ियों से निकल कर राजसमंद चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, अजमेर व टोंक जिलों में प्रवाहित होकर के जिले में चौथ का बरवाड़ा तहसील के पश्चिमी भाग में प्रवेश करती हुई खण्डार तहसील के बड़वास नामक गांव में रामेश्वर नामक स्थान पर चम्बल नदी में मिल जाती है यहीं पर मध्यप्रदेश के श्योपुर जिले के मानपुर नामक गांव से शीप नदी निकलकर चम्बल व बनास नदियों में मिलकर त्रिवेणी संगम बनाती है।[6] राज्य के तीन त्रिवेणी संगमों में से एक सवाई माधोपुर जिले में है।

इसे वन की आशा के नाम से से भी जाना जाता है। यह राजस्थान में पूर्ण प्रवाहित होने वाली सबसे लम्बी नदी है जो 480 किलोमीटर बहती हैं। जिले में चौथ का बरवाड़ा तथा मलारना डूँगर की सीमा बनाती हुई सवाई माधोपुर और खण्डार तहसील के 120 किलोमीटर क्षेत्र में प्रवाहित होती है।[7]

मोरेल नदी

इस नदी का उद्‌गम स्थल जयपुर जिला है यह नदी जिले की बौंली व बामनवास तहसील क्षेत्र में प्रवाहित होकर खण्डार तहसील के भूरी पहाड़ी नामक गांव के समीप बनास नदी में मिल जाती है।[8] यह बनास नदी की सहायक नदी है। मलारना डूंगर बनास व मोरेल नदी के दोआब क्षेत्र पर अवस्थित है।

कालीसिल नदी

यह मोरेल नदी की सहायक नदी है जो सवाई माधोपुर जिले के राजपुरा गांव की पहाड़ियों से निकलती हैं, 48 किलोमीटर दक्षिण–पूर्व दिशा में बहकर मलारना डूंगर के समीप मोरेल नदी में मिल जाती हैं।[9]

जलवायु

किसी भू–भाग पर लम्बी अवधि के दौहरान विभिन्न समय में घटीत होने वाली विविध मौसमी घटनाओं की औसत अवस्था ही उस स्थान विशेष की जलवायु कहलाती है। जलवायु के अन्तर्गत वर्षा तापमान आर्द्रता वायुभार एवं हवाएं इत्यादि तत्त्वों की दीर्धकालीन अवधि का अध्ययन किया जाता हैं।

किसी क्षेत्र के विकास पर उस क्षेत्र की जलवायु का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। कृषि विकास स्तर का अधिक केन्द्रीकरण जलवायु द्वारा निर्धारित होता हैं। ठण्ड़े मरूस्थलों में अतिशीतलता और लम्बी शीत ऋतु तथा छोटी ग्रीष्म ऋतु सभी पौधें और मानव के लिए शत्रु है। टुण्ड्रा प्रदेश में कृषि के लिए लगभग दो महा वाली अल्प अवधि तथा ग्रीष्म ऋतु में हिम के पिघलने से बने दलदलों के कारण कृषि असम्भव है।[10] उच्च तापमान व वर्षा कृषि विकास स्तर में वृद्धि करता है, क्योंकि पौधों में तीव्र गति से वृद्धि होती है। इसे वर्ष भर में कई फसलें पैदा की जा सकती हैं लेकिन उच्च तापमान का संयोग अल्प और अनियमित वर्षा से हो जाता है तो कृषि विकास स्तर पर उसका विपरीत प्रभाव पड़ता हैं। यहीं कारण है कि उच्च तापमान के बावजुद भी वर्षा की न्यूनता के कारण विश्व के ऊष्ण मरूस्थलों में कृषि विकास शून्य है।[11] इसलिय भारतीय कृषि मानसून का जुंआ कहलाती हैं। इस प्रकार कृषि विकास के स्तर एवं पर्यावरण विकास के स्तर को समझने की दृष्टि से जलवायु का अध्ययन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सवाई माधोपुर जिले में भी कृषि विकास स्तर पर जलवायु का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

सवाई माधोपुर जिले की जलवायु उपजाऊ हैं।[12] थार्नवेट के जलवायु विभाजन के अनुसार सवाई माधोपुर जिले को अर्द्धशुष्क जलवायु में सामिल किया है।[13] कोपेन महोदय ने CWG जलवायु प्रदेश के अन्तर्गत माना है, यहाँ वर्षा केवल वर्षा ऋतु में ही होती है जब कि शीत ऋतु में कुछ मात्रा में वर्षा होती है।[14] जिले की जलवायु अर्द्धशुष्क है। सवाई माधोपुर जिले में भी राज्य के अन्य भागों की तरह वर्षा को तीन ऋतुओं में विभाजित किया गया हैं–

1 ग्रीष्म ऋतु (मार्च से मध्य जून)

MAP No. 2.5

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

DISTRIBUTION OF ANNUAL RAINFALL

2012-13

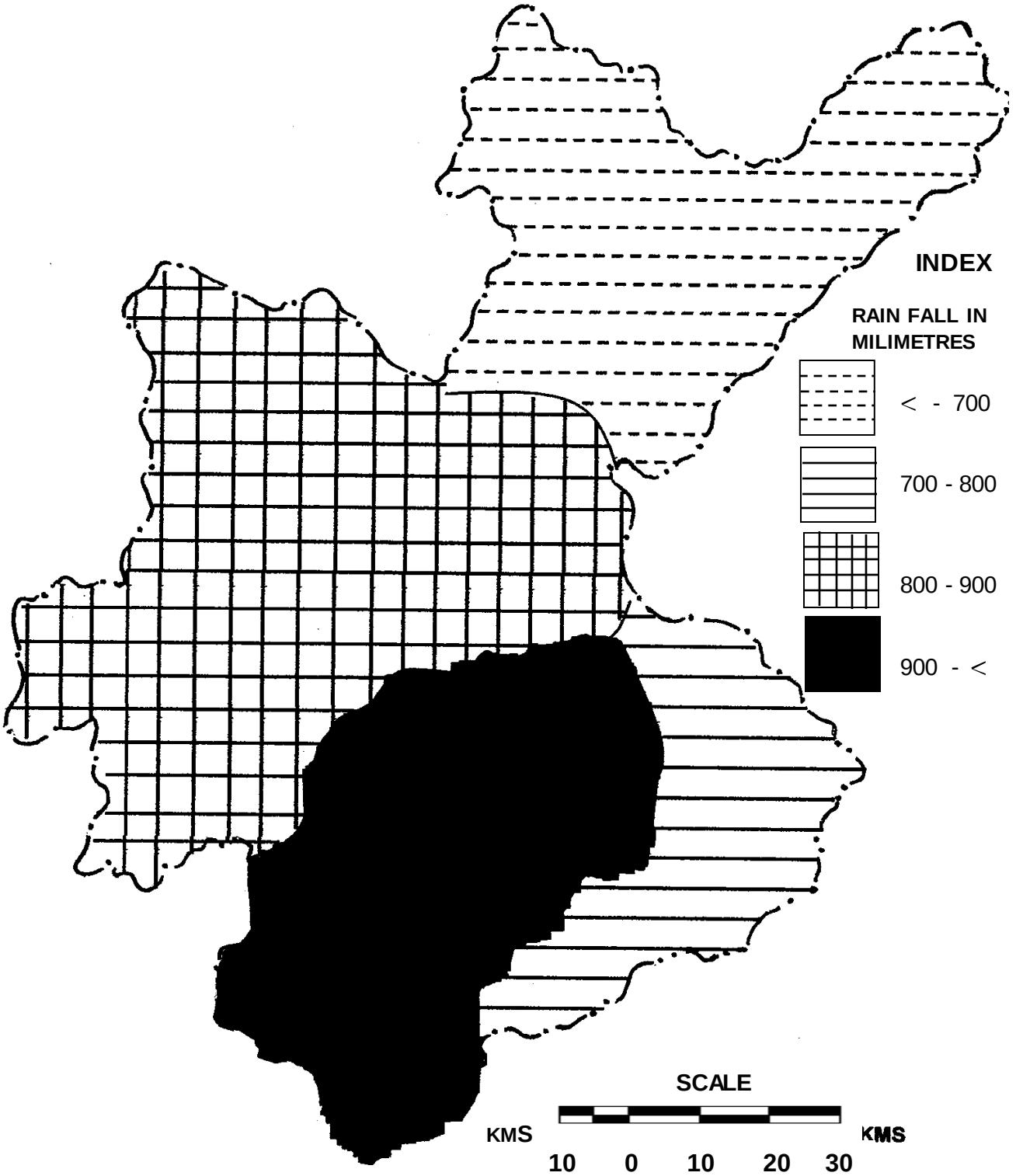

2 वर्षा ऋतु (मध्य जून से सितम्बर)

3 शीत ऋतु (अक्टूबर से फरवरी)

ग्रीष्म ऋतु

ग्रीष्म ऋतु मार्च से प्रारम्भ होकर मध्य जून तक लगभग 3–4 महिन रहती हैं। जैसे–जैसे सूर्य उत्तरायण होने लगता है, ग्रीष्म ऋतु प्रारम्भ होने लगती है और दिन व रात के तापमान में वृद्धि होती हैं। इस कारण मार्च व अप्रेल महिनों में रबी की फसलें विशेषकर गेंहू व चना तीव्रता से पकते हैं। मई में सामान्य रूप से वर्ष का सबसे गर्म महिना होता हैं। इस समय सवाई माधोपुर जिले के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में 32 डिग्री सैल्सियस से भी कम तपमान रहता है जबकि पूर्वी क्षेत्र में 36 डिग्री सैल्सियस से अधिक रहता है।

जिले में जून का अधिकतम तापमान 39.47 डिग्री सैल्सियस तथा न्यूनतम औसत तापमान 28.24 डिग्री सैल्सियस रहता है, कभी–कभी तापमान 46.53 डिग्री सैल्सिय पहुँच जाता है।[15] इस ऋतु की प्रमुख विशेषता तेज धूप, बादल रहित मौसम, प्रचण्ड गर्मी, गर्म हवाओं का चलना आदि। इस ऋतु में भंयकर 'लू' चलती है। तीव्र गर्मी के कारण स्थानीय भंवर बन जाते हैं जो धूल भरी आँधियों के साथ मिलकर भंयकर रूप धारण कर लेते हैं। जिले में औसतन 6 दिन धूलभरी आँधियाँ आती हैं।

वर्षा ऋतु

जिले में मध्य जून से सितम्बर माह तक वर्षा ऋतु होती है। वर्षा की मात्रा दक्षिण–पूर्व से उत्तर–पश्चिम की ओर कम होती जाती है। (मानचित्र संख्या 2.5) जुलाई के आस पास मानसून के आगमन से तापक्रम तेजी से नीचे गिरता है तथा सापेक्षिक आर्द्रता में वृद्धि होती है। जुलाई में अधिकतम औसत तापमान 33 डिग्री सैल्सियस से 38.60 डिग्री सैल्सियस तक रहता हैं। जिले में दक्षिण–पूर्वी भाग में 850 मिली मीटर तथा उत्तर–पश्चिमी भाग में 750 मिलीमीटर से भी कम वर्षा होती है। (मानचित्र 2.5)

जिले में अधिकांश वर्षा जुलाई और अगस्त के महिनों में ही होती है। सितम्बर के अन्त में आकाश स्वच्छ होने लगता है, जिले की कुल वर्षा का लगभग 90 से 95 प्रतिशत मानसून काल में प्राप्त होती हैं। जिले की औसत वार्षिक वर्षा 650 मिलीमीटर है। यहाँ लगातार वर्षा नहीं होती है, बीच–बीच में दो, तीन दिन से एक सप्ताह तक वर्षा का विराम होना आम बात है। जिले में होने वाली वर्षा की निम्न विशेषता है–

1 वर्षा अनियमित व अनिश्चत होती है, यह कभी समय से पूर्व तो कभी समय के बाद होती है।

2 वर्षा के वितरण में क्षेत्रीय असमानता है।

3 वर्षा की मात्रा में औसत से धनात्मक व ऋणात्मक विचलन होता है।

तहसील वार वार्षिक वर्षा का वितरण

सन् 2004 से 2013

सारणी संख्या 2.1

क्र सं	तहसील	वर्षा का वितरण मि. मी. में									
		2004	2005	2006	2007	2008	2009	2010	2011	2012	2013
1	गंगापुर	699	717	472	475	80	663	813	794	942	611
2	बामनवास	731	688	368	383	854	502	792	890	916	424
3	मलारना डूँगर	621	759	343	392	642	304	893	808	707	606
4	बौंली	393	445	312	284	495	366	612	664	645	512
5	चौथका बरवाड़ा	644	987	600	743	590	437	903	846	860	673
6	सवाई माधोपुर	985	1021	861	1030	939	426	1136	946	826	859
7	खण्डार	589	1082	547	507	801	690	795	759	822	528
	जिले की औसत वर्षा	665.9	814.10	500.42	544.86	732.42	484	849.14	815.58	816.85	899.42

स्त्रोतः जलदाय विभाग, 2004 से 2013 सवाई माधोपुर ।

शीत ऋतु

जिले में शीत ऋतु की अवधि अक्टूबर से प्रारम्भ होकर फरवरी तक शीत ऋतु होती है। इस ऋतु में मौसम सुखद व आन्दमय रहता है, आकाश स्वच्छ और हवा की गति मन्द होती है। नवम्बर में तापमान गिरने लगता है व शीत ऋतु प्रारम्भ होती है। दिसम्बर में तापमान तेजी से निचे गिरने लगता है और जनवरी में यह न्यूतम 8.2 डिग्री व अधिकतम 15 डिग्री सैल्सियस तक रहता है। शीत ऋतु में वर्षा पश्चिम से आने वाली चक्रवातीय हवाओं से होती है। जिसे क्षेत्रीय भाषा में 'मावट' कहते है। यह वर्षा कुल वर्षा की 10 प्रतिशत से भी कम होती है। यह रबी की फसलों के लिए बहुत लाभदायक होती है। यह 'गोल्डन फाइबर' साबीत होती है।

जिले में तापमान, आर्द्रता व वर्षा का वितरण सन्– 2013

सारणी संख्या 2.2

क्रम संख्या	महिने	वर्षा से. मीटर में	आर्द्रता प्रतिशत में	औसत तापमान डिग्री सेन्टीग्रेड
1	जनवरी	0.00	53.12	17.57
2	फरवरी	0.00	45.42	19.57
3	मार्च	0.00	37.20	25.91
4	अप्रैल	0.79	30.10	34.96
5	मई	0.93	29.16	37.60
6	जून	14.11	40.21	39.47
7	जुलाई	19.17	70.0	39.40
8	अगस्त	33.56	80.12	37.50
9	सितम्बर	9.53	69.85	30.01
10	अक्टूबर	0.18	55.61	30.70
11	नबम्बर	0.22	53.24	27.80
12	दिसम्बर	0.00	56.21	15.51

स्त्रोतः जलदाय विभाग, 2013 सवाई माधोपुर ।

आरेख संख्या 2.7

सवाई माधोपुर जिला

तापमान व सापेक्षिक आर्द्रता

2012–13

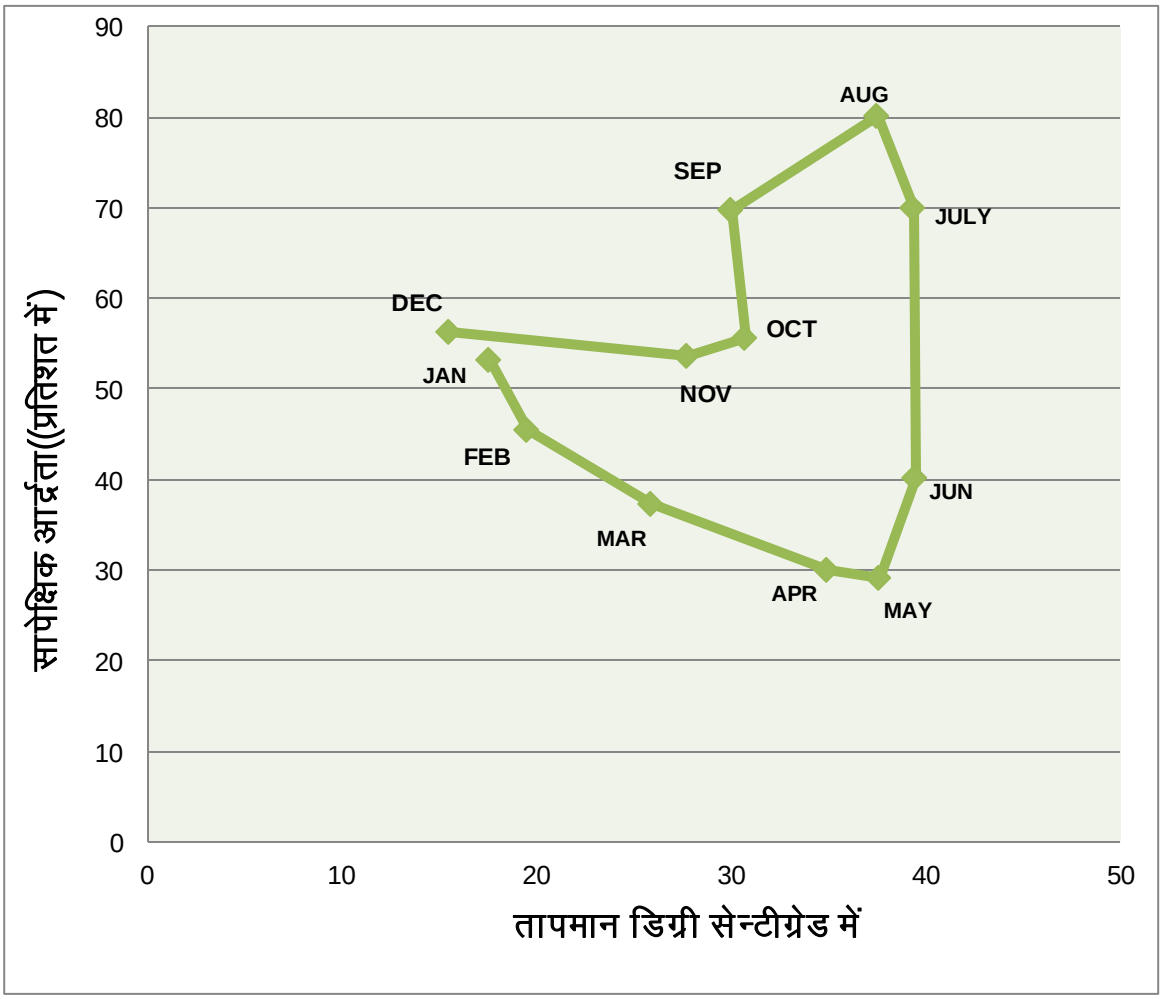

क्लाइमोग्राफ

तापमान

कृषि कार्यों के लिये तापमान एक अपरिहार्य तत्त्व है। पौधें सूर्य ताप के द्वारा प्रकाश संश्लेषण क्रिया करते हैं। इस क्रिया द्वारा पौधे अपना भोजन करते हैं। उचित तापमान के अभाव में पौधों का अंकुरण बढ़ना और पकना असंभव है। बीज के अंकुरण के लिए 18° सैल्सियस तापक्रम अनुकूल रहता है। गेंहू, जौ, व सरसों के लिये 7° ,मक्का के लिये 9° सैल्सियस, चावल के लिये 20° सैल्सियस और बाजरा के लिये 16° सैल्सियस तापमान अंकुरण के लिए उपयुक्त रहता है। अक्टूबर व नवम्बर का तापमान फसल को अंकुरित होने था दिसम्बर व जनवरी का तापमान पौधों की वृद्धि के लिए सहायक है। फरवरी व मार्च का बढ़ता हुआ तापमान पौधों के परिपक्व होने में मदद् करता है। कभी–कभी जनवरी की रातों का तापमान 2° सेल्सियस से निचे हो जाता है, जो कि दलहन व तिलहन की फसलों को नुकसान पहुँचाता है। सितम्बर, अक्टूबर और नवम्बर का सामान्य तापमान काम करने तथा रहन–सहन के लिए अच्छा होता है। फरवरी ,मार्च व अप्रैल का बढ़ता हुआ तापमान भी स्वस्थ्य व काम करने के लिए अच्छा रहता है। जिले में इन महिनों का औसत तापमान 20° से 30° सेल्सियस तक रहता है। महीने का औसत तापमान , आपेक्षिक आर्द्रता तथा जिले की वर्षा को सारणी संख्या 2.2 में दर्शाया गया है तथा तापमान व वर्षा को आरेख संख्या 2.1 में स्पष्ट किया गया है।

मिट्टियाँ

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान समय तक मिट्टी सबसे महत्त्वपूर्ण संसाधन माना गया है। क्योंकि मानव की तीनों मूलभूत आवश्यकताओं में सर्वप्रमुख भोजन सामग्री की पूर्ति प्रत्यक्षतः मिट्टी से ही प्राप्त होती है। मिट्टी का निर्माण जलवायु तथा चट्टानों के विखण्ड़न के फलस्वरूप होता है, जिसमें अनेक प्रकार के रासायनिक तत्त्व पाये जाते है। फलतः विभिन्न जलवायु में और विभिन्न चट्टानों से बनी मिट्टियों में न तो एकरूपता ही पायी जाती है और न सब की उर्वरा शक्ति एक सी होती है।

''मिट्टी भू–पृष्ट पर मिलने वाले असंगठीत पदार्थ की वह उपरी परत है जो मूल चट्टानों अथवा वनस्पति के योग से बनती है।''[16]

मिट्टी एक ऐसा संसाधन जो कृषि विकास स्तर का आधार होती है। भू पृष्ट की सबसे उपरी परत जो पौधों को उगने व बढ़ने के लिए जीवाश्म तथा खनिजांश प्रदान करती है मृदा कहलाती है।[17] अतः मिट्टी बनने की प्रक्रिया तथा उसके प्रकारों का अध्ययन भी भूगोलवेत्ताओं के लिए महत्त्वपूर्ण है। मिट्टी कई ठोस तरल तथा गैसीय पदार्थों का एक मिश्रण है। यह भू–पर्पटी के सबसे उपरी भाग में पायी जाती है। इसमें

जड़ व चेतन दोनों प्रकार के पदार्थ पाये जाते है। फसलों के लिए मिट्टी में पी. एच. की मात्रा 6.5 से 7.6 के मध्य होनी चाहिए।

सवाई माधोपुर जिले का उच्च मैदानी भाग पुरानी अरावली व विंध्यन चट्टानों के टूट–फूट से बना है। यह नदियों के साथ जलोढ़ निक्षेप खादर में दोमट और बांगर में मिश्रित दोमट रूप में पायी जाती है। जिले में लाल व पीली मिट्टी बहुतायत में पाई जाती है। ये मिट्टी कार्बोनेट व ह्यमश की कमी वाले क्षेत्रों में पायी जाती है। कहीं–कहीं छितराय रूप में काली से भूरी मिट्टी भी पायी है। कछारी मिट्टियों का मिश्रण नदी घाटियों में पाया जाता है। सामान्यतया इन मिट्टियों में फास्फेट, नत्रजन और जैविक पदार्थों की कमी मिलती है लेकिन इस मिट्टी में कैल्सियम, पोटश, मैग्निशियम, एल्युमिनियम तथा लोहा पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। यह मिट्टी व्यापारिक फसलों की अच्छी उपज के लिए उपयुक्त है।[18]

सतही रंग के आधार पर सवाई माधोपुर जिले की मिट्टियों को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैं–

1. लाल–पीली मिट्टी
2. कछारी दोमट मिट्टी
3. काली चीका युक्त मिट्टी
4. हलकी रेतीली मिट्टी
5. मिश्रित दोमट या कांप मिट्टी

लाल–पीली मिट्टी

लाल मिट्टी ग्रेनाइट और नीस की चट्टानों से निर्मित है। यह हलक गठन वाली होती है। इसमें साधारणतया फास्पेट, नत्रजन, कैल्सियम और कार्बनिक पदार्थों की कमी होती है। लाल रंग लोहा अंश की उपस्थिति को दर्शाता है। जिले में दक्षिण–पूर्व क्षेत्र में खण्डार तहसील के अधिकांश क्षेत्र में वे गंगापुर तहसील क्षेत्र में पायी जाती है। यह जिले के 15 प्रतिशत भाग पर पायी जाती है।

कछारी दोमट मिट्टी

नदियों के पाट अथवा किनारों पर कछारी मिट्टी का जमाव पाया जाता है। चम्बल व बनास नदी के किनारों पर कछारी मिट्टी का विस्तार है। ये जलोढ़ मिट्टियाँ कांप युक्त रेतीली दोमट मिट्टियाँ होती है। इस का रंग भूरा अथवा धुसर होता है। जिन कछारी मिट्टियों में रेत की मात्रा अधिक होती है, उसे रेतीली कछारी तथा जिसमें चीका की मात्रा अधिक होती है चीका युक्त कछारी मिट्टी कहते है। यह हल्की चूर्ण

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

SOIL

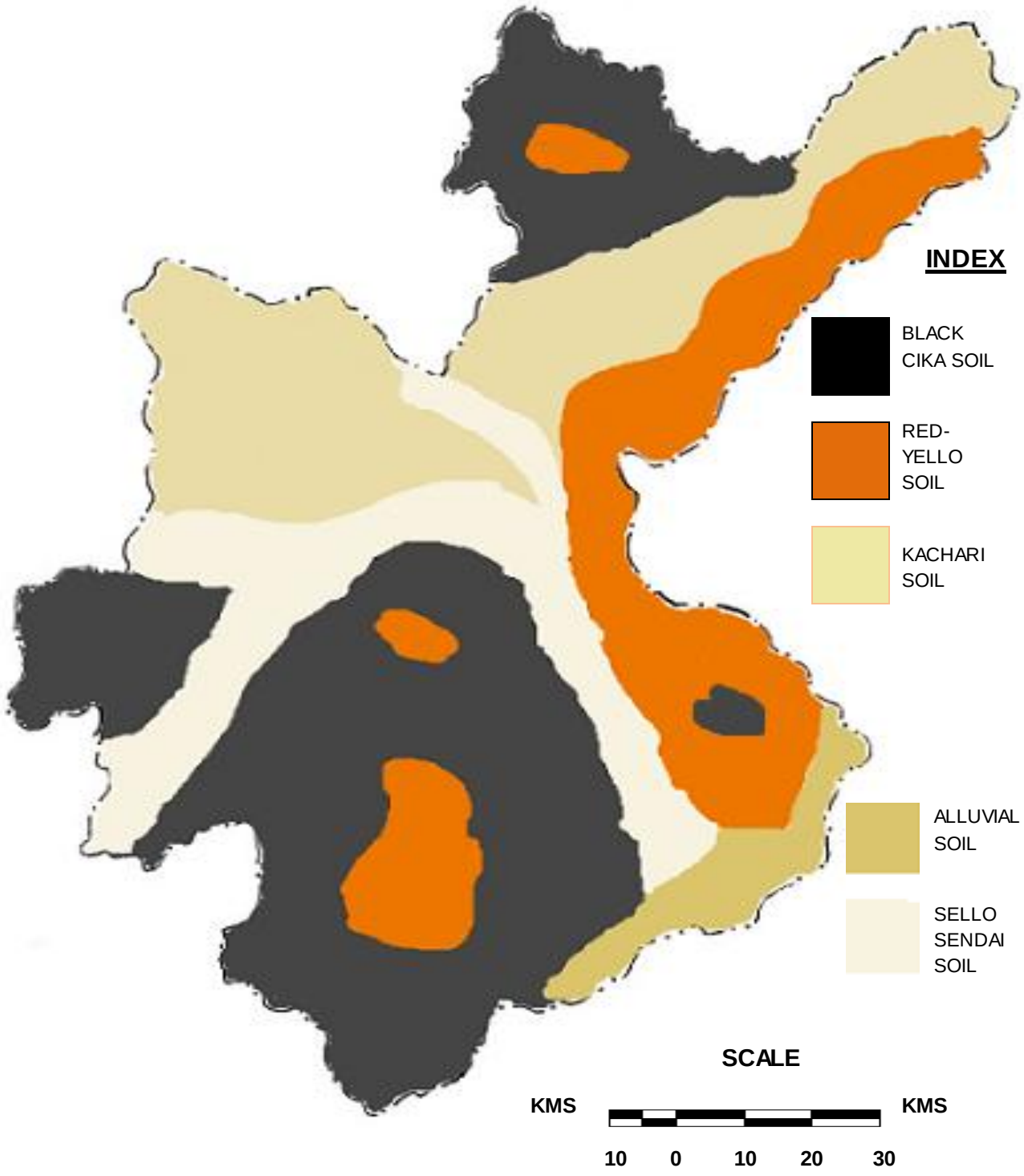

शील होती हैं। जिससे इस पर सामान्यतया शक भाजी खरबूजा और तरबूज पैदा होता है। इस मि ट्टी का अधिकांश क्षेत्र चम्बल के बीहडों में आता है। (मानचित्र 2.6) अतः भूमि समतल नहीं होने के कारण खेती पर कोई विशेष ध्यान नहीं दते है।

काली–चीकायुक्त मिट्टी

यह काले रंग की मिट्टी है जिसका निर्माण बेसाल्ट, धारवाड़, शिष्ट, ग्रेनाइट, नीस आदि चट्टानों की टुट–फुट से हुआ है। इस की गहराई 50 से 100 सेन्टीमीटर तक है। यह अधिक उपजाऊ है तथा इसका रंग काला व कणों की बनावट घनी है। यहीं कारण है कि इसमें नमी धारण रखने की क्षमता अधिक होती है। इस मिट्टी में मुख्यतः जल युक्त एल्युमिनियम सिलिकट पाये जाते है।

यह जिले में दक्षिण–पश्चिमी व कुछ उत्तरी क्षेत्र में बामनवास तहसील में पाई जाती है। इस मिट्टी में राई व सरसों की अच्छी पैदा होती है। काली चीका युक्त मिट्टी जिले के 60 प्रतिशत से अधिक भाग में फैली हुई है। (मानचित्र 2.6) ।

हल्की रेतीली मिट्टी

इस मिट्टी में रेत व वालु के कण बड़े–बड़े होते है तथा यह हल्के भूरे रंग की होती हैं। इसके कणों में चिकनाहट नहीं होती है, इस कारण इसमें पानी धारण करने की क्षमता कम होती है। इसकी जुताई व गुड़ाई सरलता से की जा सकती है। वर्षा होने पर अच्छी फसलें पैदा की जा सकती है। हल्की रेतीली मिट्टी में नत्रजन की कमी होती है।

यह मिट्टी जिले के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र व उत्तर में गंगापुर व बामनवास तहसील क्षेत्र में पायी जाती है। जिले के लगभग 21 प्रतिशत भाग में फैली हुई है। (मानचित्र 2.6)

मिश्रित कांपीय या दोमट मिट्टी

ये मिट्टियाँ नदियों द्वारा निर्मित हैं। ये हल्के भूरे रंग की होती हैं। इन मिट्टियों की गहराई 3 मीटर से अधिक है, इनमें नत्रजन फास्फोरस वनस्पति अंश की कमी है, परन्तु पोटाश और चूना पर्याप्त मात्रा में पाया जात है।

जिले का ढ़ाल उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व की और होने के कारण काली, कच्छारी और रेतीली मिट्टियों का मिश्रण नदी घाटियों में पाया जाता है। जिले में इस मिट्टी का विस्तार दक्षिण–पूर्व भाग में पाया जाता है। (मानचित्र 2.6)

जनसंख्या वृद्धि

प्राकृतिक सम्पदा समुचित विकास एवं उपयोग करने के लिए किसी भी देश में विशिष्ट सीमा तक जनसंख्या का होना अवश्यक है, लेकिन इसके उपरान्त व्यक्तियों की संख्यों की अपेक्षा उनकी गुणवत्ता देश को समृद्ध बनाने में अधिक योगदान देती है। गुणवत्ता से अभिप्राय उनके समुन्नत सामाजिक एवं राजनीतिक संगठन उनकी सांस्कृतिक मान्यताऐं उनकी कुशल अर्थव्यवस्था उच्च कृषि विकास स्तर तथा विज्ञान और तकनीकी विकास में उनका ऊँचा स्तर होना है।

जनसंख्या भूगोल में जनसंख्या वृद्धि शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थों में किया जाता है। समय की विशिष्ट अवधि में किसी क्षेत्र में रहने वाली जनसंख्या की संख्या में परिवर्तन की जनसंख्या वृद्धि या परिवर्तन कहते है। चाहे वह परिवर्तन ऋणात्मक या धनात्मक हो ।[19]

समय के साथ किसी भी देश या प्रदेश की जनसंख्या घटती या बढ़ती है। जन्म और मृत्यु संख्या में अन्तर होने से जनसंख्या की संवृद्धि होती है। प्रति हजार व्यक्तियों पर होने वाले जन्म व मृत्यु को जन्म दर और मृत्यु दर कहते है। जब मृत्यु दर जन्म दर से कम होती है, तो कुल जनसंख्या में वृद्धि होती है जिसे धनात्मक प्राकृतिक वृद्धि कहते है।

जन्म एवं मृत्यु के सम्बन्धों को निम्न प्रकार समझा जा सकता है।[20]

अ	**1**		
	उच्च जन्म व उच्च मृत्यु दर	जनसंख्या में उतार	मिश्र आय कृषि
	2	चढ़ाव	व्यवस्था व धीमी वृद्धि
	उच्च जन्म दर व निम्न मुत्यु दर	तेज वृद्धि	कृषि व्यवस्था में कुछ
	3		परिवर्तन प्रारम्भ
	निम्न जन्म व मृत्यु दर	स्थिर जनसंख्या	आशिंक औद्योगिक व
ब	**1**		नगरीकरण
	निम्न जन्म व मृत्यु दर	जनसंख्या का हास्य	अविकसीत आदिम
			अर्थव्यवस्था

सारणी संख्या 2.3

सवाई माधोपुर जिले में जनसंख्या वृद्धि

सन्–1931–2011

वर्ष	सवाई माधोपुर जिले कीजनसंख्या	जिले में दशकीय परिवर्तन (प्रतिशत में)	राजस्थान में दशकीयपरिवर्तन (प्रतिशत में)	भारत में दशकीय परिवर्तन (प्रतिशत में)
1931	603973	–	–	–
1941	682525	+13.01	+18.01	+14.23
1951	765172	+12.11	+15.20	+13.31
1961	943574	+23.32	+26.20	+21.51
1971	1193528	+26.49	+27.83	+24.80
1981	1535870	+28.68	+32.97	+24.66
1991	1963246	+27.83	+28.44	+23.86
2001	1117657	+27.55	+28.41	+21.34
2011	1335551	+26.94	+21.24	+17.06

स्त्रोतः– जनगणना प्रतिवेदन–2011, जयपुर ,राजस्थान ।

किसी भी देश या प्रदेश की प्राकृतिक वृद्धि के प्रकार आर्थिक विकास के चरणों सामान्य स्वास्थ्य के स्तर अभिवृतियों या लोगों के व्यवहार से सम्बन्धित हैं। भारत स्पष्टतः जनसांख्किीय संक्रमण के द्वितीय चरण में प्रवेश कर चुका है।

सवाई माधोपुर जिले में भी देश की भांति तीव्र जनसंख्या वृद्धि की प्रवृति पाई जाती और यहाँ पर जनसांख्यिकीय का दुसरा चरण देखने को मिलता है। निम्न सारणी संख्या 2.3 में सवाई माधोपुर जिले की जनसंख्या वृद्धि को दर्शाया गया है।

उपरोक्त सारणी संख्या का अवलोकन करने से अवगत होता है कि सवाई माधोपुर जिले में 1931 से 1941 के दशक में जनसंख्या में 13.01 प्रतिशत की वृद्धि हुई । सन् 1931 से 1951 के दौहरान जिले की जनसंख्या में धीमी गति से वृद्धि हुई है। (सारणी 2.3)। सन् 1951 के पूर्व देश के कई हिस्सों में पड़े सुखा अकाल व बाढ़ से राजस्थान व सवाई माधोपुर जिला भी अछुता नहीं रहा है।

सन् 1961से 2011 के द्वितीय चरण में सवाई माधोपुर जिले की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। जनसंख्या वृद्धि के प्रथम चरण में जहाँ सन् 1931 में जिले की कुल जनसंख्या 603973 थी। वह सन् 1951 में बढ़कर 765172 हो गई। परन्तु 1951 की जनसंख्या बढ़कर सन् 2011 में 1335551 हो गई है, इस प्रकार सन् 1951 से 2011 के 60 वर्षों में जनसंख्या में दुगनी से कम वृद्धि हुई है।[21] (सारणी 2.3)। इस वृद्धि का प्रमुख कारण जनसंख्या में वृद्धि हुई एवं मृत्यु दर में कमी के साथ–साथ जिले में औद्योगिक व तकनीकी विकास तथा कृषि विकास स्तर का उच्च होना है। सन् 1991 के उपरान्त जनसंख्या वृद्धि दर में कमी के कारण जिले में सरकार द्वारा चलाये गये परिवार नियोजन कार्यक्रमों के प्रसार का परिणाम है। सन् 1961 के दशक में तीव्र गति से वृद्धि 23.32 प्रतिशत हुई है ।

सवाई माधोपुर जिले की जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना राजस्थान व भारत से करने पर स्पष्ट होता है कि सन् 1931 से 2011 तक जनसंख्या वृद्धि में जिला राज्य व देश में अत्याधिक उतार चढ़ाव आया है। सन् 1931–41 के दशक की जनसंख्या वृद्धि दर 13.01 प्रतिशत, राजस्थान की 18.01 प्रतिशत तथा समस्त भारत की जनसंख्या वृद्धि दर 14.23 प्रतिशत से कम रही है। इसका प्रमुख कारण अकाल का प्रभाव कम होना था। 1981 से 2011 के बीच वृद्धि दर की प्रवृति में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है और इस दौहरान जिले की जनसंख्या वृद्धि दर समस्त भारत से अधिक व राजस्थान राज्य के लगभग बरावर रही है। (आरेख संख्या 2.2)

ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या वृद्धि

सवाई माधोपुर जिला एक कृषि प्रधान एवं ग्राम प्रधान है। अतः जिले का आर्थिक विकास व कृषि विकास उसके ग्रामों के आर्थिक विकास से जुड़ा हुआ है। ग्रामों का आर्थिक विकास कृषि अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित है, इसलिए गाँवों के विकास पर ध्यान देने की अत्याधिक आवश्यकता है। नगरीय क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्रों के कृषि यन्त्र रासायनिक खाद्य तथा कीटनाशक दवाओं की पूर्ति करते है जिससे कृषि उत्पादकता में वृद्धि होती है।

सवाई माधोपुर जिला, राजस्थान व भारत की जनसंख्या वृद्धि दर

सन्–1931–2011

आरेख संख्या 2.2

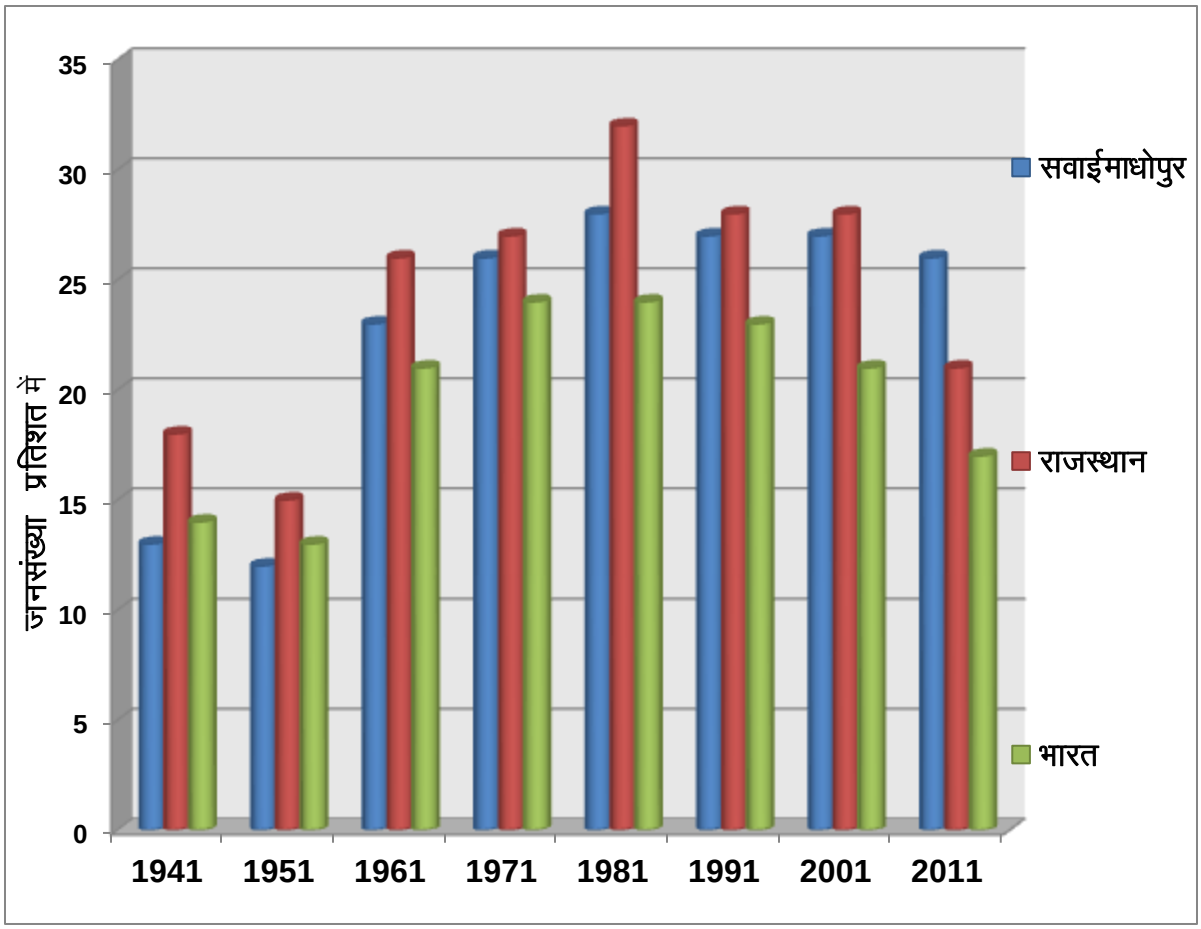

ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या वृद्धि का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव कृषि के विकास स्तर के साथ–साथ पर्यावरणीय दशाओं पर भी होता हैं।[22] सवाई माधोपुर जिले की ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या वृद्धि में क्षेत्रीय भिन्नता पाई जाती है। जिले की नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि का वितरण निम्न सारणी में दर्शाया गया है

सारणी संख्या 2.4 से सपष्ट है कि सन् 1971 से 2011 में जिले की ग्रामीण जनसंख्या में 6.00 प्रतिशत की कमी हुई क्योंकि देश कई हिस्सों में पड़ें सूख अकाल व बाढ़ के प्रकोपों से सवाई माधोपुर जिला भी अछुता नहीं रहा है। सन् 1971 में ग्रामीण जनसंख्या 86.05 प्रतिशत थी, जो 1981 में घटकर 84.76 प्रतिशत रह गई, किन्तु 1991, 2001 व 2011 में वृद्धि दर घटकर क्रमशः 82.68, 80.96 व 80.05

प्रतिशत रह गई। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले में 1069084 व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र में निवास करते है जबकि मात्र 266467 व्यक्ति नगरीय क्षेत्र में रहते है।

सवाई माधोपुर में ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या वृद्धि

सन्– 1971–2011

सारणी संख्या–2.4

वर्ष	ग्रामीण जनसंख्या	जनसंख्या प्रतिशत में	नगरीय जनसंख्या	जनसंख्या प्रतिशत में
1971	395565	86.40	64090	13.95
1981	495924	84.76	89135	15.24
1991	724093	82.68	151659	17.32
2001	904417	80.96	212640	19.04
2011	1069084	80.05	266467	19.95

स्त्रोतः–जनगणना निर्देशालय, जयपुर राजस्थान, 2011

आरेख संख्या 2.3 से स्पष्ट है कि ग्रामीण जनसंख्या के प्रतिशत में कमी तथा नगरीय जनसंख्या के प्रतिशत में वृद्धि पाई गई है। परन्तु दोनों की परम संख्या में वृद्धि हुई है। यद्यपि जिले में नगरीय जनसंख्या में वृद्धि पाई जाती है। किन्तु इसकी वृद्धि का प्रतिशत कम है।

सारणी संख्या 2.4 से स्पष्ट है कि जिले की नगरीय जनसंख्या सन् 1971 में 64090 थी जो बढ़कर सन् 2011 में 266467 हो गई। इन 40 वर्षों में जिले में 7.00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। सन् 1971, 1981 व 1991 में क्रमशः 13.95, 15.24 व 17.32 प्रतिशत वृद्धि हुई। परन्तु सन् 2001 में 19.04 प्रतिशत थी जो बढ़कर 2011 में 19.95

प्रतिशत वृद्धि हुई थी जो इन 40 वर्षों में हुई नगरीय जनसंख्या वृद्धियों में सबसे कम है। जो 1 प्रतिशत से भी कम हुई है।

आरेख संख्या 2.3

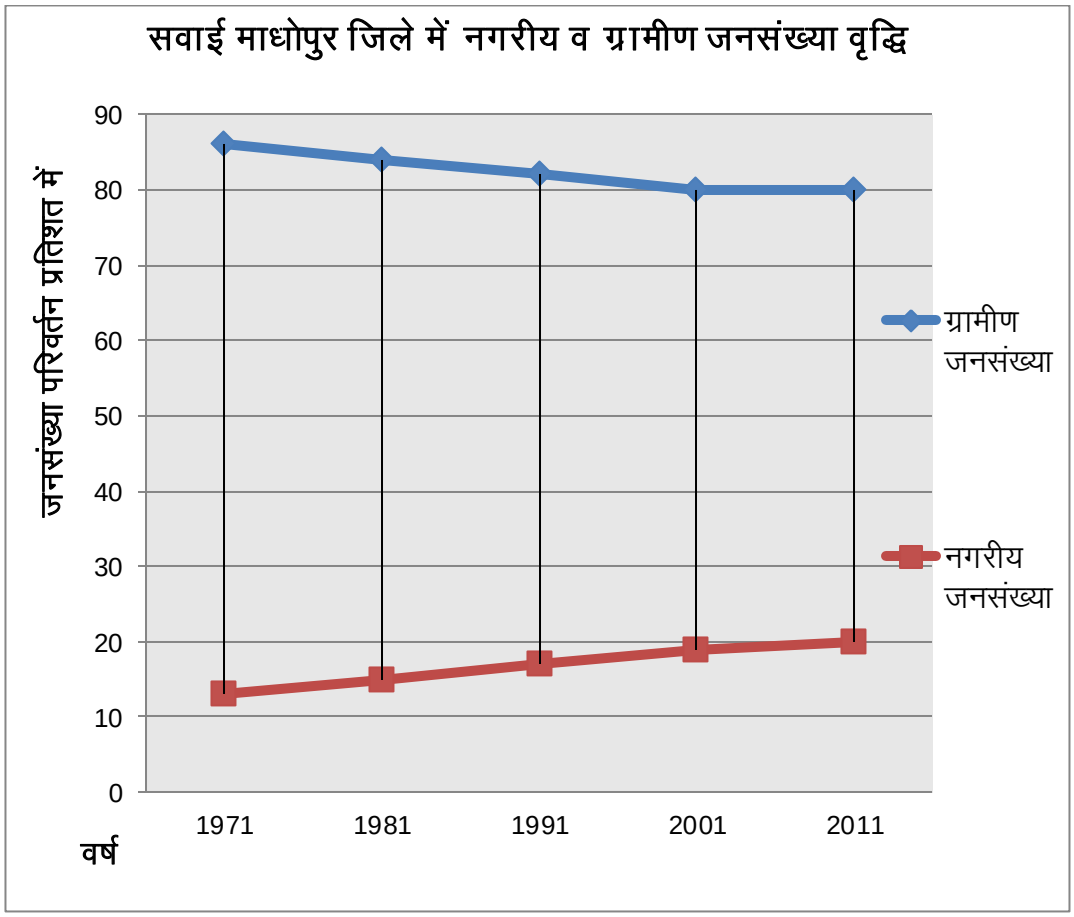

नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर में पाई जाने वाली विभिन्नता का प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्रों में से शहरी क्षेत्रों की ओर जनसंख्या के स्थान्तरण में पाई गई विभिन्नता है। प्रायः यह देखा गया है कि जिने वर्षों में वर्षा अधिक हुई है तथा कृषि फसलें अच्छी हुई हैं उन वर्षो में लोग कम से कम संख्या में शहरों की और पलायन करते हैं। किन्तु जिन वर्षो में वर्षा कम हुई है तथा कृषि अच्छी नहीं हो पाती है, उन वर्षो में अकाल की आशंका के कारण ग्रामीण क्षेत्रों से अधिक से अधिक संख्या में लोग शहरों में आते हैं। यही कारण है कि शहरी जनसंख्या में वृद्धि तथा ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि में कमी में बहुत उतार चढ़ाव देखने को मिलता है।

MAP No. 2.7

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

DISTRIBUTION OF RURAL& URBAN

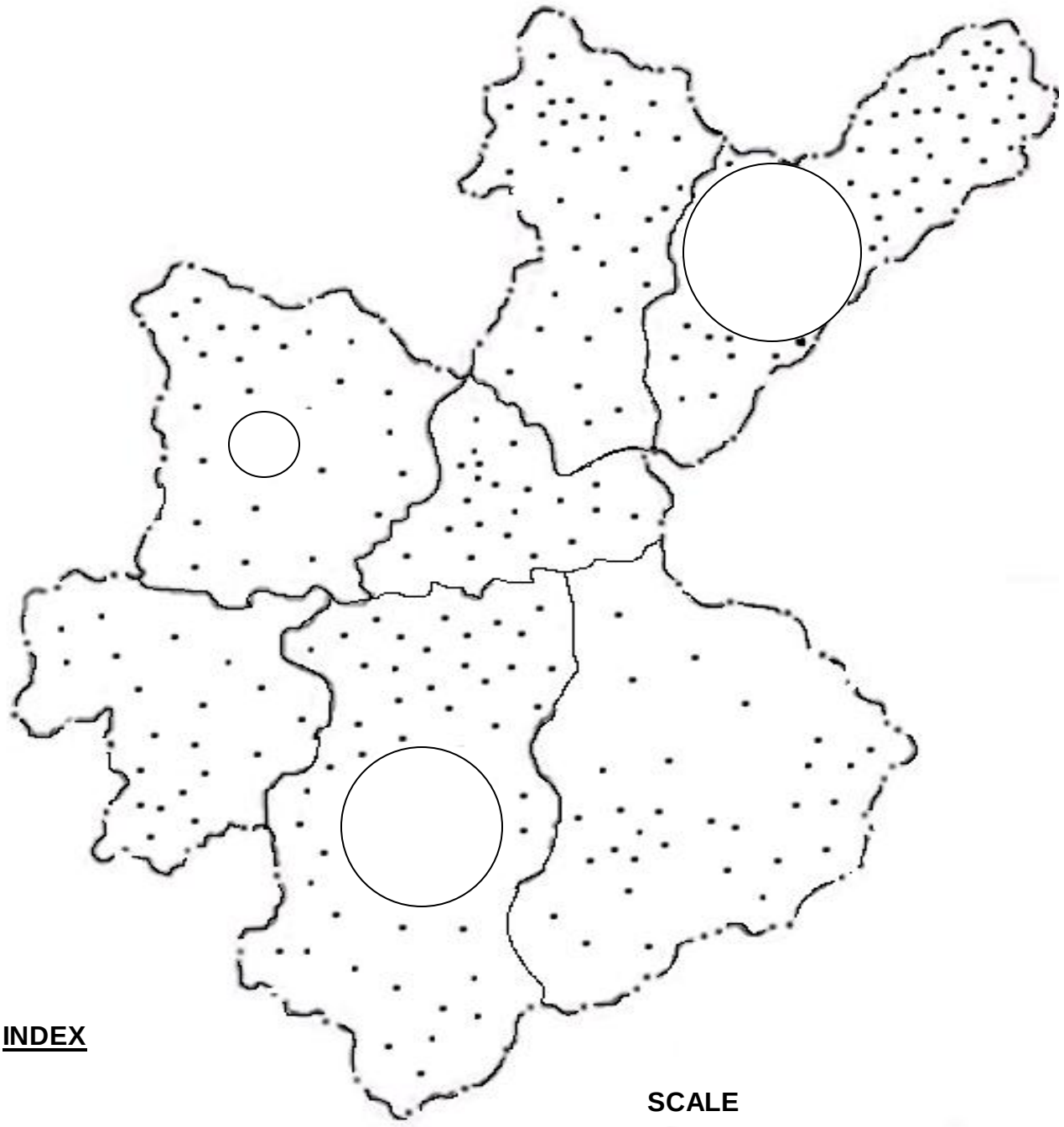

INDEX

5000 PERSON

50000 PERSON

SCALE

KMS 10 0 10 20 30 KMS

तहसील अनुसार ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या

2011

सारणी संख्या 2.5

क्र म सं.	तहसील	कुल जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या (प्रतिशत में)	ग्रामीण जनसंख्या	ग्राामीण जनसंख्या (प्रतिशत में)
1	गंगापुर	346614	130061	37.52	346614	
2	बामनवास	171648	—	—	171648	16.05
3	मलारना डुंगर	105732	—	—	105732	9.88
4	बौंली	142741	15300	10.71	127441	11.92
5	चौथ का बरवाड़ा	97500	—	—	97500	9.11
6	सवाई माधोपुर	334877	121106	36.16	213771	19.96
7	खण्डार	136439	—	—	136439	12.76
8	जिला	1335551	266467	19.95	1069084	80.05

स्त्रोतः—जनगणना निर्देशालय, जयपुर, राजस्थान, 2011।

उपरोक्त सारणी व मानचित्र 2.7 के अनुसार जिले में तीन ही तहसीलों में नगरीय जनसंख्या निवास करती है। जिले में कुल जनसंख्या (1335551) का 2664670 (19.95 प्रतिशत) नगरीय जनसंख्या है जबकि 80.05 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या है । जिले में सर्वाधिक नगरीय जनसंख्या गंगापुर तहसील में कुल नगरीय जनसंख्या (266467) की 130061 (37.52 प्रतिशत) है, सवाई माधोपुर में 121106 (36.16 प्रतिशत), बौंली में 15300 (10.71 प्रतिशत) नगरीय जनसंख्या है। यहाँ नगरीय जनसंख्या का मूल कारण शिक्षा , रोजगार मनोरंजन के साधन व जिला हैड क्वाटर आदि रहा है। खण्डार, चौथ का बरवाड़ा, मलारना डूंगर व बामनवास तहसीलों में नगरीय जनसंख्या का अभाव है।

भारत गाँवों का देश है इसी प्रकार सवाई माधोपुर जिला भी ग्राम प्रधान रहा है। यहाँ ग्रामीण जनसंख्या जिले के हर कोने में रहती है। क्योंकि जिले में एक मात्र रोजगार का साधन कृषि रहा है। (मानचित्र 2.7)

क्रियाशील जनसंख्या

क्षेत्र विशेष की क्रियाशील जनसंख्या की भागदारी दर वहाँ के समाज की आर्थिक, साामाजिक स्थिति और आयु संरचना पर निर्भर होती है। यह भागदारी दर समाज की आर्थिक–सामाजिक विकास की देन होती है। यह मात्र देश की व्यवसायिक संरचना के स्वरूप को स्पष्ट नहीं करती है बल्कि उसके आर्थिक विकास के स्तर को भी प्रकट करती है।[23] जिले में वर्ष 2001 में क्रियाशील जनसंख्या 42.00 प्रतिशत थी। सन् 2011 में बढ़कर 43.28 प्रतिशत हो गई है, इस प्रकार एक दशक में कार्यशील जनसंख्या में 1.28 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। निम्नलिखित सारणी संख्या 2.6 में तहसील अनुसार सवाई माधोपुर जिले की क्रियाशील जनसंख्या के वितरण को दर्शाया गया है–

सारणी संख्या 2.6

सवाई माधोपुर जिले में कार्यशील जनसंख्या परिवर्तन

सन्– 2001–2011

क्रम संख्या	तहसील	कुल जनसंख्या में कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत		
		2001	2011	दशकीय परिवर्तन
1	गंगापुर	34.65	38.83	+4.18
2	बामनवास	43.43	46.56	+3.13
3	मलारना डूँगर	43.18	43.12	–0.06
4	बौंली	49.88	47.49	–2.39
5	चौथका बरवाड़ा	42.38	44.06	+1.68
6	सवाई माधोपुर	39.21	41.07	+1.86
7	खण्ड़ार	56.25	51.07	–5.22
8	जिला	42.00	43.28	+1.28

सत्रोतः–जनगणना प्रतिवेदन –2011, जयपुर, (राजसथान) ।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार क्रियाशील जनसंख्या का प्रतिशत सबसे अधिक खण्डार (51.07 प्रतिशत) व बौंली (49.48 प्रतिशत) तहसीलों में तथा सबसे कम

गंगापुर (38.83 प्रतिशत) तहसील में पाया जाती है। जिले की मलारना डूँगर व सवाई माधोपुर तहसीलों में जिले के औसत (43.28 प्रतिशत) से कम क्रियाशील जनसंख्या का प्रतिशत पाया जाता है, (मानचित्र संख्या 2.8) जबकि खण्डार व बामनवास, बौंली व चौथका बरवाड़ा तहसीलों में जिले के औसत से अधिक क्रियाशील जनसंख्या का प्रतिशत है।

गत दशक में तहसील अनुसार कार्यशील जनसंख्या में विशेष परिवर्तन नहीं आया है। गंगापुर (4.18 प्रतिशत), बामनवास (3.13 प्रतिषत), चौथ का बारवाड़ा (1.68 प्रतिशत) व सवाई माधोपुर (1.86 प्रतिशत) तहसीलों की कार्यशील जनसंख्या के प्रतिशत में वृद्धि हुई है। जबकि खण्डार (5.28 प्रतिशत), बौंली (2.39 प्रतिशत) व मलारना डूँगर (0.06 प्रतिशत) तहसीलों की कार्यशील जनसंख्या के प्रतिशत में कमी हुई है। (सारणी संख्या 2.6)

क्रियाशील जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना

क्रियाशील जनसंख्या कई व्यवसायों में बेटी होती है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कार्यशील जनसंख्या का वर्गीकरण निम्न सारणी में तहसील बार दर्शाया गया है–

काश्तकारी

क्रियाशील जनसंख्या में सबसे अधिक संख्या जिले में काश्तकारों की है। जिले में कुल क्रियाशील जनसंख्या में से 63.93 प्रतिशत जनसंख्या काश्तकारों की है। जिले में काश्तकारी जनसख्या में पुरूषों की भागदारी मात्र 55.95 प्रतिशत है जबकि महिलाओं की भागदारी 75.99 प्रतिशत है। (सारणी संख्या 2.7)

खेतीहर मजदूर

जिले में कुल क्रियाशील जनसंख्या का 8.41 प्रतिशत खेतीहर मजदूर है। जिले के खेतीहर मजदूरों में 5.29 प्रतिशत पुरूष व 13.12 प्रतिशत महिलाओं की भागदारी रही है। (आरेख संख्या–2.4)

पारिवारिक उद्योग

पशुपालन, जंगल में काम करने वाले, मछली पकड़ने वाले शिकारी, बागान व फलोद्यान से सम्बन्धित कार्य कलाप में कार्यरत जनसंख्या 2.95 प्रतिशत है जो

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

WORKING POPULATION

2011

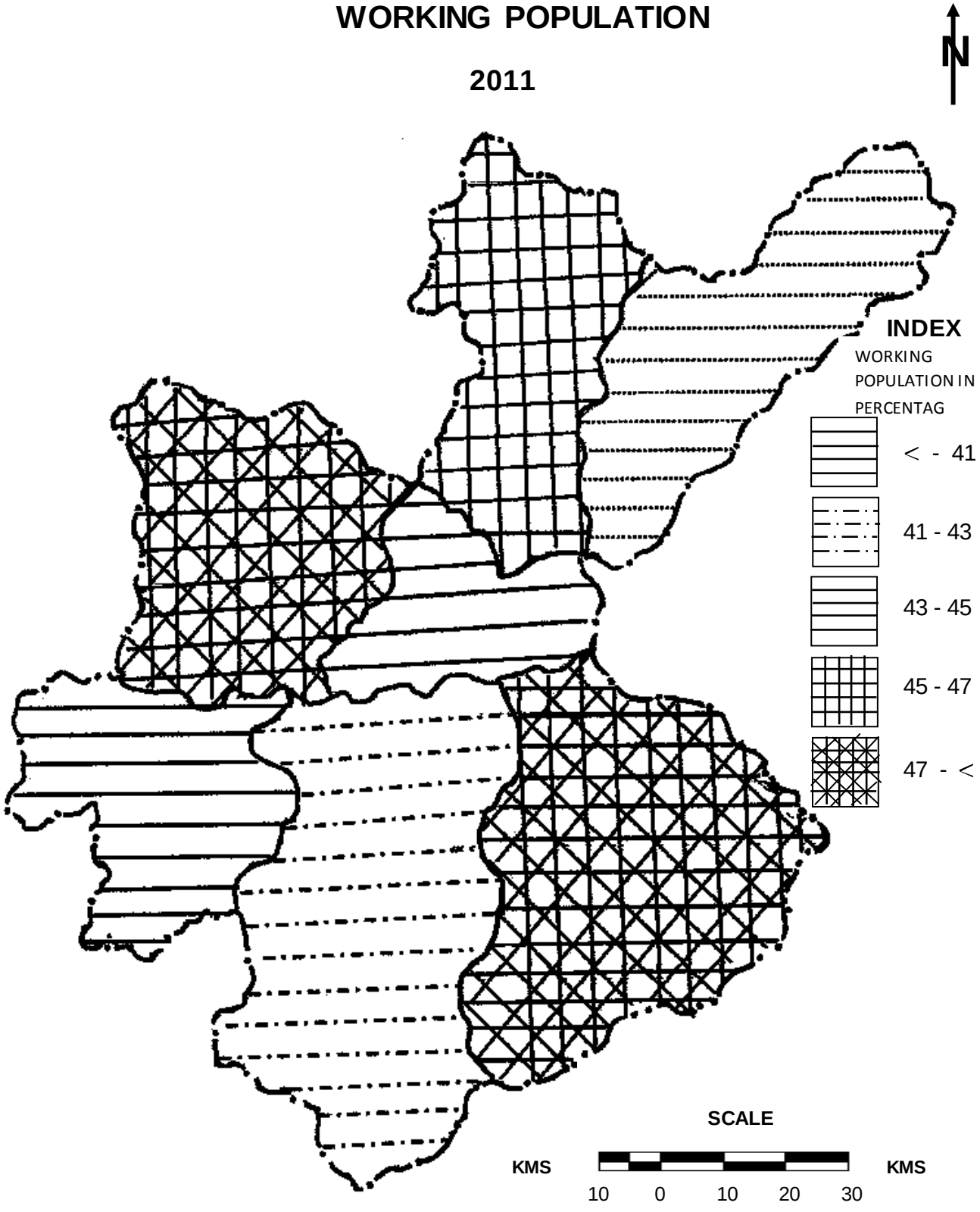

कियाशील जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना

सारणी संख्या 2.7

क्रम संख्या	व्यवसाय	कुल कार्यशील जनसंख्या		कार्यशील जनसंख्या प्रतिशत में		
		पुरूष	महिला	पुरूष	महिला	कुल प्रतिशत
1	काश्तकारी	157908	142033	55.95	75.99	63.93
2	खेतीहर मजदूर	14937	24525	5.29	13.12	8.41
3	परिवारिक उद्योग	8212	5637	2.91	3.02	2.95
4	अन्य सेवा	14726	14726	35.85	7.88	24.71
5	कुल	186921	186921	100.00	100.00	100.00

स्त्रोतः– जनगणना प्रतिवेदन 2011, राजस्थान।

अन्य सेवाएं

इन कार्यों के अतिरिक्त जो व्यक्ति अन्य कार्यों में संलग्न रहता है, उन्हें अन्य कार्यों में शामील किया जाता है। इसमे जिले की कार्यशील जनसंख्या का 24.71 प्रतिशत व्यक्ति कार्यशील है। अन्य सेवा में पुरूष 35.85 प्रतिशत व महिला 7.88 प्रतिशत है। (आरेख संख्या–2.4) जो अन्य सेवा में पुरूषों का प्रतिशत अधिक है।

सारणी सं. 2.7A **तहसीलवार कार्यशील पुरूष व महिलों में सहसम्बन्ध–2012**

क्र. सं.	तहसील	प्रति 1लाख पर पुरूषों की संख्या X	$dx=x-\bar{x}$ $\bar{x}$ = **0.49**	dx^2	प्रति 1लाख पर महिलों की संख्या y	$dy=y-\bar{y}$ $\bar{y}$ = **0.33**	dy^2	dxdy
1	गंगापुर	0.86	+0.37	0.1359	0.48	+0.14	0.0196	+0.0518
2	बामनवास	0.44	- 0.05	0.0025	0.35	-0.02	0.0004	+0.001
3	मलारना डुंगर	0.26	-0.23	0.0259	0.19	-0.141	0.0196	+0.0322
4	बौंली	0.37	-0.12	0.0144	0.30	-0.03	0.0009	+0.0036
5	चौथ का बरवाड़ा	0.24	-0.25	0.0625	0.18	-0.15	0.0225	+0.0375
6	खण्डार	0.38	-0.11	0.0121	0.31	-0.02	0.0004	+0.0022
7	सवाई माधोपुर	0.86	+0.37	0.1359	0.50	+.18	0.0324	+0.0666

N= 7 $\sum x$=3.41 $\sum dx^2$ = 0.3892 $\sum Y$= 2.32 $\sum dy^2$ = 0.0958 $\sum dxdy$ = 0.1949

$\bar{x} = \frac{\sum x}{N}$ $\bar{Y} = \frac{\sum Y}{N}$ $r = \frac{\sum dxdy}{\sum dx^2 \times \sum dy^2}$

$\bar{x} = \frac{3.41}{7}$ $\bar{Y} = \frac{2.32}{7}$ $r = \frac{0.1949}{0.3892 * 0.0958}$

$\bar{x}$ = **0.487** $\bar{Y}$ = **0.33**

जिले में कार्यशील पुरूष व महिलों में धनात्मक सहसम्बंध रहा है। r = 1.00

जिले में कार्यशील जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना

आरेख संख्या–2.4

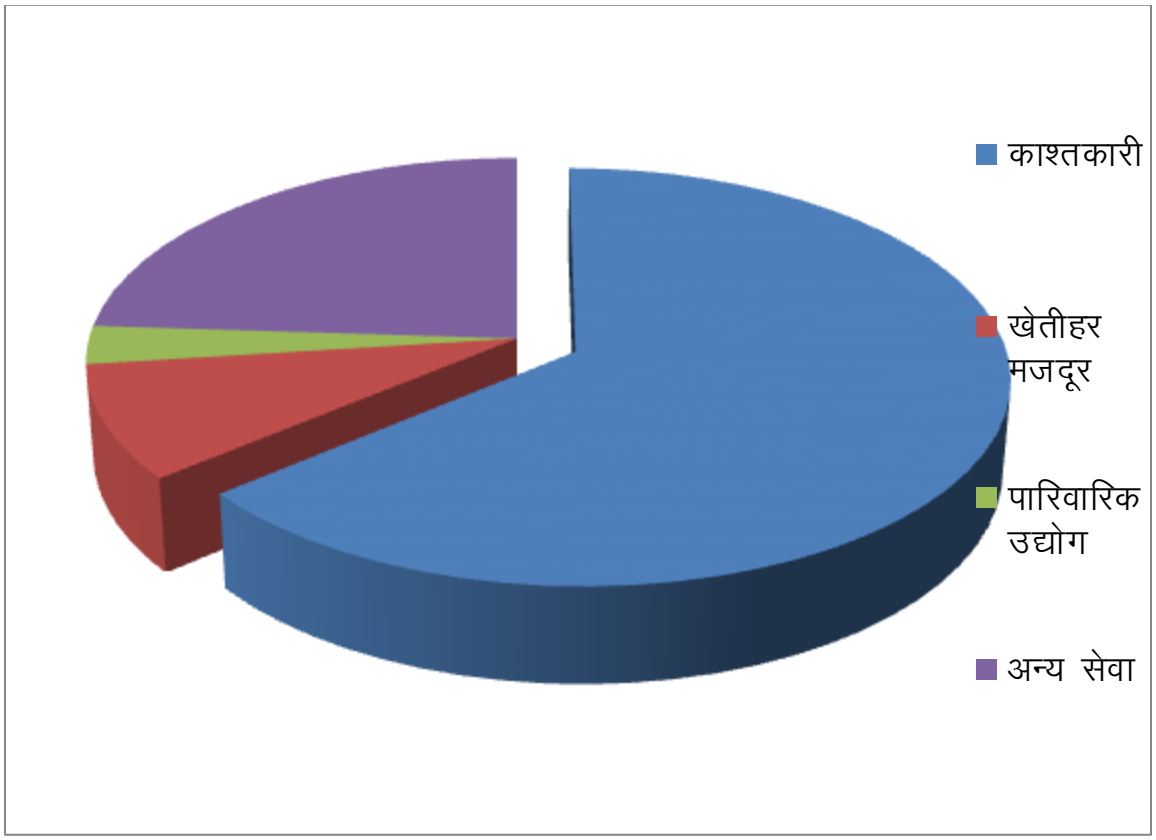

साक्षरता

शिक्षा तथा कृषि विकास में घनिष्ट धनात्मक सह सम्बन्ध होता है। शिक्षा के द्वारा ही कृषि में आधुनिकरण की आवश्यकता और नए परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त होती है। शिक्षा और साक्षरता कृषक और भूमि के कौशल में वृद्धि करते है। अर्जित किए गए ज्ञान और पिछले अनुभवों से कृषक ने केवल कृषि उत्पादन में वृद्धि करता है वरन् फसल प्रतिरुप में भी परिवर्तन करके अधिक लाभप्रद बनाता है। कृषि का विकास तकनीकी ज्ञान और कृषि पद्धति पर निर्भर होता है। इस प्रकार कृषि परिवर्तनों के विस्तार में शिक्षा और साक्षरता की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। वास्तव में शिक्षा और साक्षरता का विस्तृत प्रसार सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से विकास की प्रक्रिया के लिए परम आवश्यक है। दूसरी और यह अर्थव्यावस्था, नगरीकरण, जीवनस्तर, जातीय संरचना समाज में स्त्रियों की स्थिति शैक्षणिक सुविधाओं, यातायात एवं परिवहन, तकनीकी विकास आदि का सूचक है–

MAP No. 2.9

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

LITERACY

2011

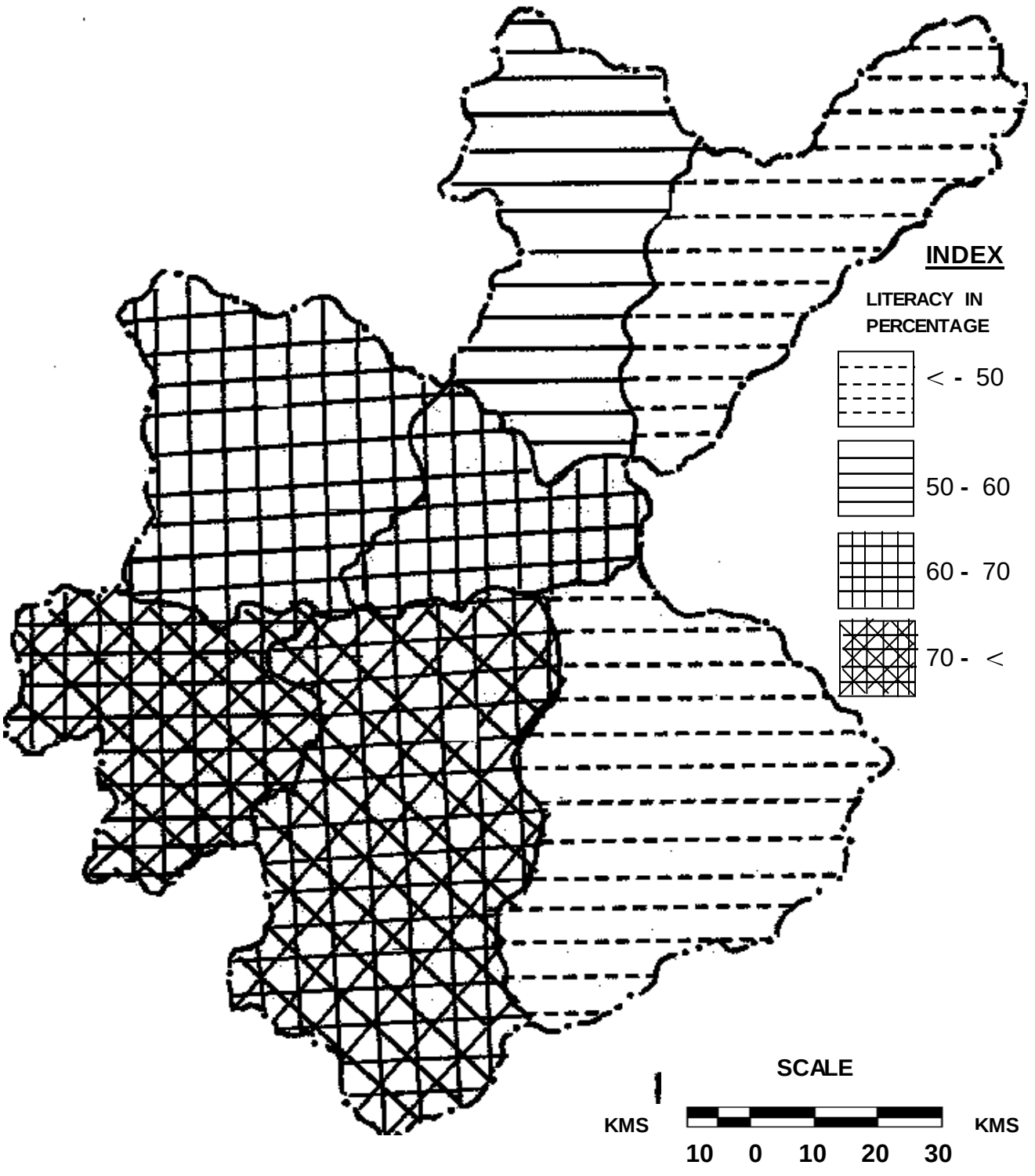

साक्षर व्यक्ति से अभिप्रायः उन व्यक्तियों से है जो किसी पत्र को सामान्य रुप से पढ़ लिख एवं समझ सकते है। जिले में सन् 2001 व 2011 की साक्षरता भारत व राजस्थान की साक्षरता से बहुत कम रही है। जो आरेख संख्या 2.7 में दर्शाया गई है। सन् 2001 में भारत में साक्षरता दर 64.5 प्रतिशत थी वहीं राजस्थान में 60.4 प्रतिशत थी। इस वर्ष सवाई माधोपुर जिले की साक्षरता दर 56.6 प्रतिशत थी। सन् 2011 में जिले की साक्षरता दर 56.67 प्रतिशत से बढ़कर 65.39 प्रतिशत हुई वहीं राजस्थान की साक्षरता दर 60.4 से बढ़कर 66.01 प्रतिशत हो गई तथा भारत की साक्षरता 64.5 प्रतिशत से बढ़कर 74.01 प्रतिशत हो गई अर्थात जहाँ दस वर्ष के समय में देश की साक्षरता दर 10 प्रतिशत बड़ी वहीं सवाई माधोपुर जिले की वृद्धि दर 9 प्रतिशत रही एवं राजस्थान में 5.61 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई हैं।

आरेख संख्या–2.5

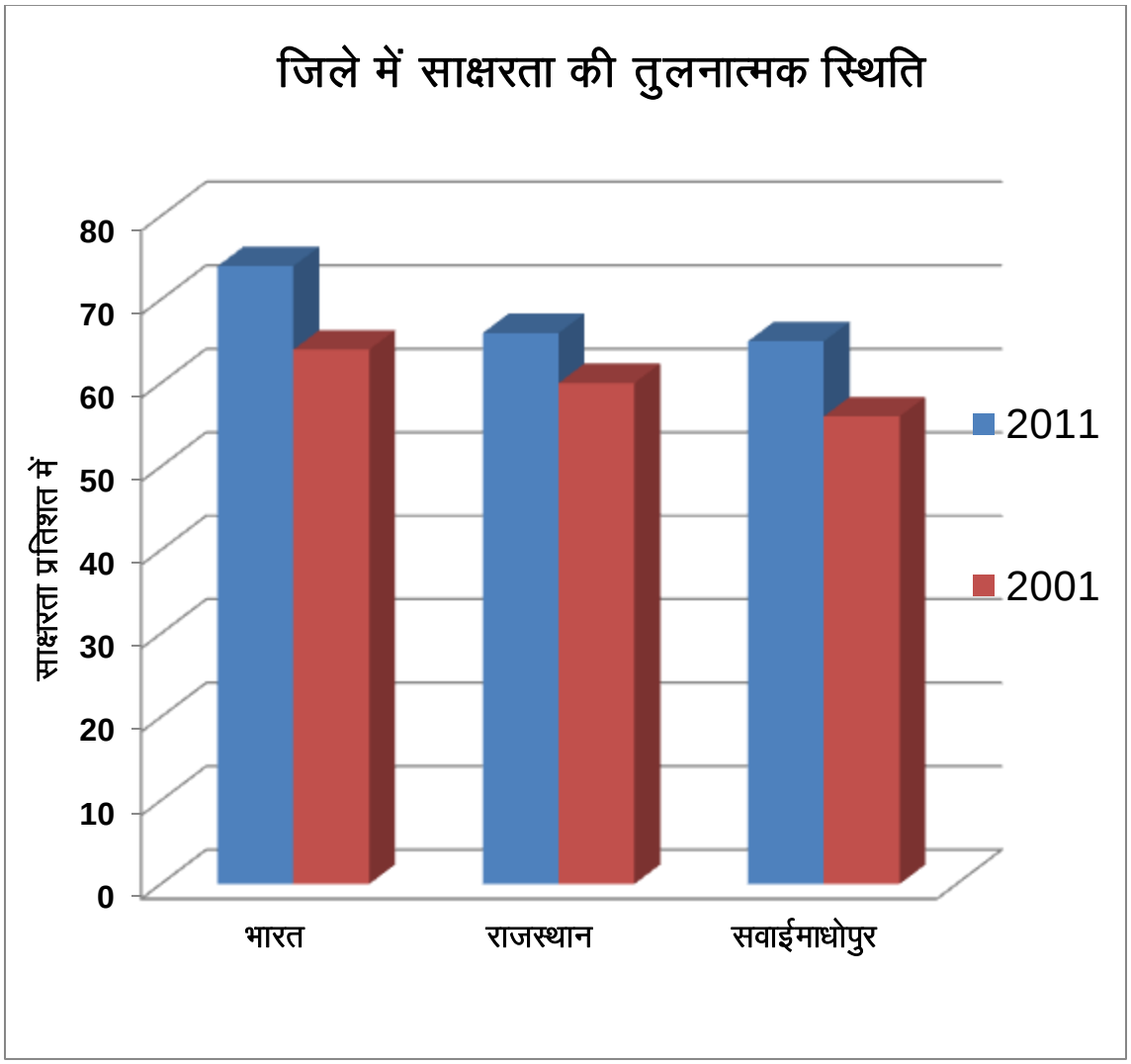

उपरोक्त सारणी 2.8 से स्पष्ट है कि जिले में सन् 2011 में 65.39 प्रतिशत साक्षरता है। यहाँ पुरुष साक्षरता 81.51 प्रतिशत व महिला साक्षरता 47.51 प्रतिशत है।

जिले में स्त्री व पुरुष साक्षरता में भारी अन्तर पाया जाता है। यहाँ सबसे अधिक पुरुष साक्षरता गंगापुर तहसील में 81.77 प्रतिशत है। दुसरे स्थान पर सवाई माधोपुर 79.10 प्रतिशत, बामनवास 78.18 प्रतिशत, मलारना डूंगर 74.10 प्रतिशत व बौंली तहसील में 73.01 प्रतिशत पुरुष साक्षरता है। जिले में सबसे कम पुरुष साक्षरता खण्डार तहसील में 62.67 प्रतिशत है। दुसरी और स्त्री साक्षरता में भी गंगापुर तहसील प्रथम स्थान पर है जिसमें वहाँ 43.58 प्रतिशत स्त्री साक्षरता है। दुसरे स्थान पर बामनवास 40.01 प्रतिशत तथा तिसरे स्थान पर सवाई माधोपुर तहसील 37.94 प्रतिशत स्त्री साक्षरता है। जिले में सबसे कम साक्षरता खण्डार तहसील में 22.16 प्रतिशत स्त्री साक्षरता है जो जिले की औसत स्त्री साक्षरता 47.51 प्रतिशत से लगभग आधि ही स्त्री साक्षरता है।

जिले में स्त्री साक्षरता बहुत कम पायी जाती है इस का प्रमुख कारण इन सभी क्षेत्रों में ग्रामीण जनसंख्या अधिक पायी जाती है और गाँवों में लड़कियों को स्कूल भेजने के बजाय घर के कार्यों में लगाया जाता है ताकि पुरुष व महिलाएं कृषि कार्य कर सकें।

मानचित्र संख्या 2.9 में साक्षरता के वितरण से स्पष्ट है कि खण्ड़ार, चौथ का बरवाड़ा, बौंली तहसील में चम्बल व बनास नदियों के बीहड़ों एवं अरावली पर्वत श्रंखला तथा उसके पास के क्षेत्रों में साक्षरता 35 प्रतिशत से भी कम है। मानचित्र संख्या 2.9 देखने से यह भी पता चलता है कि नगरीय क्षेत्र तहसील मुख्यालय व इन क्षेत्रों के पास साक्षरता 55 प्रतिशत से अधिक है। बड़े गाँवो तथा भू–अभिलेख खण्ड़ों के क्षेत्रों में साक्षरता 45–55 प्रतिशत के मध्य है।

जनसंख्या

प्रबन्धन उत्पादन व उपभोक्ता के रूप में कृषि के विकास में जनसंख्या सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटक है। वस्तुतः जनसंख्या वृद्धि का भी कृषि विकास पर गहन प्रभाव पड़ता है। जनसंख्या में वृद्धि होने पर कृषि तकनीकी तथा कृषि भूमि उपयोग में सुधार आता है। ताकि बढ़ती हुई जनसंख्या के भोजन एवं वस्त्र की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। कृषि भूमि उपयोग प्रणाली और कृषि तकनीकी परस्पर सह–सम्बन्धित होते है। जनसंख्या में वृद्धि होने पर कृषि भूमि का गहन उपयोग होने लगता है और तद्नुरूप तकनीकी में परिवर्तन होने लगता है। प्रबन्धन व उत्पादन के रूप में कृषि से सम्बन्धित जनसंख्या उसके विकास का नियन्त्रक है। इसलिये जिले में मानव संसाधन का अध्ययन एवं विश्लेषण करना महत्त्वपूर्ण है।

MAP No. 2.10

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

DISTRIBUTION OF POPULATION

2011

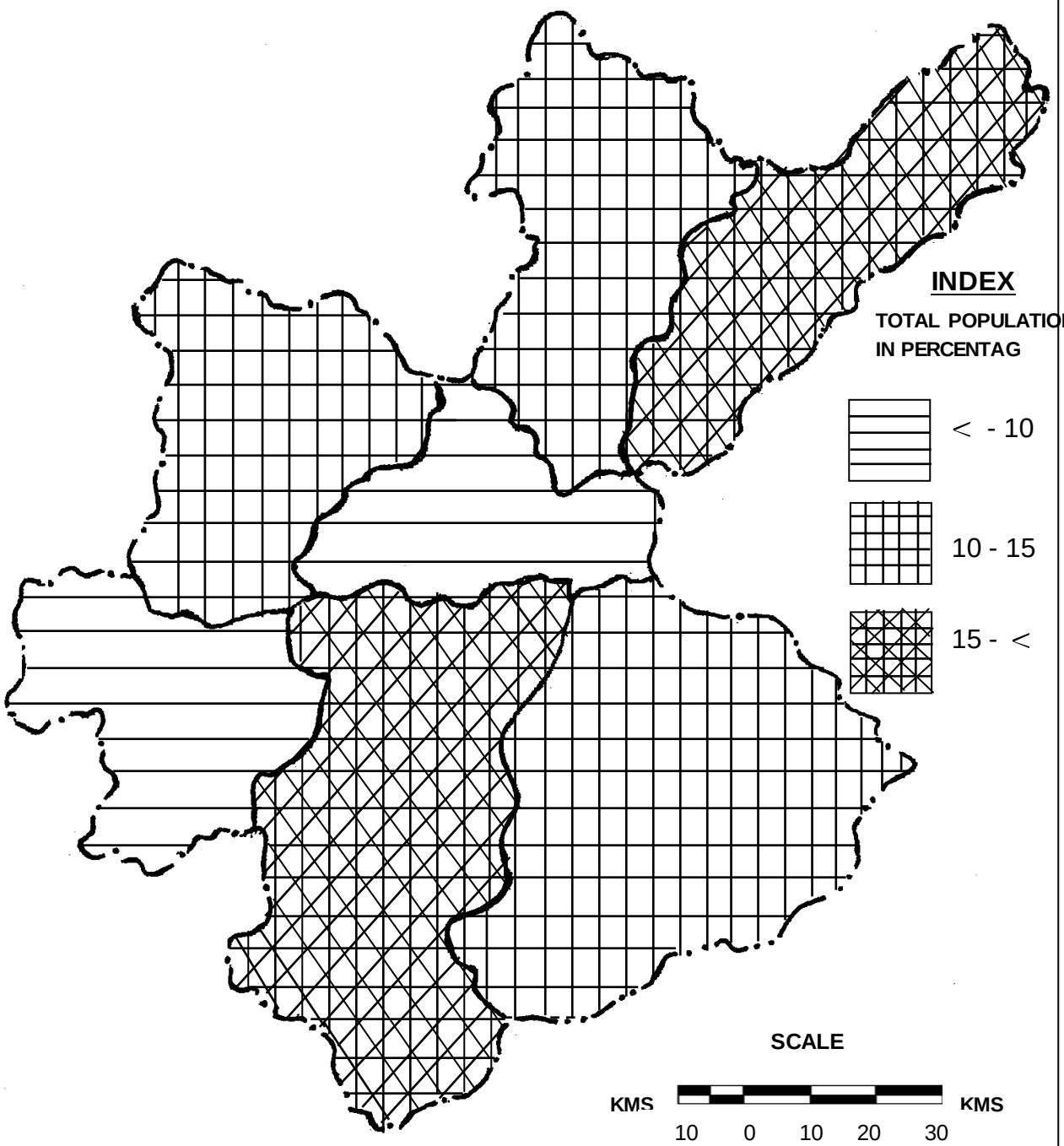

सारणी संख्या 2.8
तहसीलवार साक्षरता वितरण

सन्–2011

क्रम संख्या	तहसील	कुल साक्षरता प्रतिशत में	पुरूष साक्षरता प्रतिशत में	महिला साक्षरता प्रतिशत में
1	गंगापुर	65.95	81.77	43.58
2	बामनवास	61.90	78.18	40.01
3	मलारना डूँगर	53.46	74.10	29.74
4	बौंली	55.19	73.01	33.17
5	चौथका बरवाड़ा	52.65	72.40	28.58
6	सवाई माधोपुर	60.64	79.10	37.94
7	खण्डार	44.46	62.67	22.16
8	जिला	65.39	81.51	47.51

स्त्रोतः– जनगणना प्रतिवेदन, 2011, जयपुर (राजस्थान)

जनसंख्या वितरण

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1335551 है जो 4498 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर विस्तृत है। एक दशक के मध्य जनसंख्या मे 26.94 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जो राजस्थान के औसत के लगभग बराबर है। सन् 2011 की जनगणना अनुसार कुल जनसंख्या के 52.71 प्रतिशत पुरुष अर्थात 591307 तथा 47.29 प्रतिशत अर्थात 525750 महिला है। जिले में जनसंख्या घनत्व 248 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। जिले की कुल जनसंख्या में 19.98 प्रतिशत अनुसूचित जाति एंव 21.58 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति है। कुल जनसंख्या का 80.05 प्रतिशत ग्रामीण तथा 19. 95 प्रतिशत नगरीय है अतः नगरीयकरण न्यूनतम है।

सन् 2011 की जनगणना अनुसार जिले में जनसंख्या का वितरण तहसील मुख्यालय व भू–अभिलेख वृतों एवं पटवार मण्डल क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है। जिले में जनसंख्या के वितरण में विषमता तथा क्षेत्रीय भिन्नता दृष्टि गोचर होती है। क्षेत्र में

जनसंख्या वितरण अनेक प्राकृतिक, सामाजिक, जनांकिकीय, आर्थिक, राजनीतिक तथा ऐतिहाासिक कारकों द्वारा नियन्त्रित है। इन कारकों का एकाकी रूप में नहीं अपितु सामुहिक रुप से प्रभाव पड़ता है। मानचित्र संख्या 2.10 के अनुसार जनसंख्या का अत्याधिक जमाव उत्तर–पूर्वी एवं दक्षिणी भाग में 15 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निवास करती है। जिसका प्रमुख कारण औद्योगिक विकास, रोजगार के साधनों का विकास, शिक्षा का प्रमुख केन्द्र है। यह नगरीय जनसंख्या का मुख्य केन्द्र है तथा जिले में सिंचित क्षेत्र का बढ़ना व उपजाऊ मिट्टी के कारण जनसंख्या का जमाव अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है। जबकि मध्य वर्ति भाग में 10से 15 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। दक्षिणी–पूर्वी व पश्चिमी तथा उत्तरी–पश्चिमी भाग 10 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या रहती है। में धरातलीय विषमता सिंचाई के साधनों की कमी तथा औद्योगिक विकास का अभाव के कारण जनसंख्या कम पाई जाती है (मानचित्र सं. 2.10)

(आरेख संख्या 2.6) गंगापुर तहसील में 25.73 प्रतिशत महिला व 26.19 प्रतिशत पुरूष हैं। जबकि सबसे कम मलारना डुंगर में 7.96 महिला व 7.87 पुरूष है। यहाँ महिलाओं का प्रतिशत अधिक रहा है

कुल जनसंख्या पुरूष व महिलों में दशवर्षीय परिवर्तन 2011

आरेख सं. 2.6

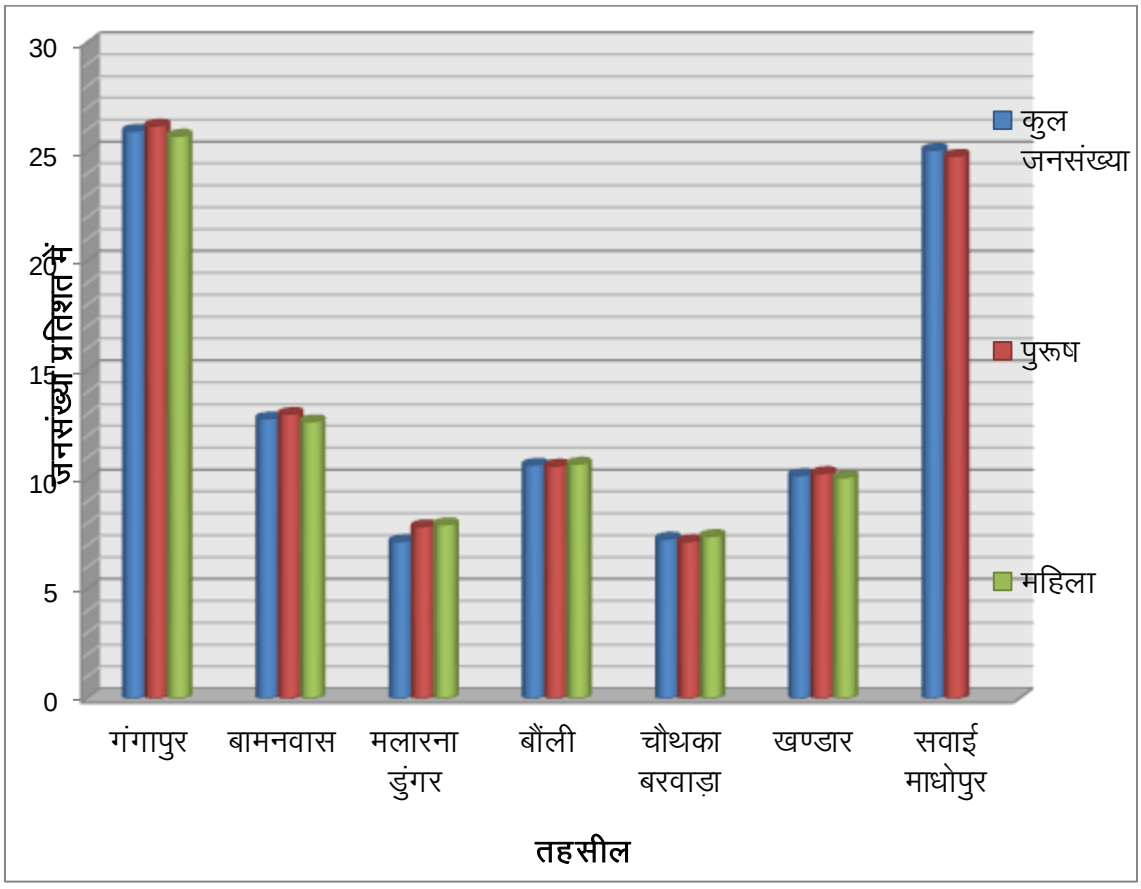

जनसंख्या घनत्व

जनसंख्या घनत्व से अभिप्राय प्रति इकाई भू क्षेत्रफल पर निवास करने वाली जनसंख्या से है। इसे गणितीय घनत्व कहते है। इस प्रकार के जनसंख्या घनत्व से सामान्यतयः प्रति इकाई क्षेत्र में बैठी हुई जनसंख्या का ज्ञान होता है। यह एक आश्चर्यजनक किन्तु सत्य तथ्य है कि विश्व के धरातल के कुछ ही भाग पर जनसंख्या अधिक घनी है। अन्यत्र इसकी असमानता और विरलता है। जनसंख्या का आकार और क्षेत्रफल जिस पर यह वितरित है जनसांख्यिकी अध्ययन के लिए महत्त्वपूर्ण कारक है क्योंकि ये मनुष्यों के जीवन स्तर को प्रभावित करते है। इसलिए जिले में मानव संसाधन का अध्ययन एवं विश्लेषण करना महत्त्त्वपूर्ण है।

जनसंख्या का घनत्व एक ऐसा बेरोमीटर है जिसके द्वारा मनुष्यों और भूमि के निरन्तर परिवर्तनशील सम्बन्ध की सूचना मिलती है। किसी प्रदेश में रहने वाले व्यक्तियों की संख्या और उस प्रदेश के क्षेत्रफल के पारस्परिक अनुपात को जनसंख्या का घनत्व कहा जाता है। इससे उसके जीवन स्तर और आर्थिक विकास की सूचना मिलती है।

अतः प्रत्येक प्रदेश की आर्थिक प्रगति तथा सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति की विकास योजनाएं बनाने के लिए क्षेत्र विशेष की जनसंख्या की सघनता या विरलता का पता लगाना आवश्यक होता है।

जनसंख्या का घनत्व कई प्रकार से मापा जा सकता है मानव और उपलब्ध सम्पुर्ण भूमि क्षेत्र के अनुपात में मानव और आर्थिक संसाधनों की उत्पादन क्षमता के अनुपात में मानव और कृषि योग्य भूमि के अनुपात में कृषक और खेती की जाने वाली भूमि के अनुपात में मानव और खाद्यय फसलों के क्षेत्रफल के अनुपात में अथवा नगरीय और ग्रामीण भूमि के क्षेत्रफल के अनुपात से है।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार सवाई माधोपुर जिले की कुल जनसंख्या 1335551 है जो 4498 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर विस्तृत है जिले का कुल क्षेत्रफल राजस्थान के समग्र क्षेत्रफल का 1.32 प्रतिशत है जहाँ राजस्थान की कुल जनसंख्या की 1.95 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

समस्त भारत व राज्य की भांति जिले में भी जनसंख्या का वितरण असमान है। जिले में जनसंख्या का औसत घनत्व 297 व्यक्ति (2011) प्रतिवर्ग किलोमीटर है, जो राज्य के औसत घनत्व 200 व्यक्ति से अधिक है सारणी 2.9 जबकि समस्त भारत के औसत घनत्व 382 व्यक्ति से कम है। सन् 1931 से 2011 के बीच जिले में जनसंख्या

MAP No. 2.11

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

POPULATION DENSITY

2011

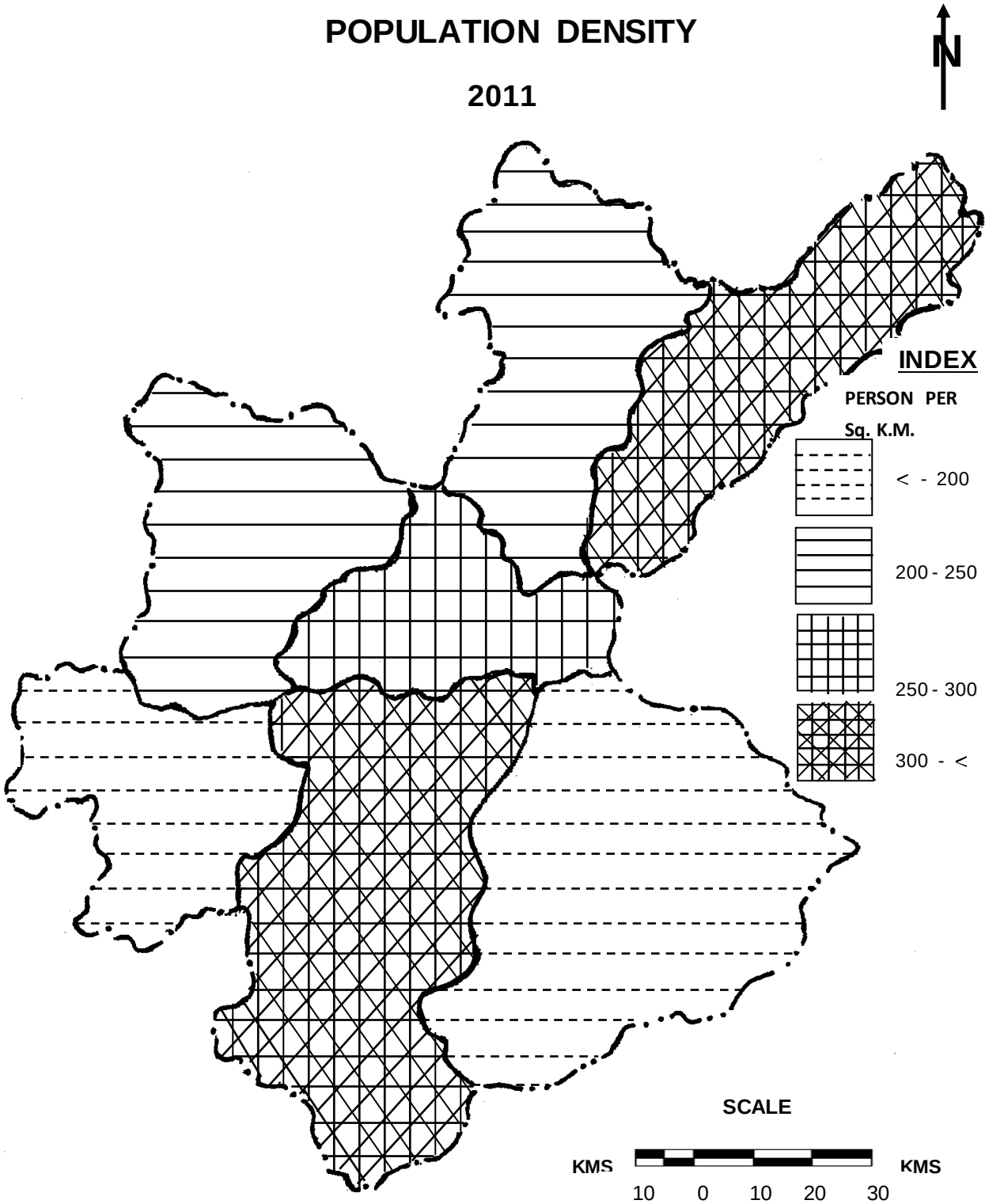

सारणी संख्या 2.9

जनसंख्या घनत्व

1931 से 2011

(व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर)

वर्ष	सवाई माधोपुर	राजस्थान	भारत
1931	58	34	90
1941	65	41	103
1951	73	47	117
1961	90	69	142
1971	114	75	177
1981	146	100	216
1991	186	128	267
2001	248	165	224
2011	297	200	382

स्त्रोतः– जनगणना प्रतिवेदन, 2011, जयपुर (राजस्थान) ।

जनसंख्या घनत्व में दशवर्षीय परिवर्तन

सन् 1931 से 2011

आरेख संख्या–2.7

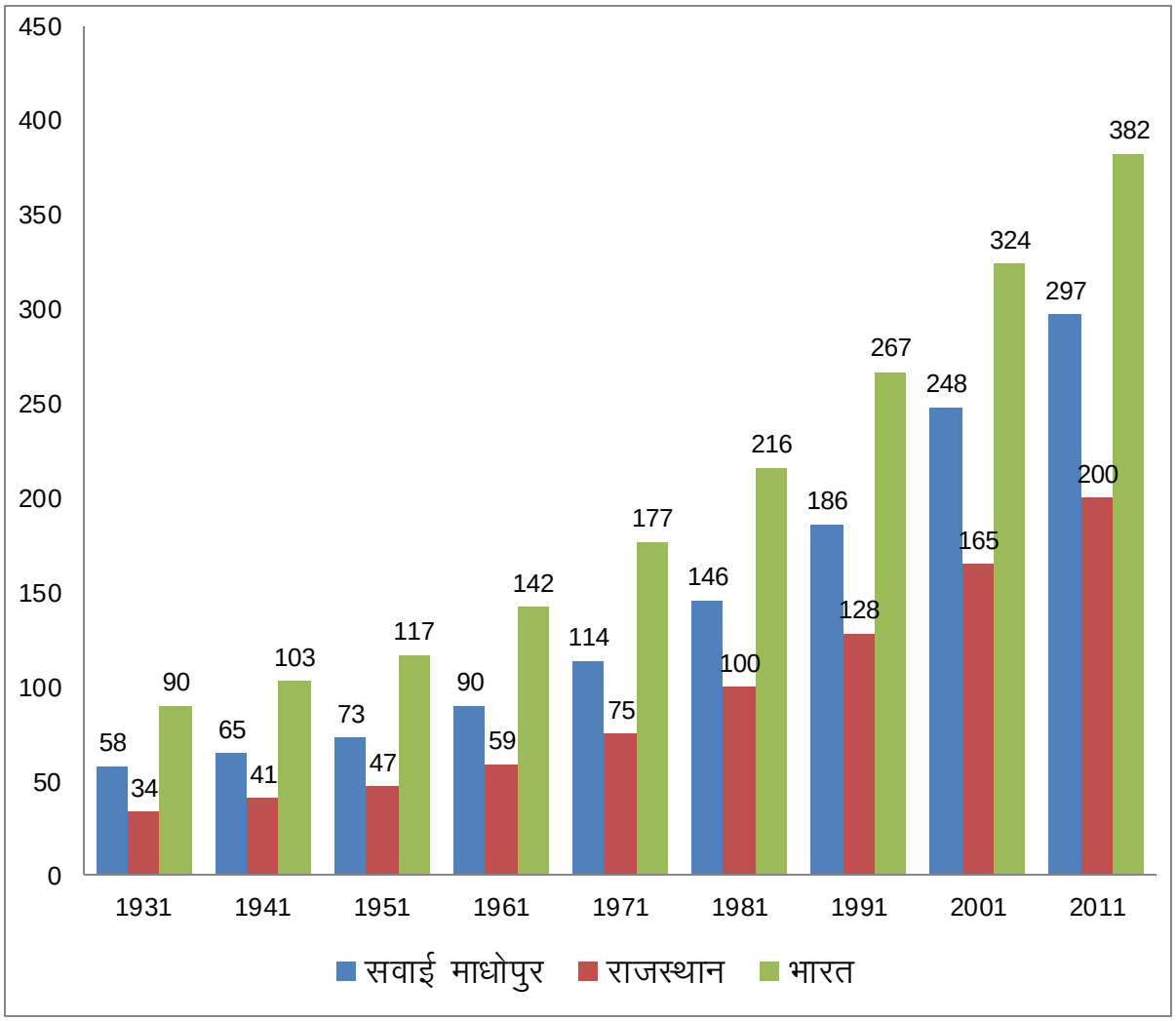

आरेख सं. 2.7 से स्पष्ट है कि सन् 1931 से 2011 तक सवाई माधोपुर जिले में जनसंख्या का औसत घनत्व राज्य के जन घनत्व से अधिक रहा किन्तु देश के जनसंख्या घनत्व से कम है। जिला, राज्य व समस्त भारत में 1931 से 2011 तक जनसंख्या घनत्व की वृद्धि दर में बहुत अधिक उतार चढ़ाव आये है। जिन्हे आरेख सं. 2.7 में दर्शाया गया है।

तहसीलवार जनसंख्या घनत्व – 2011

सारणी संख्या 2.10

क्रम संख्या	तहसील	कुल जनसंख्या	कुल क्षेत्रफल	जनसंख्या घनत्व
1	गंगापुर	346614	6644.69	538
2	बमनवास	171648	729.38	235
3	मलारना डूंगर	105732	389.83	271
4	बौंली	142741	626.01	228
5	चौथका बरवाड़ा	97500	522.95	186
6	सवाई माधोपुर	334877	1108.22	302
7	खण्ड़ार	136439	960.14	142
8	जिला	1335551	4498	297

स्त्रोत जनगणना प्रतिवेदन, 2011 ,जयपुर (राजस्थान) ।

जनसंख्या का गणितीय घनत्व

जनसंख्या और भूमि के क्षेत्रफल का सम्बन्ध मनुष्य और भूमि का अनुपात अथवा गणितीय घनत्व कहलाता है। जिसे निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है।

$$\text{जनसंख्या घनत्व} = \frac{\text{कुल जनसंख्या}}{\text{कुल क्षेत्रफल}} \quad 100$$

मानचित्र संख्या 2.11 के अनुसार जिले में सन् 2011 में सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व दक्षिण व उत्तर–पूर्व क्षेत्र में गंगापुर व सवाई माधोपुर तहसील क्षेत्र में जनसंख्या

घनत्व 300 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से अधिक पाया जाता है। जनसंख्या घनत्व में अधिकता का प्रमुख कारण औद्योगिक विकास जिले का प्रमुख शैक्षिक केन्द्र होना, कृषि विकास रहा है। जबकि दक्षिण–पूर्व व पश्चिमी क्षेत्र में खण्डार व चौथ का बरवाड़ा तहसील में जनसंख्या घनत्व 200 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से भी कम रहा है। जिले के उत्तर–पश्चिम क्षेत्र में बामनवास व बौंली तहसील में जनसंख्या घनत्व 200 से 250 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

लिंगानुपात

जनसंख्या भूगोल में स्त्री पुरुष अनुपात का अध्ययन बड़ा रुचिकर और महत्त्वपूर्ण हैं। क्योंकि स्त्रियाँ व पुरुष की भूमिका आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में पूरक और अपूरक दोनों होती है। लिंग अनुपात किसी क्षेत्र में वर्तमान सामाजिक व आर्थिक दशाओं का सूचक होता है ओर प्रादेशिक विश्लेषण के लिए उपयोगी साधन होता है। स्त्री–पुरुष अनुपात का प्रभाव जनसंख्या वृद्धि, विवाह दर तथा व्यावहारिक संरचना पर पड़ता है। लिंग अनुपात के अध्ययन से रोजगार व उपयोग का प्रतिरूप सामाजिक आवश्यकताओं ओर किसी जाति की मनोवेज्ञानिक विशषताओं को समझने में सहायता मिलती है। किसी क्षेत्र के लिंग अनुपात में परिवर्तन और सामाजिक आर्थिक जीवन की प्रकृतियों में घनिष्ट सम्बन्ध होता है।

लिंग संरचना को सामान्यतया लिंग अनुपात में व्यक्त किया जाता है। लिंग अनुपात को व्यक्त करने की कोई एक निश्चित विधि नहीं है। रुस में लिंग अनुपात सम्पूर्ण जनसंख्या के अनुपात में व्यक्त किया जाता है यथा सम्पूर्ण जनसंख्या में पुरुषों की संख्या 45 प्रतिशत तथा स्त्रियों की संख्या 55 प्रतिशत है। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रति एक सो स्त्रियों पर पुरुषों की संख्या बताई जाती है जैसे प्रति 100 स्त्रियों पर पुरुषों की संख्या 95 है।[24] न्यूजीलैण्ड में प्रति 100 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या बताई जाती है जैसे प्रति 100 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या 99 है। भारत में 1000 पुरुषों के पिछे स्त्रियों की संख्या व्यक्त की जाती है जो वर्तमान में 940 है।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार सवाई माधोपुर जिले में 704031 पुरुष तथा 631530 स्त्रियाँ है। इस प्रकार 1000 पुरुषों के पिछे 897 महिलाएं है। प्रति 1000 पुरुषों के पिछे स्त्रियों की संख्या जिले में भारत के 940 व राजस्थान के 928 से बहुत कम है जिसे निम्नलिखित सारणी में दर्शाया गया है।[25]

उपरोक्त सारणी 2.11 से स्पष्ट है कि कुल जनसंख्या में प्रति 1000 पुरुषों के पिछे स्त्रियों की संख्या में सन् 1901 से 1921 तक निरन्तर कमी हुई है। स्त्रियों के घटते हुए अुनपात के लिए लड़कों की तुलना में लड़कियों की उपेक्षा, बाल विवाह,

अल्पायु प्रसव, स्त्रियों का निम्न सामाजिक स्तर आदि कुरीतियाँ उत्तरदायी है। जिले में सन् 1931 से 1951 के दौहरान प्रति 1000 पुरुषों के पिछे स्त्रियों की संख्या में कुछ वृद्धि हुई है। जो जिले में सामाजिक विकास शिक्षा के प्रसार के कारण समाज में व्याप्त कुरीतियों की कमी को दर्शाता है।

सवाई माधोपुर व राजस्थान का लिंगानुपात

सन् 1901 से 2011

सारणी संख्या 2.11

(प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या)

क्र.स.	वर्ष	सवाई माधोपुर	वृद्धि व कमी	राजस्थान	वृद्धि व कमी
1	1901	870	—	905	—
2	1911	869	−1	908	+3
3	1921	859	−10	896	−12
4	1931	873	+14	907	+11
5	1941	884	+11	906	−1
6	1951	893	+9	921	+15
7	1961	884	−11	908	−13
8	1971	878	−6	911	+3
9	1981	880	+2	919	+8
10	1991	870	−10	912	−7
11	2001	889	+19	922	+10
12	2011	897	+8	928	+6

स्त्रोतः— जनगणना प्रतिवेदन, 1901 से 2011, जयपुर (राजस्थान)।

आरेख संख्या–2. 8

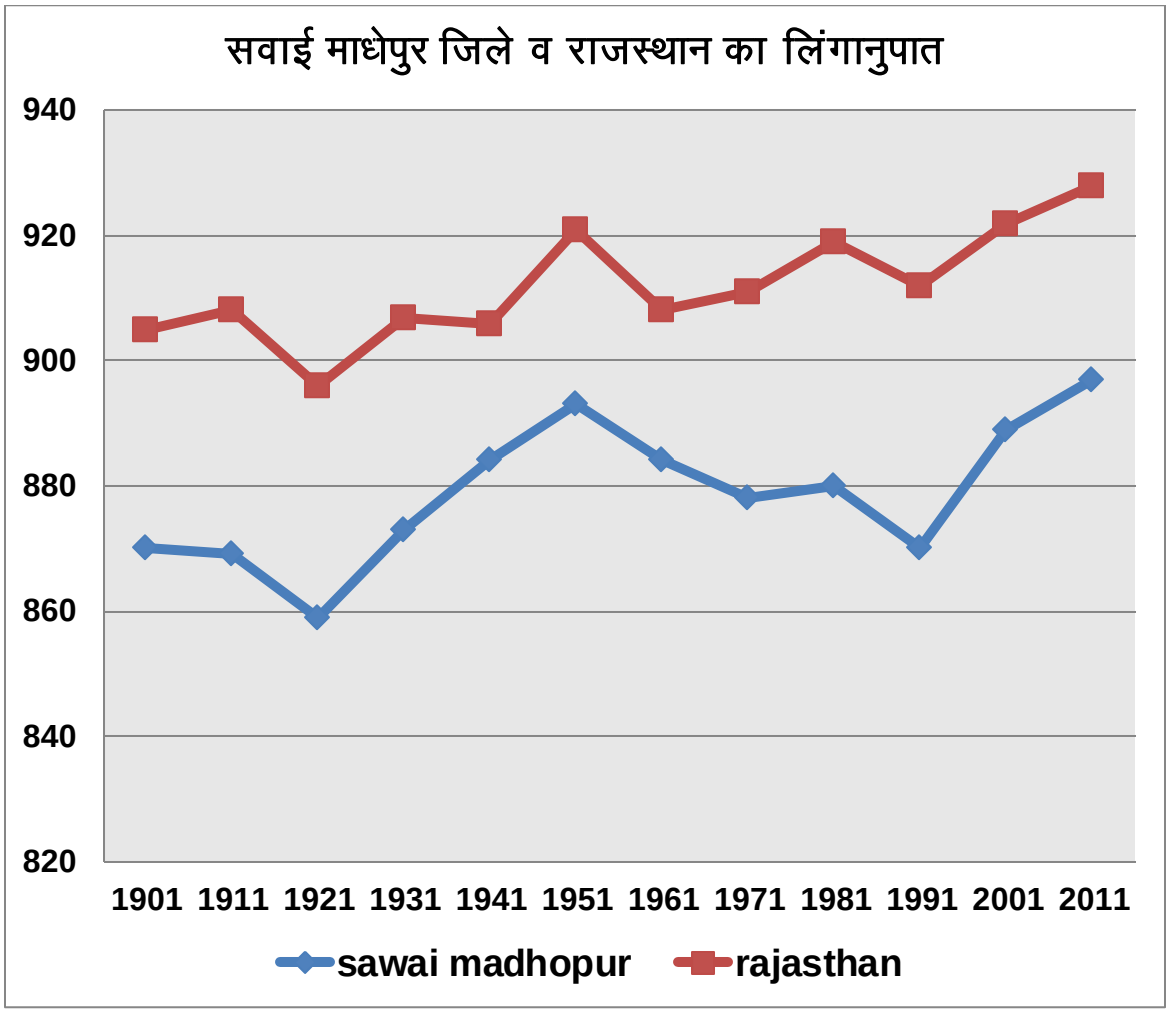

आरेख सं. 2.8 के अनुसार सन् 1921 में 1000 पुरुषों के पिछे 859 महिला है जो जिले में सबसे कम स्त्री अनुपात है। इस दशक में न्यूनत लिंग अनुपात पाये जाने का मुख्य कारण महामारियाँ, अकाल मृत्यु, स्वास्थ्य सुविधा का अभाव निम्न सामाजिक स्तर आदि कुरीतियों के कारण लिंगानुपात सबसे कम है। जिले में सर्वाधिक लिंगानुपात सन् 2001 में 889 था जो बढ़कर 2011 में 897 हो गया इस दशक में जिले में 8 महिलाओं की वृद्धि हुई।

सन् 2011 में 0–6 वर्ष का लिंगानुपात जिले में 871 था। जिले में 2011 में ग्रामीण लिंगानुपात 894 व नगरीय लिंगानुपात 911 है। नगरीय लिंगानुपात ग्रामीण लिंगानुपात की अपेक्षा अधिक है। इसका प्रमुख कारण वर्षा की कमी के कारण गाँवों से पुरुषों का नगरों की और मुख्य रूप से सवाई माधोपुर व गंगापुर नगरों में स्थानान्तरण है। उत्तर–पूर्व, दक्षिण पूर्व व मध्यवर्ती क्षेत्रों में प्रति 1000 पुरुषों पर

स्त्रियों का अनुपात 890 से 900 पाया जाता है। जबकि लिंगानुपात सबसे कम (880–890) उत्तर–पश्चिम, पश्चिम व मध्यवृति क्षेत्रों में पाया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कों की तुलना में लड़कियों की उपेक्षा बाल विवाह अल्पायु प्रसब स्त्रियों का निम्न सामाजिक स्तर आदि कुरीतियों के कारण लिंग अनुपात सबसे कम है।

सन् 1901 से 2011 तक जिले में राजस्थान राज्य के लिंगानुपात से निरन्तर कमी होती जा रही है। सन् 2011 में राज्य के लिंगानुपात 928 से बहुत कम 897 जिले का लिंगानुपात है। इस कमी का प्रमुख कारण जिले में अन्धविश्वास, सामाजिक कुरीतियाँ, अल्प आयु प्रसव, बाल विवाह आदि कारण रहे है।

अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति का वितरण

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले में अनुसूचित जाति एंव अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या 564737 है जो कि जिलें की जनसंख्या का 42.28 प्रतिशत है।[26]

सारणी संख्या 2.12 के अनुसार जिले में अनुसूचित जाति की कुल जनसंख्या 278789 है जो जिले की जनसंख्या का 20.87 प्रतिशत है। सन् 2011 जनगणना के आधार पर जिले में सर्वाधिक अनुसूचित जाति गंगापुर व सवाई माधोपुर तहसीलें में क्रमशः 25.51 व 24.40 प्रतिशत है। बामनवास में 12.14 प्रतिशत खण्डार में 14.45 प्रतिशत बौंली में 11.60 प्रतिशत व चौथ का बरवाड़ा में 6.55 प्रतिशत है। जिले सबसे कम अनुसुचित जाति मलारना डूंगर तहसील में 5.35 प्रतिशत है। सन् 2011 की जनगणनानुसार जिले में अनुसूचित जनजातियों की कुल जनसंख्या 285848 है, जो कि कुल जनसंख्या का 21.40 प्रतिशत है। यहाँ अनुसूचित जनजातियों के क्षेत्रीय वितरण में काफी असमानता पायी जाती है। जिले में सबसे अधिक अनुसूचित जाति सवाई माधोपुर तहसील में 75939 है जो जिले की कुल जनसंख्या का 26.57 प्रतिशत है। दूसरे व तिसरे स्थान पर क्रमशः गंगापुर 19.86 प्रतिशत व बामनास 18.88 प्रतिशत है। बौंली 12.72 प्रतिशत मलारना डूंगर में 9.50 प्रतिशत व चौथ का बरवाड़ा में 7.78 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति है जबकि जिले में सबसे कम अनुसूचित जन जाति खण्डार तहसील में 4.69 प्रतिशत है। जिले में अनुसूचित जाति के 20.87 प्रतिशत की अपेक्षा अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत 21.40 अधिक है। जिल में अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत अधिक है।

MAP No. 2.12

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

TRANSPORTATION

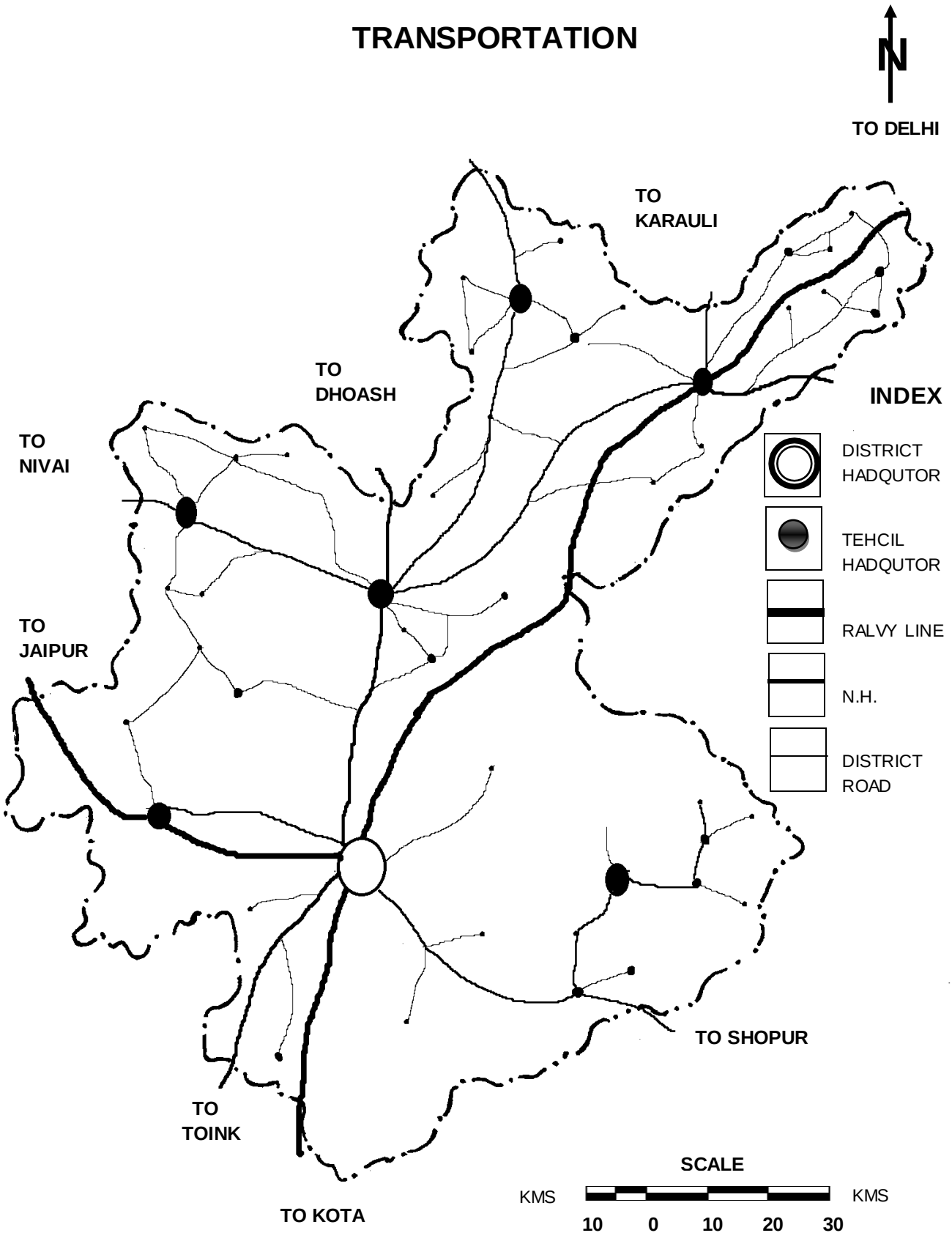

अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति का वितरण

2011

सारणी संख्या 2.12

क्र.सं.	तहसील	अनुसूचित जाति की कुल जनसंख्या	कुल जनसंख्या का प्रतिशत	अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या	कुल जनसंख्या का प्रतिशत
1	गंगापुर	71118	25.51	56774	19.86
2	बामनवास	33840	12.14	53961	18.88
3	मलारना डूगंर	14908	5.35	27168	9.50
4	बौंली	32335	11.60	36363	12.72
5	चौथ का बरवाड़ा	18269	6.55	22248	7.78
6	सवाई माधोपुर	68015	24.40	75939	26.57
8	खण्डार	40304	14.46	13395	4.69
9	जिला	278789	20.87	285848	21.40

स्त्रोतः– जनगणना प्रतिवेदन, 2011 राजस्थान।

यातायात एवं संचार

किसी भी प्रदेश के आर्थिक, सामाजिक एवं कृषि विकास में परिवहन के साधनों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक समय में परिवहन के साधनों के विस्तार को आर्थिक समृद्धि का सूचक माना जाता है।[27] जिले में भी औद्योगिक एवं कृषि विकास के लिए परिवहन के साधन एक प्राथमिक आवश्यकता है।

जिले में सड़के, रेलमार्ग व वायुमार्ग तीनों प्रकार के यातायात साधन हैं। जिला दिल्ली–मुम्बई रेलमार्ग के मुख्य मार्ग पर होने के कारण रेल परिवहन मुख्य यातायात का साधन है। जिले के मुख्य रेल्वे स्टेशनों में जिला मुख्यालय सवाई माधोपुर, गगांपुर, चौथ का बरवाड़ा, मलारना डूंगर, रवांजना डूँगर, कुस्तला, खण्ड़ीप व ईसरदा है।[28] (मानचित्र 2.12)। सन् 1993–94 में निर्मित ब्रॉडगेज रेलवें लाईन जिले को राज्य की

FLATE No.

I

II कृषि में रासायनिक दवाईयों का प्रयोग

रेलवें यातायात के साधन

राजधानी जयपुर से जोड़ती है। पूर्व में यह मीटर गेज लाईन थी। जिले में रेलवें मार्गों की कुल लम्बाई 164 किलोमीटर है।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के द्वारा जिले के लगभग सम्पूर्ण गाँवों को कच्ची व पक्की सड़कों से जोड़ा जा रहा है। जिला मुख्यालय सड़क मार्ग द्वारा अन्य जिला मुख्यालयों तथा तहसीलों व गांवों से जुड़ा हुआ है। राजस्थान में नवीनतम घोषित 2003–04 राष्ट्रीय राजमार्ग 11बी तथा 116 सवाई माधोपुर से होकर गुजरता है। जो राष्ट्रीय राजमार्ग सवाई माधोपुर–टोंक व कोटा तथा सवाई माधोपुर से दौसा, करौली, आगरा, जयपुर तथा श्योपुर व ग्वालीयर को जाते है। (मानचित्र 2.12)।

जिले में सड़क मार्गों की कुल लम्बाई 2641 किलोमीटर है, किन्तु जिले की आवश्यकता को देखते हुए अभी सड़क मार्गों की लम्बाई बहुत कम है। निजी बस सेवा ग्रामीण क्षेत्रों को नगर व कस्बों से जोड़ती है। जिले में राष्ट्रीय राजमार्ग 62.45 किलोमीटर, राज्यमार्ग 187.52 किलोमीटर, मुख्य जिला सकड़ें 206.56 किलोमीटर, अन्य जिला सड़कें 300 किलोमीटर व ग्रामीण सड़कें 2452 किलोमीटर है।

सन् 2005–06 में 2.59 लाख रूपये व्यय कर हवाई पट्टी का निर्माण किया गया है। जिले में राजस्थान राज्य परिवहन निगम का ड़िपों 2012–13 में बना है। सवाई माधोपुर ड़िपों से जयपुर, दौसा, कोटा, टोंक अलवर, बूँदी व श्योपुर को सरकारी बसें जाती है।

दूरसंचार

प्राचीन काल में कृषि एक स्थानीय व्यवसाय एवं मानव के भरण–पोषण का साधन था लेकिन वर्तमान समय में कृषि विकास एवं आधुनिकीरण के लिए दूर संचार सेवा की अति आवश्यकता है। दूर संचार सेवा के माध्यम से कृषक अपनी कृषि से सम्बिधित समस्याओं को आसानी से दूर कर कृषि विकास को बढ़ावा देता है। नवीन कृषि तकनीकी व रासायनिक खाद्द्य बीज व रोगों आदि की जानकारी दूर संचार के माध्यम से कृषक तक आसानी से पहुँच जाती है। वर्तमान में भारत सरकार, राजस्थान सरकार व जिला स्तर पर संचार सेवा का उपयोग तीव्र गति से कृषि विकास में हो रहा है। जिले में ड़ाकतार और भारतीय दूर संचार व्यवस्था का विकास तीव्र गति से हुआ है। जिले में प्रत्येक भू–अभिलेख निरीक्षक वृत स्तर पर एक पोस्ट ऑफीस व किसान क्रेड़िट कार्ड़ के. सी. सी. ऑफिस खोले गये है। वहीं दूर संचार के क्षेत्र में अनेक सुविधाएं प्रदान की गई हैं। निजी फोन कम्पनी, भारतीय टेलीकोम, जेट टेलीकॉम, बी. एस. एन. एल, भारतीय एटीयल, टाटा–वोड़ाफोन हच, आईड़िया मोबाईल कम्पनी, रिलांइस मोबाइल कम्पनी एवं ई–मित्र, इन्टरनेट, ई–मेल, वाई फाई 3जी इन्टरनेट आदि संचार क्षेत्र में अपना योगदान दे रहे है।

जिले में वित्तीय संस्थाओं द्वारा स्थानीय कृषकों व नागरिकों को स्व रोजगार एवं अजीवका उपलब्ध करवाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। पिछेल कुछ समय से जिले के वाणिज्य क्षेत्रीय व ग्रामीण व सहकारी बैंकों ने अपने विस्तार द्वारा जिल के ग्रामीण कृषकों में अपनी पहुँच बनाई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 जिला दर्शन व जिला गजटीयर, सवाई माधोपुर, राजस्थान।

2 Know your District Atlas of Rajasthan by Geological sarvey of Iandia.

3 उल्लेखीत

4 उल्लेखीत

5 भारतीय सर्वेक्षण विभाग, देहरादून द्वारा धरातल पत्रक सं.–45 ओ व पी सातवां प्रकाशन।

6 उल्लेखीत

7 भारतीय सर्वेक्षण विभाग देहरादून द्वारा धरातल पत्रक सं.–45 ओ ।

8 Know your District Atlas of Rajasthan by Geological sarvey of Iandia.

9 Know your District Atlas of Rajasthan by Geological sarvey of Iandia.

10 डॉ. एच. एन. कोली (1996) : ''पर्यावरण एवं संसाधन'', रिर्सच बुक्स, जयपुर, पृष्ट संख्या 26।

11 उल्लेखीत ।

12 एग्रीकल्चरल एटलस ऑफ राजस्थान क्लाइमेटिक डिवीजन (1991–2001)।

13 भल्ला, एल. आर. (2007) : ''राजस्थान का भूगोल'' कुलदीप पब्लिकेंशन्स, जयपुर, पृष्ट सं.–30।

14 भल्ला, एल. आर. (2007) : ''राजस्थान का भूगोल'' कुलदीप पब्लिकेंशन्स, जयपुर, पृष्ट सं.–32।

15 एग्रीकल्चरल एटलस ऑफ राजस्थान क्लाइमेटिक डिवीजन (1991–2001)।

16 चौहान, गौतम (1993) : ''भारत का भूगोल'' रस्तोगी प्रकाशन, पृष्ट–123।

17 उल्लेखीत।

18 भल्ला, एल. आर. (1991) : ''राजस्थान का भूगोल'', कुलदीप पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृष्ट सं.–52।

19 ओझा, रघुनाथ (1989) : ''जनसंख्या भूगोल'', प्रतिभा प्रकाशन, कानपुर, पृष्ट सं.–47।

20 सम्पादक मण्डल (1975) '' भारत का भूगोल '' राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, पृष्ट सं.–14।

21 जिला जनगणना प्रतिवेदन, (1971से 2011), सवाई माधोपुर, राजस्थान।

22 उल्लेखीत ।

23 यादव, एस. के. (1995) : ''कृषि पारिस्थितिकी एवं पर्यावरणीय दशाएं'' रिर्सच बुक्स, जयपुर, पृष्ट संख्या 36।

24 ओझा, रघुनाथ (1989) : ''जनसंख्या भूगोल'', प्रतिभा प्रकाशन, कानपुर, पृष्ट सं.–148–150।

25 भारतीय जनगणना प्रतिवेदन, 2011,

26 जिला जनगणना प्रतिवेदन, 2011, सवाई माधोपुर, राजस्थान।

27 भल्ला, एल. आर. (2007) : ''राजस्थान का भूगोल'', कुलदीप पब्लिकेंशन्स, जयपुर, पृष्ट सं.–30।

28 जिला सांख्यिकीय, 2011।

तृतीय–अध्याय

कृषि भूमि उपयोग एवं सिंचाई प्रतिरूप में आया परिवर्तन

कृषि भूमि उपयोग का वर्गीकरण

कृषि भूमि उपयोग में आया परिवर्तन

(सन् 1992–93 से 2012–13)

- वन क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन
- कृषि अनुपलब्ध भूमि एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन
- कृषि अयोग्य भूमि एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन
- परती भूमि एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन
- शुद्ध बोया गया क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन
- कुल बोया गया क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन
- दो फसलीय क्षेत्र एवं सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन

कृषि प्रतिरूप एवं कृषिगत लक्षण

- शस्य गहनता एवं उसमें आया परिवर्तन, शस्य श्रेणीकरण
- खरीफ फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र एवं आया परिवर्तन
- रबी फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र एवं आया परिवर्तन
- शस्य संयोजन प्रदेश– वीवर व दोई

सिंचाई प्रतिरूप

- सिंचाई का महत्त्व
- सिंचाई सुविधाओं का विकास
- सिंचाई के स्त्रोत एवं साधन–नहरे, कुऐं, तालाब और नलकूप
- सिंचाई गहनता एवं उसमें आया परिवर्तन
- सिंचित व असिंचित क्षेत्र एवं उसमें आया परिवर्तन
- सिंचित क्षेत्र में वृद्धि, फसलों के अनुसार सिंचित क्षेत्र
- शुष्क कृषि पद्धति

कृषि भूमि उपयोग एवं सिंचाई प्रतिरूप में आया परिवर्तन

किसी भी क्षेत्र या प्रदेश के कृषि प्रतिरूप वहाँ के सिंचाई प्रतिरूप, भौतिक, सामाजिक एवं मानवीय कारकों द्वारा निर्धारित होता है। इसमें सिंचाई व जनसंख्या की आवश्यकता का योगदान अति महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए कृषि में विभिन्न परिवर्तन किये जाते है। जिले में जीविकोपार्जन का प्रमुख स्त्रोत भूमि ही है। अतः भूमि उपयोग का विश्लेषण करने के पूर्व भूमि संसाधन आधार का मूल्यांकन करना परम आवश्यक जाने पड़ता है। क्योंकि इस क्षेत्र का अन्यत्र जीवन के उच्च स्तर का आधार निःसन्देह सम्पन्न भूमि संसाधन है।[1]

भारत एक कृषि प्रधान देश है ,जहाँ कुल जनसंख्या का 70 प्रतिशत लोग कृषि कार्यों में संलग्न है। चीन को छोड़कर संसार के किसी भी देश में इतनी बड़ी जनसंख्या पूर्णतया कृषि पर आश्रित नहीं है। इस दृष्टि से भारत संसार के प्रमुख खेतीहर देशों में से एक है। वन तथा मत्स्य मिलाकर अकेल कृषि से लगभग 45 प्रतिशत राष्ट्रीय आय प्राप्त होती है।[2] अतः भारत की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है।

आधुनिक युग की समस्या अभिमुख अनुसंधानीय एवं वैज्ञानिक अध्ययनों में भूमि एवं उसके सानुकुल उपयोग का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। जिस देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था ही कृषि संसाधनों पर आधारित है, उस क्षेत्र के भौतिक अध्ययन में भूमि उपयोग से अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण सम्भवतः अन्य कोई विषय नहीं है।[3] यह निर्वात सत्य है कि आज भूमि संसाधन पर द्रुतगति से बढ़ती जनसंख्या का भार बढ़ रहा है।

अतः यह आवश्यक हो गया है कि संसार के विभिन्न क्षेत्रों की भूमि का विभिन्न कार्यों के लिए सबसे लाभप्रद तथा अधिकतम उपयोग को ध्यान में रखते हुए भूमि का उपयोग आदर्श रूप में किया जाए। भूमि के सदुपयोग व दुरूपयोग के मूल्यांकन एवं उसके आधार पर आदर्श उपयोग के निर्माण हेतु यह आवश्यक है कि संसार के विभिन्न क्षेत्रों में जिस ढ़ग से विभिन्न उदेश्यों की पूर्ति के लिए भूमि का उपयोग किया जा रहा है, उसकी व्यवस्था एवं समीक्षा की जाए तभी वर्तमान एवं भूत के आधार पर भविष्य की योजना का निर्माण किया जा सकता है।[4]

भारतीय कृषि के समरूप ही जिले में भी स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात ही योजनाबद्ध विकास से कृषि विकास हुआ है। जो देश में आई हरित क्रांन्ति के फलस्वरूप राजस्थान राज्य के इस क्षेत्र में भी तिव्र कृषि विकास हुआ है।

वर्तमान में सिंचाई के साधनों के विकास से ही कृषि प्रतिरूप में अत्याधिक विस्तार हुआ है। वहीं नयें उन्नत किस्म के बीजों तथा उर्वरकों के प्रयोग तथा सदुपयोग से खाद्यान्नों में वृद्धि हुई है। नये अनुसंधान से नयी किस्म के बीजों का अत्याधिक उपयोग हुआ है तथा कृषि में यंत्रिकरण औद्योगीकरण को बढ़ावा मिला है।

कृषि भूमि एवं खाद्यान्न उत्पादन क्षेत्र विशेष की सिंचाई प्रतिरूप संभाव्यता पर आधारित होती है क्योंकि कृषि भूमि उपयोग एवं सिंचाई के संसाधनों का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध होता है।[5] आज सतत् रूप से बढ़ती हुई जनसंख्या के फलस्वरूप जनसंख्या एवं भूमि संसाधनों व सिंचाई संसाधनों का अन्तर दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार वृद्ययोन्मुख जनसंख्या की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति सीमित भूमि संसाधनों द्वारा होना एक विषम समस्या है। इस समस्या के निदान हेतु अनेक भूगोलवेत्ताओं ने कृषि प्रादेशीकरण योजना के माध्यम से कृषि विकास के साथ–साथ सिंचाई के संसाधनों के विकास की योजनाऐं प्रस्तुत की हैं।

कृषिगत क्षेत्रीय समरूपता एवं सम्बद्धता को समझने के लिए कृषि प्रवृतियों का अध्ययन आवश्यक होता है क्योंकि किसी भी देश की कृषि प्रवृतियाँ वहाँ के कृषि विकास अवस्था का घोतक होती हैं। कृषि विकास एवं सिंचाई संसाधनों की अवस्था पर उस क्षेत्र की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक दशाओं का कालिक प्रभाव प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष में रूप कृषि अवस्था पर पड़ता है, क्योंकि परिवर्तनशीता पृथ्वी के धरातल का प्रमुख लक्षण है। इसलिए कृषि एव सिंचाई परिवर्तनशीलता का सामयिक विश्लेषण करने से उस क्षेत्र की कृषि विकास की प्रवृतियों का अध्ययन सुगम हो जाता है। इस प्रकार के विश्लेषण एवं मूलयांकन के पश्चात उस क्षेत्र में कृषि विकास की योजना प्रस्तुत करना अधिक लाभप्रद होता है।

वास्तव में भूमि उपयोग के अध्ययन में किसी प्रमुख उपयोग के अन्तर्गत भूमि को अन्य सामान्य उपयोग में रूपान्तरण करना सम्मिलित है।[6] इस मत की सारगर्भिता की पुष्टि कृषि प्रतिरूप एवं सिंचाई प्रतिरूपों में विभिन्न परिवर्तनों से होती है। अतः प्रस्तुत अध्ययन के सन्दर्भ में सवाई माधोपुर जिले के कृषि प्रतिरूप एवं सिंचाई प्रतिरूप में परिवर्तन के अध्ययन हेतु विस्तृत भूमि उपयोग एवं सिंचाई प्रतिरूप प्रस्तुत गया है।

कृषि भूमि उपयोग का वर्गीरण

भूमि प्रकृति द्वारा प्रद्धत अमूल्य निधि है। भूमि संसाधन आर्थिक क्रियाओं का आधार है। किसी भी क्षेत्र में भूमि संसाधन की उपयोगिता से क्षेत्र का आर्थिक भू–दृश्य प्रभावित होता है।[7] कृषि की दृष्टि से भूमि समतल होना ,उपजाऊपन पानी की उपलब्धता एवं अन्य अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियों के आधार पर कृषि प्रारूप

प्रभावित होता है। जब भू–भाग का प्राकृतिक स्वरूप लुप्त हो जाता है और मानवीय क्रियाओं के योगदान से एक नया भू–दृश्य जन्म लेता है, उसे भूमि उपयोग कहते है।[8] भूमि उपयोग से तात्पर्य किसी भू–भाग का मानव द्वारा किसी कार्य के लिए प्रस्तुत किए जाने से है। यह प्रयुक्तिकरण कृषि, पशुपालन व उधोग आदि से सम्बन्धित हो सकता है। तो दुसरी ओर मानव की सांस्कृतिक क्रियाओं के लिए भी इसे प्रस्तुत किया जा सकता है। भूमि एक सीमित संसाधन है तथा इसके कुछ भाग में ही कृषि कार्य होते है, जो कृषि प्रारूप का आधार है।

भूमि की विशेषताओं के आधार पर भूमि का उपयोग विभिन्न रूप से किया जाता है। जिसके कई आधार हो सकते हैं। सन् 1949 में स्थापित **''टेक्निकल कमेटी ऑफ कन्डीसन ऑफ एग्रीकल्चरल स्टेटिटिक्स''** ने निश्चित आधारों पर भूमि के सर्वमान्य वर्गीकरण किये है।[9] जो निम्न है–

1 वन

2 कृषि के लिए अपर्याप्त भूमि (उसर व कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि तथा कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्यों जैसे–सड़क, तालाब, आबादी आदि में प्रयुक्त होती है।)

3 जोत रहित भूमि (स्थायी चारागाह, बाग–बगीचों के अन्तर्गत भूमि व कृषि योग्य बेकार पड़ी हुई भूमि।)

4 पड़त भूमि (नयी तथा पुरानी पड़त।)

5 वास्तविक बोया गया क्षेत्र ।

6 दो फसलीय क्षेत्र ।

7 कुल बोया गया क्षेत्र

यह वर्गीकरण मूलतः कृषि उन्मुख है तथा कृषि भूमि के उपयेाग के अध्ययन हेतु बहुत उपयोगी है। इसमें कृषि के लिए उपलब्ध और अनुपलब्ध भूमियों का वर्णन दिया गया है।[10] इसमें एक दोष यह है कि पाश्चात् देशों की तरह गैर कृषि के लिए उपलब्ध भूमि का वितरण प्राप्त नहीं होता है, जैसे–कारखानों के अन्तर्गत क्षेत्र या यातायात के लिए उपलब्ध भूमि का उपयोग अथवा नगर तथा ग्रामीण अधिवासों के अन्तर्गत उपलब्ध भूमि का क्षेत्रफल इनकों सामान्य रूप से कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि के अन्तर्गत वर्गीकृत कर दिया गया है। किसी भी प्रदेश के भूमि उपयोग का

प्रतिरूप उनके भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी और आर्थिक कारकों से प्रभावित रहता हैं। इनके निर्धारण में ऐतिहासिक और राजनीतिक कारक भी महत्त्वपूर्ण होते है।[11]

कृषि भूमि उपयोग में आया परिवर्तन सन् 1992–93 से 2012–13

कृषि भूमि उपयोग का वितरण एवं उनका परिवर्तनशील प्रतिरूप का अध्ययन कृषि विकास के लिए परम आवश्यक होता है। क्योंकि इस के द्वारा किसी भी क्षेत्र के भूत एवं वर्तमान के आधार पर भावी भूमि उपयोग की लाभकारी योजना का निर्माण किया जा सकता है। जिसके फलस्वरूप कृषि भूमि पर अधिकाधिक फसलों उत्पादन करना सम्भव होता है। भूगोल में इस प्रकार के अध्ययन एल.डी. स्टाम्प ने ग्रेट बिटेन के लिए 'चक्रवती ने परिवर्तन के आंकलन के लिए सांख्यिकीय विधि को अपनाया । डॉ. सफी ने गंगा यमुना दोआब के भूमि उपयोग विश्लेषण में 9 फसलों के भूमि उपयोग में परिवर्तन का अध्ययन प्रस्तुत किया। इस प्रकार एस. एम. अली, विद्या बन्धु त्रिपाठी एवं उसा अग्रवाल तथा यू. के. सिन्हा एवं जे. एन. पाण्डेय सराहनीय रहे है।

जिले में कृषित भूमि में घटित होने वाले परिवर्तनों का विवेचन निम्न विधि से किया गया है–

विधि तन्त्र7

सवाई माधोपुर में कृषि के परिवर्तनशील प्रतिरूपों का विशद अध्ययन प्रस्तुत करने के लिए समयावधि 1992–93 से 2012–13 ली गई है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जिले की प्रशासनिक लधु इकाई ''भू–अभिलेख निरीक्षक वृत'' अर्थात 'गिरदावरी मण्डल को आधार मानकर तथा सन् 1992–93 से 2012–13 को आधार मानकर गत 20 वर्षों का परिवर्तन निकाला गया है। गत 20 वर्षों में आए हुए परिवर्तन प्रतिशत को धनात्मक एवं ऋणात्मक परिवर्तन के रूप में प्रयोग किया गया है।

उपयुक्त प्रक्रिया के आधार पर धनात्मक एवं ऋणात्मक परिवर्तन को प्रस्तुत करने के लिए सांख्यिकीय विधि का सहार लिया गया है। वर्ष 2012–13 में से 1992–93 के क्षेत्रफल प्रतिशत को घटाया गया है।

सवाई माधोपुर जिले में कृषि भूमि उपयोग सन् 1992–93 से 2012–13

सारणी संख्या 3.1

क्र सं.	भूमि उपयोग	1992–93		2012–13		1992से 2012में आया परिवर्तन (प्रतिशत में)
		क्षेत्रफल हेक्टेयर में	क्षेत्रफल प्रतिशत में	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	क्षेत्रफल प्रतिशत में	
1	वन	239463	22.74	81605	16.38	–6.44
2	कृषि अनुपलब्ध भूमि	166299	15.80	64702	12.99	–2.81
3	कृषि अयोग्य भूमि	92047	8.74	37098	8.05	–1.28
4	परती भूमि	136236	12.94	21738	4.36	–8.58
5	वास्तविक बोया गया क्षेत्र	418686	39.78	292002	58.69	+18.85
6	कुल बोया गया क्षेत्र	499946	47.50	400428	80.42	+32.92
7	दो फसली	81260	7.71	108226	21.13	+14.06
8	कुल भौगोलिक क्षेत्र	1052731	100	497947	100	

स्त्रोतः– भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

® कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का प्रतिशत।

@ वास्तविक बोये गये क्षेत्रफल का प्रतिशत।

जिले में कृषि भूमि उपयोग में सन् 1992–93 से 2012–13 में आया परिवर्तन

सवाई माधोपुर जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 497947 हेक्टेयर है। आरेख सं. 3.1 के अनुसार जिले में 16.30 प्रतिशत वन, 12.99 प्रतिशत कृषि अनुपलब्ध भूमि, 8.05 प्रतिशत कृषि अयोग्य भूमि, 4.36 प्रतिशत परती भूमि व 58.69 प्रतिशत वास्तविक बोया गया क्षेत्र है। गत 20 वर्षो से अधिक है। जिले में 1992–93 से 2012–13 में भूमि

उपयोग प्रतिरुप में काफी हद तक परिवर्तन हुआ है। सन् 1992–93 में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 39.78 प्रतिशत था जो बढ़कर 2012–13 में 58.69 प्रतिशत हो गया तथा जिले में इन दो दशकों में 18.85 प्रतिशत की वृद्धि हुई इसके साथ–साथ दो फसलीय क्षेत्र में 14.26 प्रतिशत की वृद्धि हुई।[12] जिले में वास्तविक बोये गये क्षेत्र में वृद्धि का प्रमुख कारण वन क्षेत्र, कृषि अनुपलब्ध कृषि, अयोग्य भूमि व परत भूमि में क्रमशः 6.44, 2.81 , 1.28 , 8.58 प्रतिशत की कमी हुई है। (सारणी संख्या 3.1) जो कृषि विकास स्तर को प्रभावित करता है। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि जिले की कृषि व्यवस्था विकास की ओर उन्मुख है।

आरेख संख्या 3.1

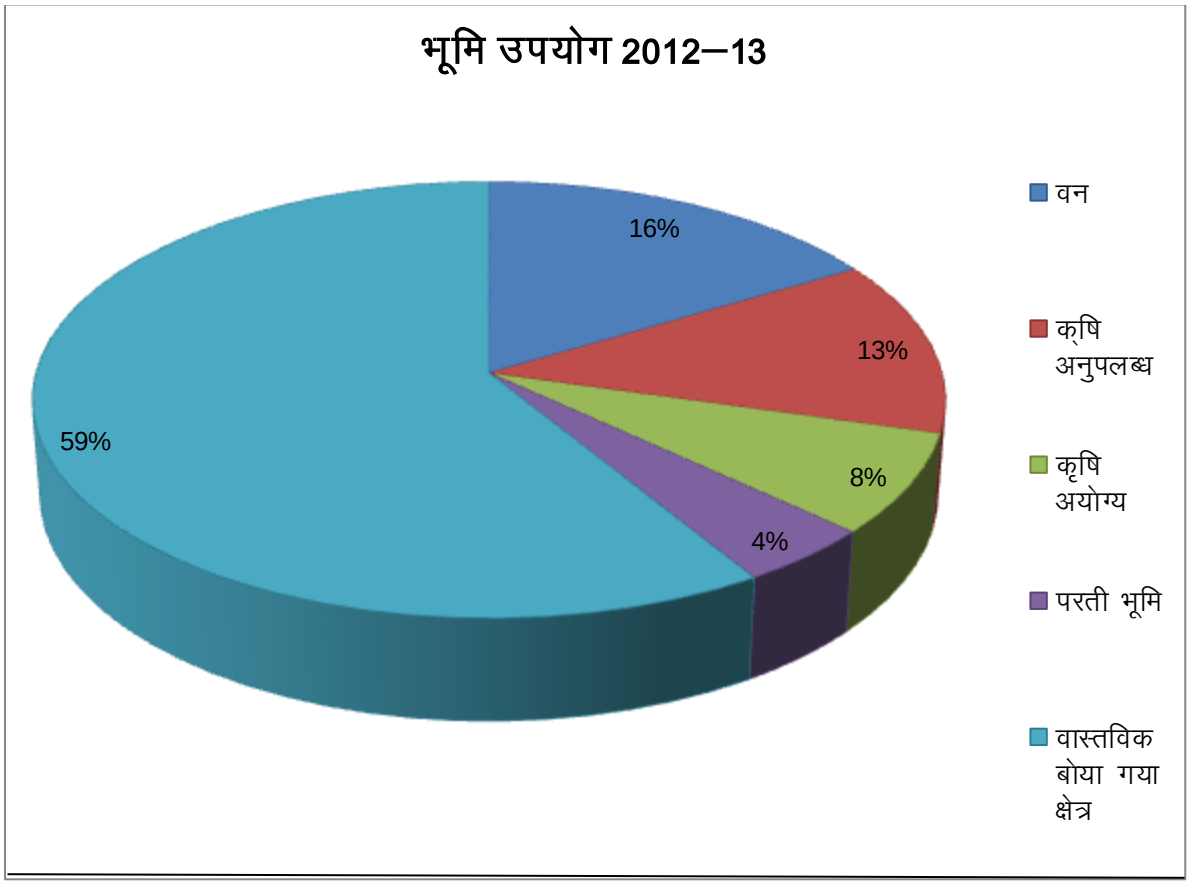

वन क्षेत्र

वातावरण को सुरक्षित रखने, ऊर्जा के स्त्रोतों में वृद्धि करने तथा चारे की पूर्ति करने व खाद्य संसाधनों को बढ़ाने हेतु विधमान प्राकृतिक सम्पदा अर्थव्यवस्था में बहुत अधिक महत्त्व रखती है। वनों के अन्तर्गत जिले में कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 16.38 प्रतिशत हैं। जबकि पर्यावरण को सन्तुलित बनाये रखने के लिए सरकार द्वारा घोषित वन नीति के अनुसार किसी भी प्रदेश में उसके कुल क्षेत्रफल का 33 प्रतिशत क्षेत्र वनों के अन्तर्गत होना चाहिए।[12] हालांकि जिले में गत 20 वर्षो में वनों

MAP No. 3.1

DISTRIBUTION OF FOREST IN

SAWAI MADHOPUR DISTRICT

INDEX **2012-13**

AS% OF TOTAL AREA

- < - 10
- 10 - 20
- 20 - 30
- 30 - 40
- 40 – <

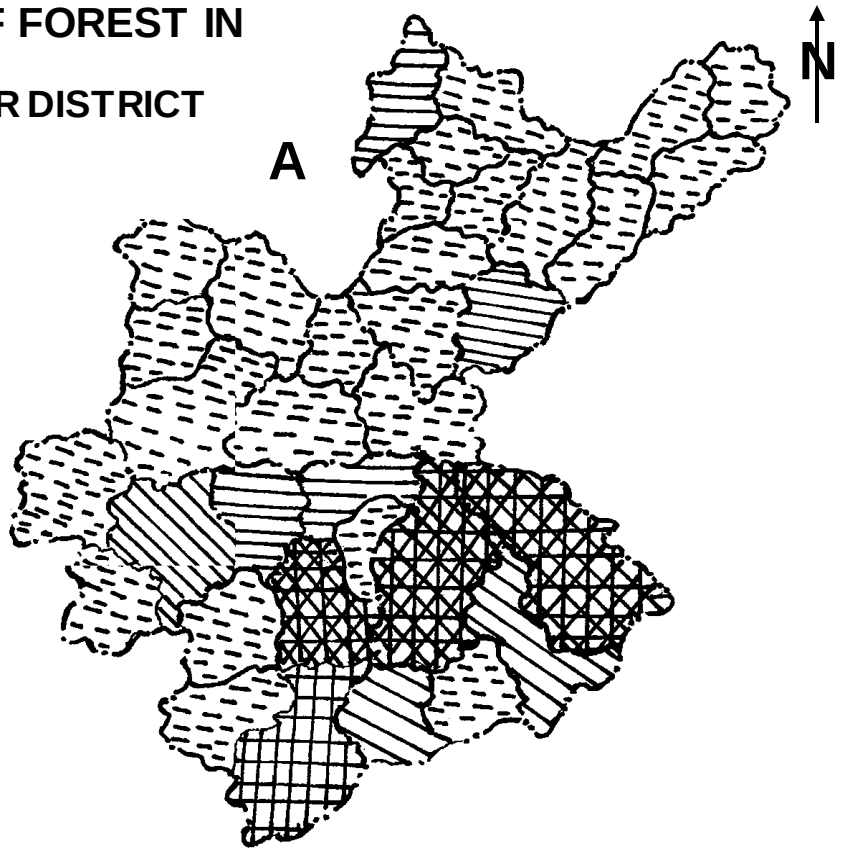

CHANGING IN DISTRIBUTION OF FOREST 1992-93 TO 2012-13

INDEX

- 5 – <
- < - 5

INCREASE

DECREA

- 6 – <
- 4 - 6
- 4 - 6
- < - 4

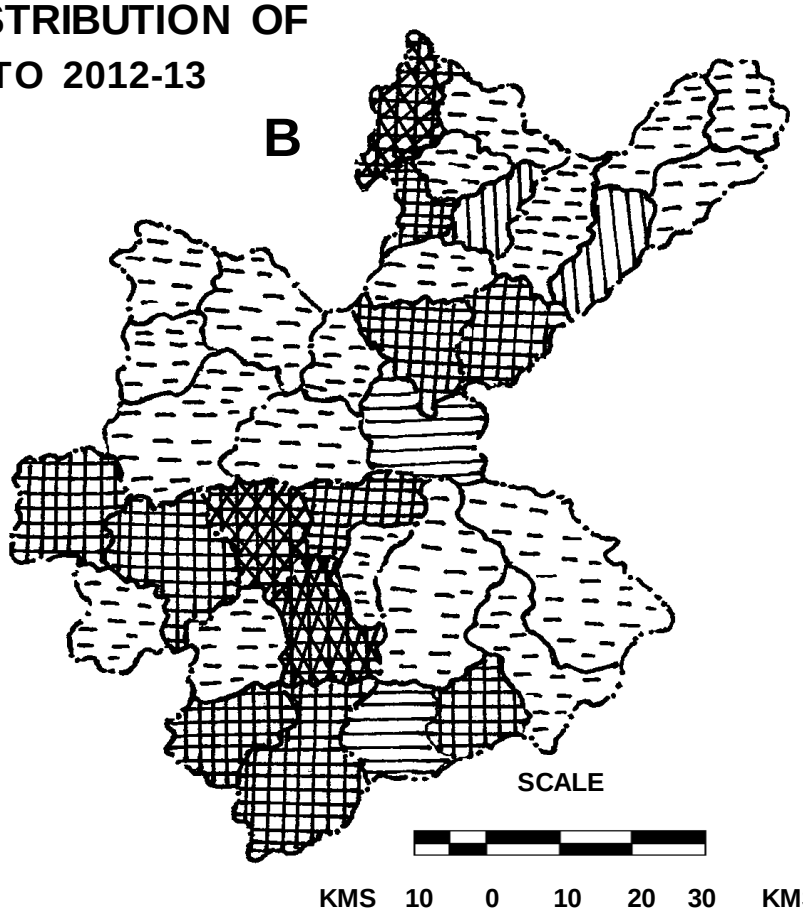

I

FLATE No. 2

II

पड़त भूमि

वन क्षेत्र

के क्षेत्र में 6.44 प्रतिशत की कमी हुई है। (सारणी संख्या 3.1) लेकिन जिले में 2012–13 में 16.38 प्रतिशत जो राजस्थान के कुल वन क्षेत्र 9.78 प्रतिशत से कहीं अधिक है। जिले में सार्वाधिक वन क्षेत्र दक्षिण– पूर्वी भाग में स्थित है जो कि सवाई माधोपुर, खण्डार व बालेर भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों के अन्तर्गत है। यहाँ कुल भौगोलिक क्षेत्र का 40 से 60 प्रतिशत क्षेत्र वनों के अन्तर्गत है। (मानचित्र सं. 3.1**A**) दक्षिण–पूर्वा क्षेत्र में रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान स्थित होने के कारण वनों का संरक्षण तथा अरावली श्रेणी, विन्ध्यन श्रेणी व उच्च भूमियों में आरक्षित वन क्षेत्र होने से जिले का सर्वाधिक वनच्छादित क्षेत्र है। जिले के उत्तरी, उत्तरी–पूर्वी तथा पश्चिमी क्षेत्रों में सबसे कम वन क्षेत्र जो 10 प्रतिशत से कम पाया जाता है। इन क्षेत्रों में शुद्ध बोया गये क्षेत्र की अधिकता कम वन क्षेत्र का कारण है। भारत और राजस्थान का औसत वन क्षेत्र क्रमशः 19.78 व 9.18 प्रतिशत है। सवाई माधोपुर जिले का वन क्षेत्र राष्ट्र के वन क्षेत्र से कम है। लेकिन राज्य के औसत वन क्षेत्र से अधिक है। राष्ट्रीय वन नीति 1952 के अनुसार 33 प्रतिशत भू–भाग पर वन होने चाहिए। इस दृष्टि से जिले में वन क्षेत्र बहुत कम पाया जाता है। अतः पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए यहाँ वनों का विस्तार किया जाना अत्यन्त आवश्यक हैं।

सन् 1992–93 से 2012–13 के दोहरान वन क्षेत्र में आया परिवर्तन

जिले में सन् 1992–93 में 239463 हेक्टेयर क्षेत्र पर वनों का विस्तार था जो कि कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 22.74 प्रतिशत है। सन् 2012–13 के अन्तर्गत वन क्षेत्र घटकर 81605 हेक्टेयर रहे गया। जो कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 16.38 प्रतिशत है। सन् 1992–93 से 2012–13 के दौहरान वन क्षेत्र में 6.44 प्रतिशत कमी हुई। जिले में आयी कमी का मुख्य कारण सवाई माधोपुर जिले का विभाजन कर दौसा (1992) तथा करौली (1997) जिलों का सृजन रहा है। मानचित्र संख्या 3.1B से स्पष्ट है कि सन् 1992–93 से 2012–13 के दोहरान जिले के वन क्षेत्र में सर्वाधिक कमी उत्तरी क्षेत्रों में हुई। यहाँ इस दौहरान वन क्षेत्रों में 6 प्रतिशत से अधिक कमी हुई। इस का प्रमुख कारण वास्तविक बोया गया व अकृषि भूमि में वृद्धि रहा है। दो दशकों के दौहरान जिले के वन क्षेत्र में सर्वाधिक वृद्धि दक्षिण तथा मध्यवर्ति क्षेत्रों में हुई है। इस वृद्धि का कारण रणथम्भौर राष्ट्रीय उधान के कुल भौगोलिक क्षेत्र में विस्तार, सवाई मानसिंह अभ्यारण एवं जिले में अवस्तित अरावली श्रेणी चम्बल व बनास नदी बेसीन के बीहड़ एवं उच्च भूमियों में वनों का विस्तार अधिक हुआ है।

कृषि अनुपलब्ध भूमि

इस वर्ग में उस भूमि को शामिल किया जाता है जो कि जुताई के अयोग्य है। अर्थात जो कृषि के अलावा अन्य वर्गों में शामिल की जाती है। कृषि अयोग्य भूमि पर कृषि कार्य नहीं होता है। इस प्रकार की भूमि पर अन्य कार्य सम्पन्न किये जाते है। इसलिए इस प्रकार की भूमि को दो उप वर्गों में वर्गीकृत किया गया है–

MAP No. 3.2

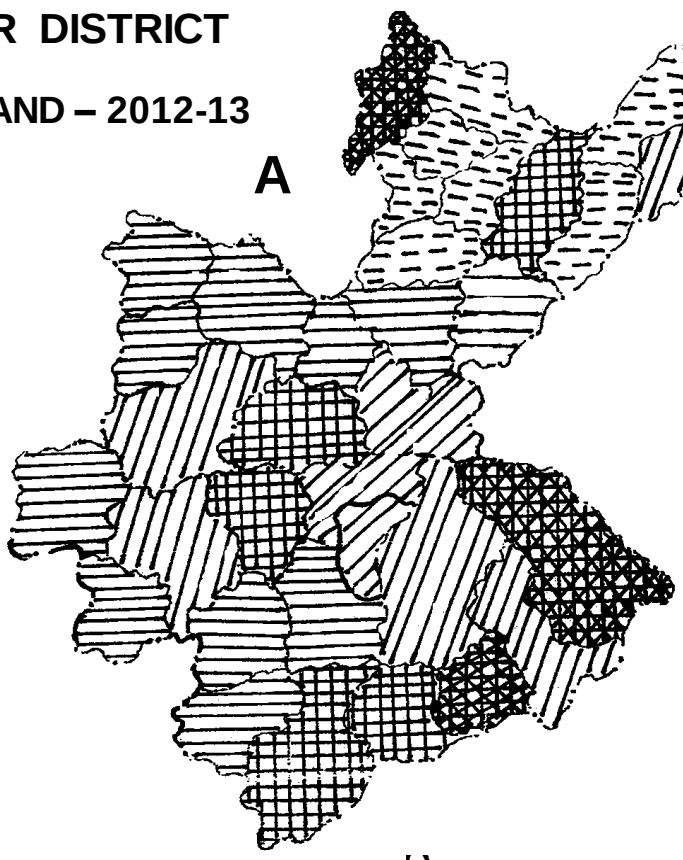

SAWAI MADHOPUR DISTRICT
NON CULTIVABLE LAND – 2012-13
A
N
INDEX
AS% OF TOTAL AREA
< - 8
8 - 12
12 - 16
16 - 20
20 – <
CHANGING IN NON CULTIVABLE
LAND 1992-93 To 2012-13
B
INDEX
5 – <
< - 5
INCREASE
DECREASE
8 – <
6 - 8
4 - 6
< - 4
SCALE
KMS
10 0 10 20 30
KMS

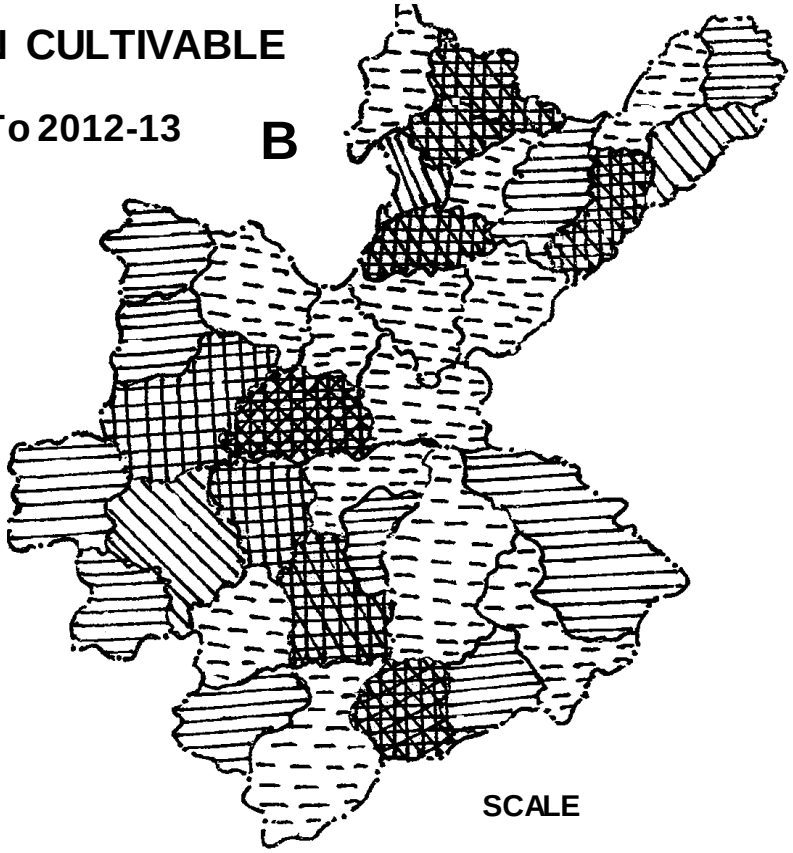

अ. वह भूमि जो गैर कृषि उपयोग के अन्तर्गत आती है, जैसे कि सड़क, रेलमार्ग, नहरें , कल कारखानों व अधिवास आदि।

ब. दुसरे वर्ग में गैर जुताई वाली भूमि आती है जिसमे पर्वतीय क्षेत्र आदि को सम्मिलित किया जाता है।

सारणी संख्या 3.1 से स्पष्ट होता है कि जिले में सन् 2012–13 कृषि अनुपलब्ध भूमि 64702 हेक्टेयर थी जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 12.99 प्रतिशत है। जिले में कृषि अयोग्य भूमि में असमानता पाई जाती है। इस प्रकार की भूमि का सर्वाधिक प्रतिशत दक्षिण क्षेत्र में 20 प्रतिशत से अधिक है। इस का प्रमुख कारण पर्वतीय व पठारी भूमि की अधिकता है। सबसे कम उत्तरी भाग में 8 प्रतिशत से भी कम है व उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में 12 प्रतिशत से कम पाई जाती है। क्योंकि चारागाह व कृषि योग्य भूमि की अधिकता है। (मानचित्र सं. 3.2A)

कृषि अनुपलब्ध भूमि में आया परिवर्तन

सन् 1992–93 में कृषि अयोग्य भूमि 15.8 प्रतिशत थी जो घटकर सन् 2012–13 में 12.99 रहे गई। जिले में इस प्रकार की भूमि के क्षेत्र में 2.81 प्रतिशत की कमी हुई है। मानचित्र संख्या 2.2**B** के अनुसार जिले में दो दशकों में सर्वाधिक कमी पिपलवाडा व सूरवाल भूअभिलेख निरक्षक वृतों में हुई। यहाँ 8 प्रतिशत से अधिक कमी हुई। इस का प्रमुख कारण कृषि भूमि में वृद्धि रही है। सबसे कम कमी दक्षिण व मध्य वृर्ति क्षेत्र में हुई। जिले में सवाई माधोपुर भूभिलेख निरीक्षक वृत में 5 प्रतिशत से अधिक कृषि अनुपलब्ध भूमि की वृद्धि हुई इस का प्रमुख कारण धरातल पहाड़ी व उबड़–खाबड़ होने के कारण अधिकांश क्षेत्र कृषि के लिए उपयुक्त नहीं है। जिले के अधिकांश भूअभिलेख निरीक्षक वृतों में कृषि अनुपलब्ध भूमि में 4 प्रतिशत से भी कम कमी हुई। इस का प्रमुख कारण कृषि भूमि में वृद्धि होना रहा है। जिले में वृद्धि का कारण अधिवास व सड़कों का निर्माण रहा है।

कृषि अयोग्य भूमि

कृषि अयोग्य भूमि से तात्पर्य उस भूमि से है जो कि वर्तमान समय में कृषि के लिए उपयुक्त ढ़ग से काम में नहीं आ रही हो इस भूमि को भविष्य में उपयुक्त तकनीकी के माध्यम से कृषि कार्यों में लिया जा सकता है। इस वर्ग में स्थाई चारागाह, बाग–बगीचों की भूमि एवं कृषि योग्य बेकार पड़ी हुई भूमि शामिल की जाती है। जिले में इस प्रकार की भूमि का वितरण असमान पाया जाता है। सन् 2012–13 में कृषि अयोग्य भूमि का कुल भौगोलिक क्षेत्र का 7.45 प्रतिशत है। मानचित्र संख्या 3.3**A** से स्पष्ट है कि इस प्रकार की भूमि का सबसे अधिक क्षेत्र जिले के उत्तरी भाग में है। यहाँ चारागाह भूमि की अधिकता एवं सिंचाई के अभाव में कृषि योग्य बंजर भूमि की अधिकता है। इस क्षेत्र में 12 प्रतिशत से अधिक कृषि अयोग्य भूमि है व मध्य वृति भाग में 8 प्रतिशत है। जिले के दक्षिण व दक्षिण–पूर्वी क्षेत्र में कृषि अयोग्य भूमि को कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित किये जाने से जोत रहित अर्थात कृषि अयोग्य भूमि का यहाँ 6 प्रतिशत से कम है।

MAP No. 3.3

SAWAI MADHOPUR DISTRICT IN
FALLOW LAND
A
INDEX
2012-13
AS% OF TOTAL AREA
< - 6
6 - 8
8 - 10
10 - 12
12 - <
N
CHANGING IN FALLOW LAND
B
INDEX
1992-93 TO 2012-13
4 - <
< - 4
INCREASE
DECREASE
6 - <
4 - 4
2 - 4
< - 2
SCALE
KMS
10 0 10 20 30
KMS

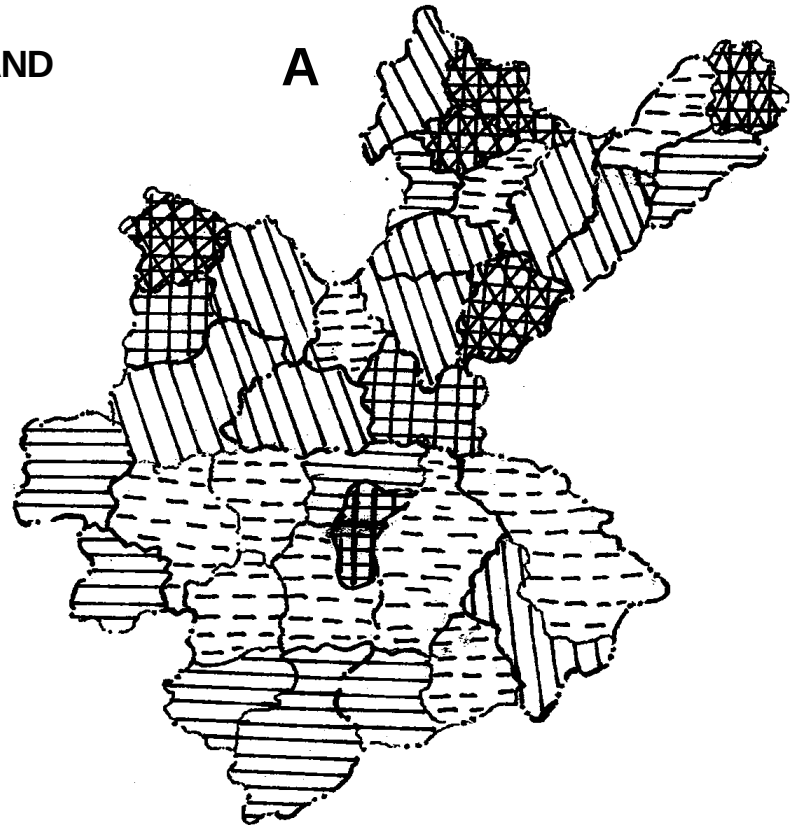

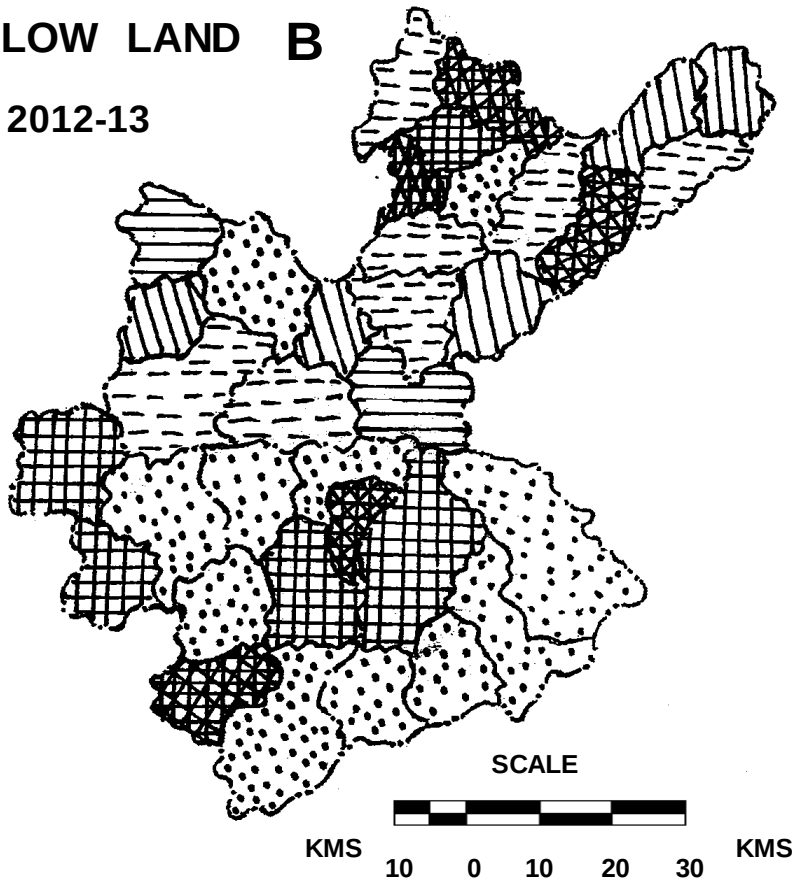

FLATE No. 3

I

कृषि योग्य बंजड़ भूमि

II

कृषि अयोग्य भूमि

कृषि अयोग्य भूमि में आया परिवर्तन

जिले में गत दो दशकों में कृषि अयोग्य भूमि में 1.28 प्रतिशत की कमी हुई है, जो कि राज्य सरकार द्वारा समय–समय पर कृषि बेकार भूमि को कृषि के लिए आवंटित करने के परिणाम स्वरुप हुई है। सन् 1992–93 से 2012–13 के दोहरान जिले में सर्वाधिक कमी खण्ड़ीप, पिलौदा व मलारना डूंगर भू अभिलेख वृतों में 6 प्रतिशत से अधिक कमी हुई है। पूर्वी भाग में 4 से 6 प्रतिशत की कमी हुई जबकि मध्यवृति भाग में 2 से 4 प्रतिशत की कमी रही है। इन 20 वर्षों में जिले के दक्षिणी–पूर्वी भाग में 2 प्रतिशत से भी कम हुई है। (मानचित्र संख्या 3.3B) जिले में कृषि अयोग्य भूमि में विस्तार में कमी का मुख्य कारण सिंचाई सुविधाओं का विस्तार होना है। जिले में इस वर्ग में वृद्धि दक्षिण–पश्चिम व उत्तरी भाग में 4 प्रतिशत से अधिक हुई है। इस भाग में चारागाह भूमि की अधिकता एवं सिंचाई के अभाव में कृषि अयोग्य भूमि की अधिकता है।

परती भूमि

परती भूमि में चालू तथा पुरातन पड़त भूमि शामिल की जाती है। चालू पड़त ऐसी भूमि से है जिसमें एक कृषि वर्ष में कोई भी फसल नहीं बोई जाती है, जबकि पुरातन पड़त वह भूमि है जिसमें परती पड़ने की अवधि दो से पाँच वर्ष होती है।[13] वर्तमान में जिले में 4.36 प्रतिशत पड़त भूमि के अन्तर्गत है, जिसमे से 1.93 प्रतिशत चालू पड़त व 2.43 प्रतिशत पुरातन पड़त है।

मानचित्र संख्या 2.4A से स्पष्ट है कि जिले में सन् 2012–13 में सर्वाधिक परती भूमि पश्चिम व उत्तरी–पूर्वी क्षेत्र में शिवाड़ व कुश्लता भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में है। यहाँ 8 प्रतिशत से अधिक परती भूमि है। इसका प्रमुख कारण यहाँ वर्षा का अभाव व सिंचाई साधनों का समुचित विकास न होना है। जिले 5 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में 6 से 8 प्रतिशत परती भूमि है जबकि 9 भू अभिलेख वृतों में 4 से 6 प्रतिशत के मध्य परती भूमि है। सबसे कम परती भूमि दक्षिण–पूर्व क्षेत्र में 2 प्रतिशत से भी कम परती भूमि क्षेत्र है। इस का प्रमुख कारण वन व कृषि अयोग्य भूमि की अधिकता है।

जिले में परती भूमि में आया परिवर्तन

जिले में सन् 1992–93 से 2012–13 के दोहरान परती भूमि क्षेत्र में अत्याधिक परिवर्तन हुआ है। सन् 1992–93 में परती भूमि 12.94 प्रतिशत थी जो घटकर 2012–13 में 4.36 प्रतिशत रहे गई। गत 20 वर्षों में जिले में 8.58 प्रतिशत की कमी हुई जो जिले के कृषि विकास स्तर को दर्शाता है। (मानचित्र संख्या 3.4B) से स्पष्ट है कि दो दशकों में सर्वाधिक कमी जिले के पश्चिम व उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में 20 प्रतिशत से अधिक कमी हुई है। इस कमी का प्रमुख कारण सिंचाई साधनों का समुचित विकास, उच्च कृषि तकनीकी एवं यंत्रिकरण रहा है। जिले के 4 भू अभिलेख वृतों में 15 से 20 प्रतिशत कमी हुई। तथा सबसे कम दक्षिणी–पूर्वी क्षेत्र में हुई है। यहाँ परती भूमि में 2 प्रतिशत से भी कम हुई है। जिले में सबसे कम कमी

MAP No. 3.4

CULTIVABLE WESTE LAND IN SAWAI MADHOPUR DISTRICT

A

INDEX **2012-13**

AS% OF TOTAL AREA

- < - 2
- 2 - 4
- 4 - 6
- 6 - 8
- 8 – <

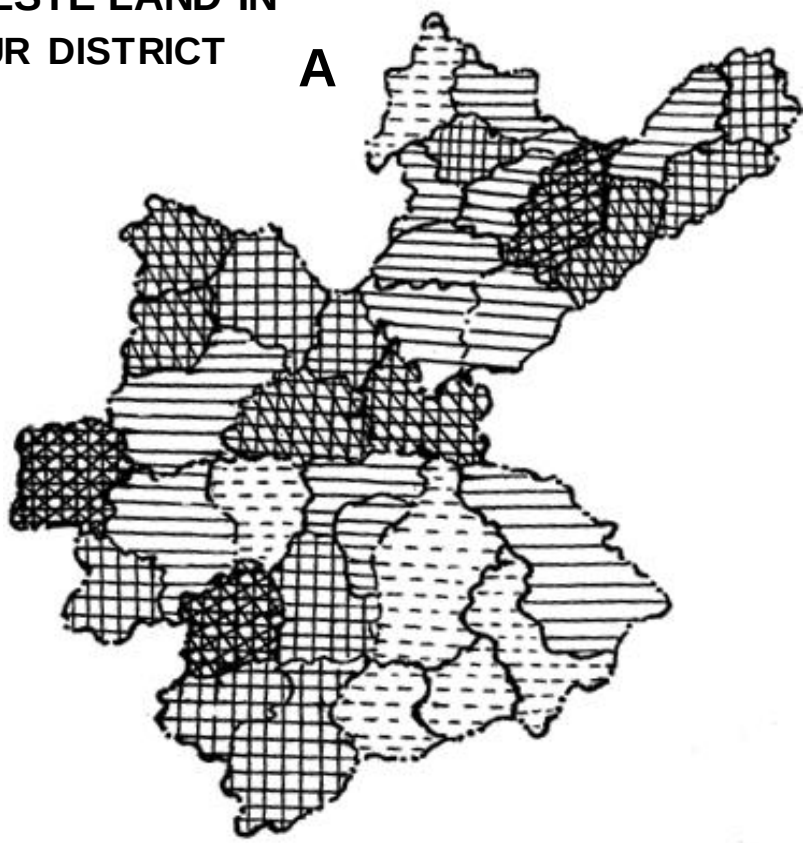

CHANGING IN CULTIVABLE WESTE LAND

1992-93 TO 2012-13

B

INDEX

DECREASE

- 20 – <
- 15 - 20
- 10 - 15
- 5 - 10
- < - 5

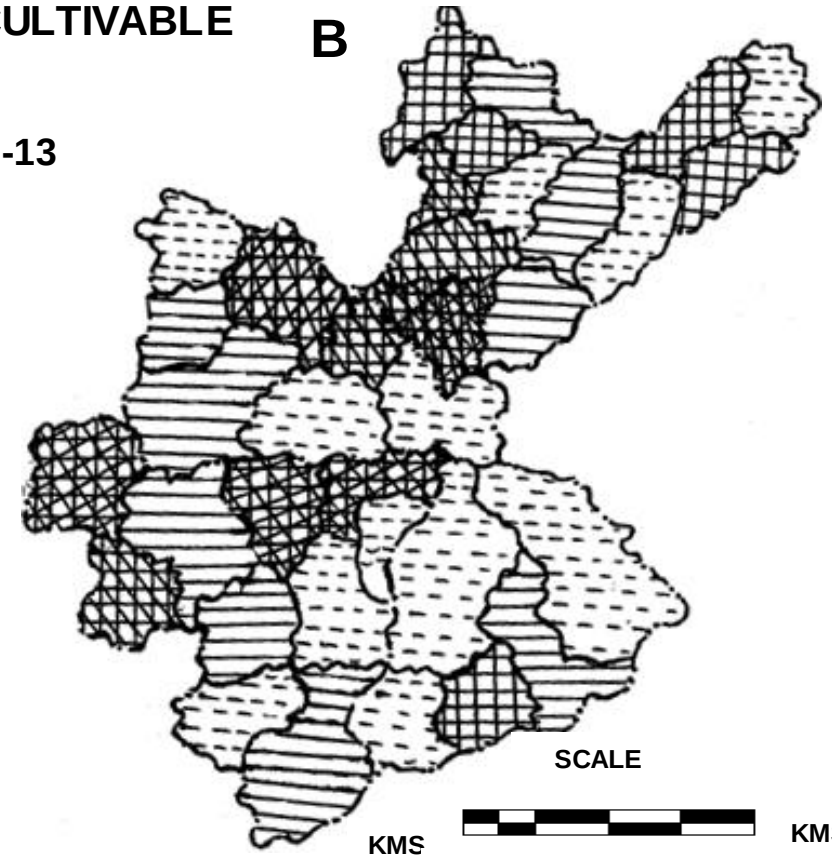

FLATE No. 4

I

II चारागाह क्षेत्र

परती भूमि में खरपतवार

सवाई माधोपुर भूअभिलेख निरीक्षक वृत 0.41 प्रतिशत की कमी हुई है। इस का प्रमुख कारण वन क्षेत्र की अधिकता कृषि अयोग्य व कृषि अनुपलब्ध क्षेत्र में वृद्धि है।

वास्तविक बोया गया क्षेत्र

जिले में इस प्रकार की भूमि का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सिंचाई सुविधाओं के विकास और रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से वास्ताविक बोये गये क्षेत्र में वृद्धि हो रही है। इसके अन्तर्गत सिंचित व असिंचित दोनों प्रकार की भूमि को शामिल किया जाता है। सन् 1992–93 में जिले में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 418686 हेक्टेयर था। जो कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 39.78 प्रतिशत है। जो 2012–13 में बढ़कर 292002 हेक्टेयर हो (सारणी संख्या 3.1) गया है। जिले के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 58.69 प्रतिशत है। जिले में वास्तविक बोये गये क्षेत्र का वितरण असामान्य है।

(मानचित्र संख्या 3.5A) जिले के उत्तर एवं पश्चिमी भाग में वास्तविक बोया गया क्षेत्र का प्रतिशत सर्वाधिक है। इस क्षेत्र में 70 प्रतिशत से भी अधिक वास्तविक बोये गये क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। इस क्षेत्र में वास्तविक बोये गये क्षेत्र के अधिक होने का प्रमुख कारण समतल धरातल, उपजाऊ मिट्टी के साथ–साथ सिंचाई सुविधाओं व तकनीकी विकास की मात्रा है। पश्चिमी क्षेत्र में 60 से 70 प्रतिशत वास्तविक बोया क्षेत्र है। जिले के दक्षिण व दक्षिणी पूर्वी भाग में सबसे कम वास्तविक बोया गया क्षेत्र है। जिले के सवाई माधोपुर, खण्डार, बालेर व फलौदी भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में यहाँ 40 प्रतिशत से भी कम वास्तविक बोया गया क्षेत्र है। इस का प्रमुख कारण अरावली व विन्ध्यन पर्वत, उच्चभूमि, रणथम्भौर टाइगर प्रोजक्ट तथा चम्बल बिहड़ व बनास बेसिन आदि है। सवाई माधोपुर भू–अभिलेख निरीक्षक वृत में 16.77 प्रतिशत क्षेत्र वास्तविक बोये गये क्षेत्र के अन्तर्गत है। इसका प्रमुख कारण रणथम्भौर टाइगर पोजेक्ट, वन क्षेत्र, कृषि अयोग्य व कृषि अनुपलब्ध भूमि की अधिकता है। (मानचित्र संख्या 3.5A)

वास्तविक बोये गये क्षेत्र में परिवर्तन

सवाई माधोपुर जिले में सन् 1992–93 से 2012–13 के दौहरान वास्तविक बोये गये क्षेत्र में अत्याधिक परिवर्तन आया है। जिले में सन् 1992–93 में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 39.78 प्रतिशत था जो सन् 2012–13 में बढ़कर 58.69 प्रतिशत हो गया। गत 20 वर्षों में जिले में 18.85 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। मानचित्र संख्या 3.6B से स्पष्ट है कि जिले में दो दशकों में सर्वाधिक वृद्धि उत्तर व उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्र में 20 प्रतिशत से अधिक हुई। इस का प्रमुख कारण सिंचाई सुविधाओं, रासायनिक उर्वरकों, तकनीकीकरण आदि का विकास ,परती भूमि, कृषि अयोग्य भूमि को कृषि भूमि में परिर्वतित करना है। सबसे कम वृद्धि दक्षिणी–पश्चिमी भाग में 12 प्रतिशत से भी कम हुई है। इन दो दशकों में जिले में सवाई माधोपुर भू–अभिलेख निरीक्षक वृत में 16.99 प्रतिशत वास्तविक बोये गये क्षेत्र में कमी हुई। इस का प्रमुख कारण सवाई मानसिह अभ्यारण व रणथम्भौर टाइगर प्रोजेक्ट के कोर क्षेत्र में विस्तार है। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि जिले में गत 20 वर्षो के दोहरान वास्तविक बोये गये क्षेत्र में अधिकांश क्षेत्र में वृद्धि हुई है। जिसका प्रमुख कारण

MAP No. 3.5

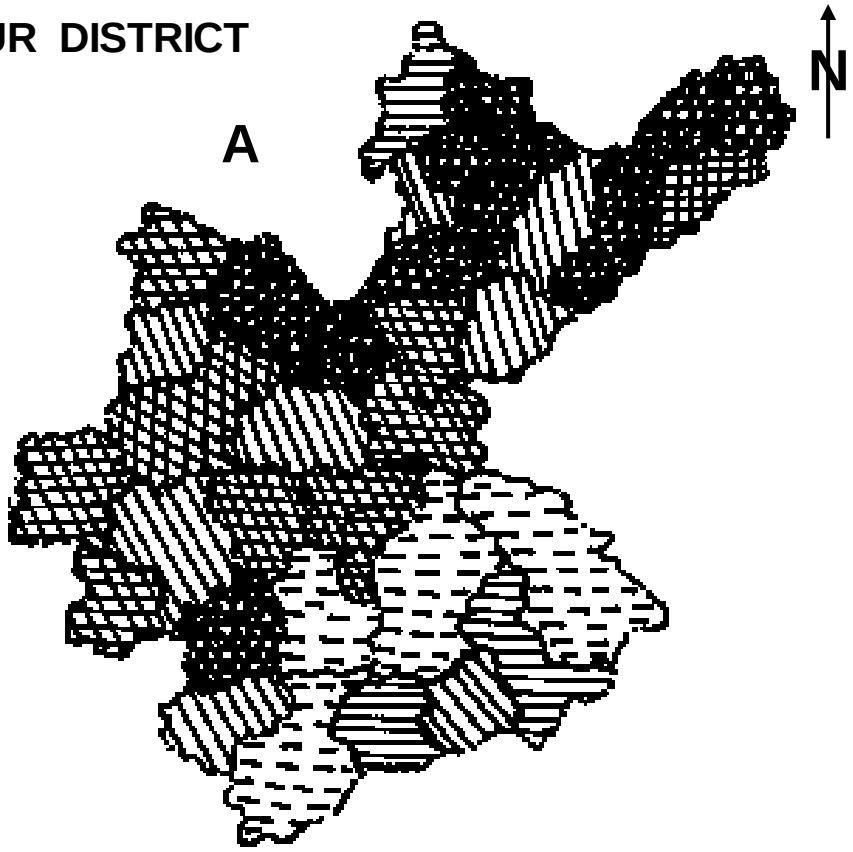

SAWAI MADHOPUR DISTRICT
NET SOWN AREA
A
INDEX
2012-13
AS% OF TOTAL
< - 40
40 - 50
50 - 60
60 - 70
70 - <
N
CHANGING IN NET SOWN AREA
1992-93 to 2012-13
B
INDEX
20 - <
16 - 20
12 - 16
< - 12
INCREASE
DECREASE
10 - <
SCALE
KMS
10 0 10 20 30
KMS

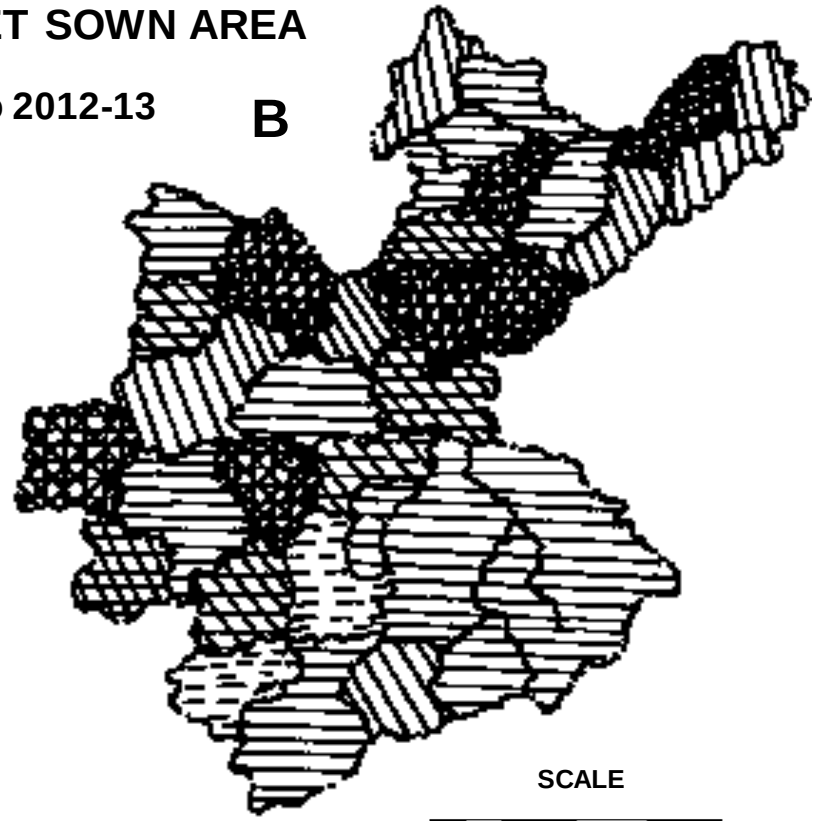

सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि, सरकारी योजना के अनुसार भूमिहिनों को भूमि का आवांटन किया जाना आदि कारणों ने प्रभावित किया है।

समस्त बोया गया क्षेत्र

कुल बोय गये क्षेत्र में शुद्व बोये गये एवं दो फसली क्षेत्र को शामिल किया जाता है। जिले के समस्त बोये गये क्षेत्र का प्रतिशत राज्य के समस्त बोये गये क्षेत्र के प्रतिशत से अधिक है। (सारणी संख्या 3.1) के अनुसार जिले के समस्त बोये गये क्षेत्र का 80.42 प्रतिशत है। जिले में सन् 1992–93 में 47.50 प्रतिशत समस्त बोया क्षेत्र था जो बढ़कर सन् 2012–13 में 80.42 प्रतिशत हो गया। गत 20 वर्षो में जिले में 32.92 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि जिले में समस्त कृषि भूमि में निरन्तर वृद्धि होती रही है। जिले की प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक दशाओं के सुदृढ़ होने के फलस्वरुप वृद्धि हुई क्योंकि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भूमि आयोग के अन्तर्गत बंजर भूमि का आवाटंन भूमिहिनों को किया जाना, बंजर भूमि का अधिकांश भाग शुद्ध कृषि भूमि में परिवर्तित किया जाना। सिंचाई साधनों का विकास किया जाना है।

समस्त बोया गया क्षेत्र में आया परिवर्तन

मानचित्र संख्या 2.6B से स्पष्ट है कि जिले में गत 20 वर्षों में इस वर्ग में सर्वाधिक वृद्धि उत्तरी–पूर्वी व दक्षिण–पूर्वी भागों के अन्तर्गत हुई हैं। यहाँ 25 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई। इस का प्रमुख कारण बंजर भूमि को कृषि भूमि में परिवर्तित करना एवं सिंचाई साधनों का समुचित विकास रहा है। जिले में इस दौहरान सबसे कम वृद्धि पूर्वी–पश्चिमी तथा मध्य वृर्ति क्षेत्रों में हुई। यहाँ 15 प्रतिशत से कम वृद्धि हुई। इस का प्रमुख कारण चम्बल बिहड़ व बनास बेसिन, अरावली व विन्ध्यन पर्वतमाला की उच्चभूमि रहा है।

दो फसलीय क्षेत्र

दो फसलीय क्षेत्र से तात्पर्य एक कृषि वर्ष में एक खेत में एक से अधिक बार फसलें बोने से है। सवाई माधोपुर जिले में वास्तविक बोये गये क्षेत्र का 21.77 प्रतिशत क्षेत्र दो फसलीय क्षेत्र के अन्तर्गत है। इस वर्ग में सर्वाधिक क्षेत्र जिले के उत्तरी व उत्तर–पूर्व क्षेत्र में है। यहां 50 प्रतिशत से अधिक दो फसलीय क्षेत्र है। इस क्षेत्र में सिंचाई की पर्याप्त सुविधाए होने के कारण दो फसलीय क्षेत्र अधिक पाया जाता है। जिले के दक्षिण पूर्व व दक्षिण पश्चिम क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधाओं का अभाव होने के कारण 20 प्रतिशत से कम दो फसलीय क्षेत्र है। (मानचित्र संख्या 3.9A)

दो फसलीय क्षेत्र में आया वरिवर्तन

गत दो दशकों में जिले में दो फसलीय क्षेत्र में अत्याधिक परिवर्तन हुआ है। सन् 1992–93 में दो फसलीय क्षेत्र 7.71 प्रतिशत था जो बढ़कर 2012–13 में 21.77

प्रतिशत हो गया है। इन 20 वर्षों में 14.06 प्रतिशत की वृद्धि हुई। सर्वाधिक वृद्धि दक्षिण व उत्तरी भाग में 25 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई है। इन भागों में नहरों, टूयूबल, नलकुपों के सिंचित क्षेत्र में वृद्धि होने से दो फसलीय क्षेत्र में अत्याधिक वृद्धि हुई है। जिले में सबसे कम वृद्धि दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्र में 15 प्रतिश्त से कम वृद्धि हुई है। इसका मूल कारण वर्षा की अनियमिता, अनिश्चिता व कम होना तथा सिंचाई सुविधाओं का अभाव है और शुष्क कृषि पद्धति के कारण अर्थात किसान अपने खेतों में खरीफ न पैदा कर उसकी अच्छी जूताई करता है और रबी फसल में किसान सरसों या अन्य फसलें पैदा करता है। किसान रबी की फसल अच्छी प्राप्त करने के लिए वर्षा काल में खेतों को खाली छोड़ देते है और उसकी अच्छी जुताई करते है। इस शुष्क कृषि पद्धति के कारण दो फसलीय क्षेत्र कम पाया जाता है। दो फसलीय क्षेत्र का विश्लेषण (मानचित्र संख्या 3.9B) दर्शाया गया है।

कृषि प्रतिरूप एवं कृषिगत लक्षण

जिले के कृषि विकास के अध्ययन में उस क्षेत्र के कृषिगत लक्षणों का अध्ययन भी आवश्यक हैं। जिले में कृषि स्वरूप को आर्थिक एवं सामाजिक कारकों के साथ क्षेत्र के भौगोलिक कारकों ने भी प्रभावित किया है। कृषि स्वरूप को विशेष रूप से आधुनिक सुविधाओं एवं जनसंख्या वृद्धि ने अधिक प्रभावित किया है। भौगोलिक कारक, फसलों की संख्या, उत्पादन मात्रा तथा फसलों के वितरण को प्रभावित करते है। जिले में मुख्य रूप से रबी एवं खरीफ की फसलें बोई जाती है।

कृषि भूगोल के अध्ययन में कृषि प्रारूप का तात्पर्य किसी क्षेत्र विशेष में शस्य गहनता एवं शस्य श्रेणीक्रम आदि का अध्ययन किया जाता है। क्षेत्र में कृषि उत्पादन में वृद्धि एवं कृषकों की आय में वृद्धि दोनों ही कृषि विकास स्तर में लाभदायक है। इसके साथ ही अधिक उत्पादन वाली लघुकालिक परिपक्व फसलों की किस्मों के अध्ययन की महत्ता और भी अधिक हो जाती है।

पिछले कुछ समय से सरकार के सहयोग से कृषि तकनीकी एवं आर्थिक घटकों में काफी परिवर्तन हुए। इस अध्ययन में केवल यह स्पष्ट किया गया है कि आधुनिक सुविधाओं के कारण कृषि प्रारूप एवं कृषि लक्षणों में क्या परिवर्तन आया हैं। किसी भी प्रदेश के लिए कृषि प्रारूप के सम्बन्ध में जब कोई विकास नीति तैयार करनी हो तो उस प्रदेश की वर्तमान विशेषताओं का अध्ययन आवश्यक है। अन्यथा भावी विकास योजना सफल नहीं हो सकती इस सन्दर्भ मे जिले की कृषि विशेषताओं का अध्ययन करना अति आवश्यक समझा हैं। जिसमें शस्य सघनता शस्य श्रेणी क्रम तथा शस्य स्वरूप आदि प्रमुख है

शस्य गहनता

शस्य गहनता से तात्पर्य कृषि वर्ष में शुद्ध काश्त क्षेत्रफल पर फसल उत्पादन के अवसरों का सम्बन्ध देखा जाता है। यदि वर्ष के अन्तर्गत शुद्ध काश्त क्षेंत्रफल पर एक ही बार फसल उगाई जाती है तो शस्य गहनता 100 प्रतिशत होगी। यदि शुद्ध काश्त क्षेत्रफल के समस्त भाग पर वर्ष में दो बार फसल उत्पादन कार्य किया जाता है तो शस्य गहनता 200 प्रतिशत होगी। यह जितनी गहनता कम होगी उतनी ही शुद्ध काश्त क्षेत्रफल भूमि उपयोग की क्षमता कम होगी एवं अधिक होने पर काश्त भूमि उपयोग की क्षमता भी उतनी ही अधिक होती है। अतः शस्य गहनता पर एक कृषि वर्ष में भूमि की अधिकतम दौहन की अवस्था को स्पष्ट करती है। वास्तव में यह कृषि तथा संसाधनों पर निर्भर करती है कि भूमि का अनुकूलतम उपयोग हो सकता है अथवा नहीं। शस्य गहनता सकल फसल क्षेत्र तथा शुद्ध फसल क्षेत्रफल के अनुपात को प्रतिशत में प्रकट करता है। भारत सरकार के कृषि निदेशालय द्वारा शस्य गहनता को मापने के लिए निम्न सुत्र उपयोग में लिया गया है[14]

शस्य गहनता सूचकांक $\frac{\text{कुल फसलीय क्षेत्र}}{\text{वास्तविक बोया क्षेत्र}} 100$

शस्य गहनता सघन कृषि के स्वरूप का सूचकांक भी है। वह फसलों के क्षेत्रीय विस्तार में वृद्धि को भी प्रकट करता है। शस्य गहनता जितनी अधिक होगी कृषि भूमि का उपयोग उतना ही अधिक होगा।

शस्य गहनता का वितरण

सारणी संख्या 3.2

क्रम संख्या	वर्ष	शस्य गहनता	परिर्वतन (प्रतिशत में)
1	1992–93	119.40	–
2	2002–03	126.51	+7.11
3	2008–09	133.33	+6.82
4	2012–13	137.13	+3.80

स्त्रोतः–भू अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

आरेख संख्या 3.2

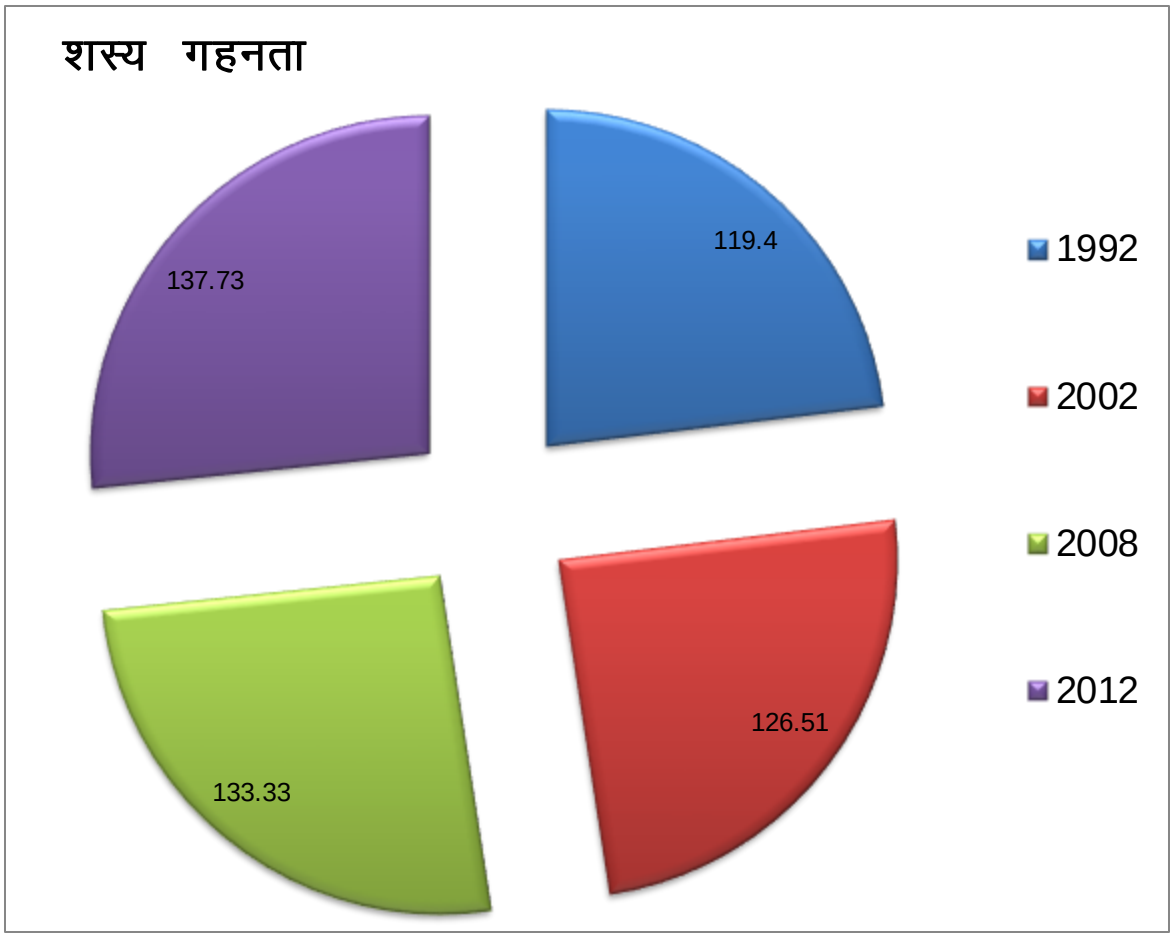

सारणी संख्या 3.2 के अनुसार जिले में शस्य गहनता सूचकांक 1992–93 में 119.40 प्रतिशत था, जो 2002–03 में बढ़कर 126.51 प्रतिशत होई गई व 2008–09 में 133.33 थी जो बढ़कर सन् 2012–13 में 137.13 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार जिले में शस्य तीव्रता में दो दशकों में 17.72 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इससे स्पष्ट है कि जिले की भूमि के दौहन में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है।

भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों के अनुसार शस्य गहनता का विश्लेषण करने से स्पष्ट है कि जिले में सन् 2012–13 में सर्वाधिक शस्य गहनता उत्तर व उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में है। यहाँ शस्य गहनता सूचकांक 150 से अधिक है। (मानचित्र संख्या 3.6**A**) इससे स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में दो फसलीय क्षेत्र अधिक है। इस का प्रमुख कारण उत्तरी क्षेत्र में सिंचाई सुविधाओं का विकास सबसे अधिक होना है। उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में 140 से 150 शस्य गहनता सूचकांक है। दक्षिण व दक्षिणी–पूर्व में शस्य गहनता सूचकांक 130 से 140 के मध्य पाया जाता है। पश्चिमी क्षेत्र में 120 से कम शस्य

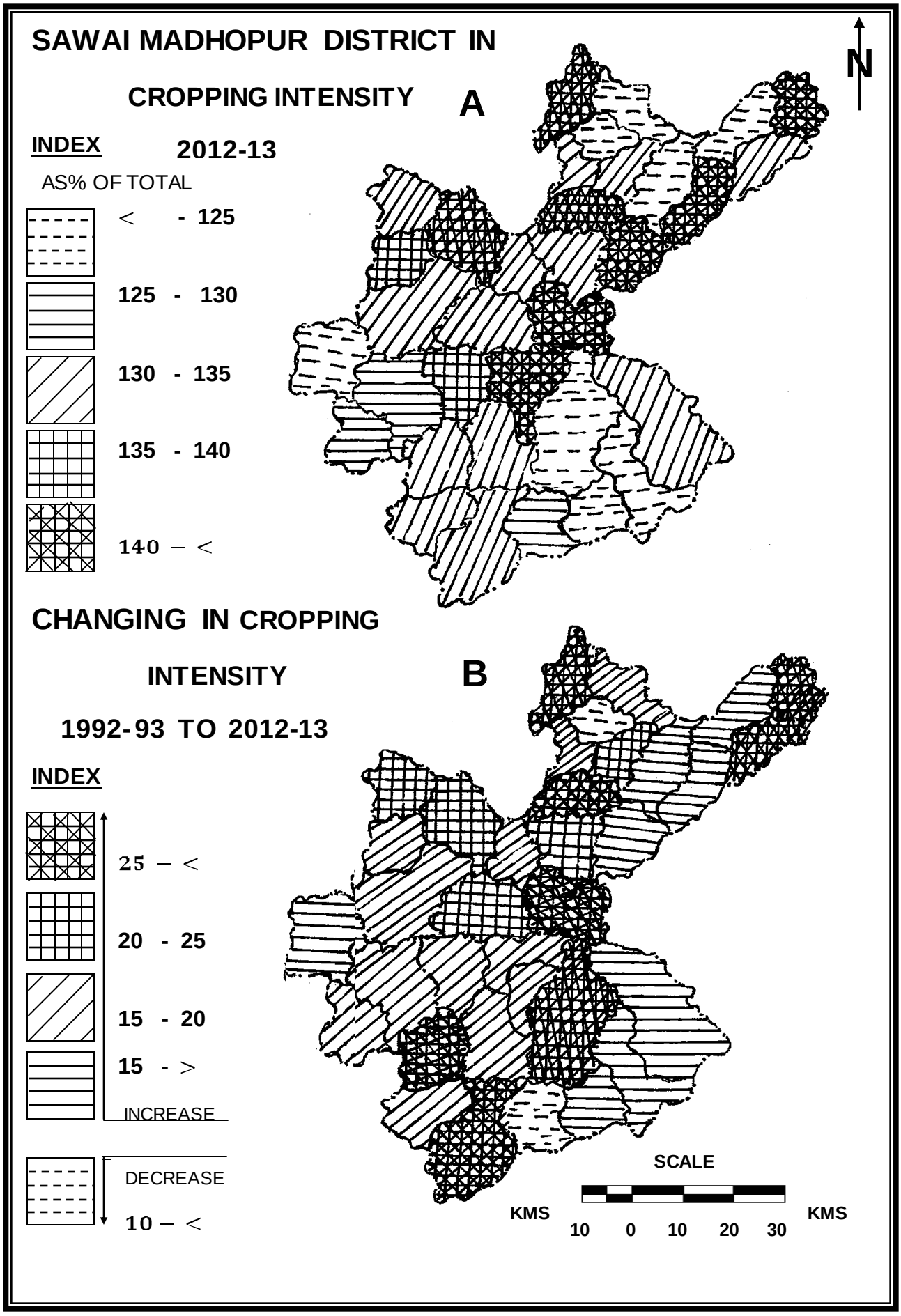
SAWAI MADHOPUR DISTRICT IN
CROPPING INTENSITY
A
INDEX
2012-13
AS% OF TOTAL
< - 125
125 - 130
130 - 135
135 - 140
140 – <
N
CHANGING IN CROPPING
INTENSITY
B
1992-93 TO 2012-13
INDEX
25 – <
20 - 25
15 - 20
15 - >
INCREASE
DECREASE
10 – <
SCALE
KMS
10 0 10 20 30
KMS

गहनता सूचकांक है। इन क्षेत्रों में शस्य गहनता सूचकांक कम होने का प्रमुख कारण वर्षा की कमी तथा सिंचाई सुविधा का अभाव है।

शस्य गहनता में आया परिवर्तन

सन् 1992–93 से 2012–13 के दौरान पूरे जिले में शस्य गहनता में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। मानचित्र संख्या 3.6**B** इसका प्रमुख कारण सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि होना है। दो दशकों में सबसे अधिक वृद्धि दक्षिण व उत्तरी क्षेत्रों में हुई है। यहाँ 25 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई है। जिले के इस क्षेत्र में सिंचाई के साधनों विशेषकर टूयूवल, नलकूप, नहरों के विकास के फलस्वरुप शस्य तीव्रता में अत्याधिक वृद्धि हुई है। जिले के उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्रों में शस्य गहनता 20 से 25 तक की वृद्धि हुई है। इन क्षेत्रों में भी सिंचाई के साधनों का विकास अपेक्षा कृत अधिक हुआ है। मध्यवृर्ती, पश्चिम व दक्षिणी–पश्चिमी क्षेत्रों में शस्य गहनता 15 से 20 तक की वृद्धि हुई है। जिले में सबसे कम वृद्धि दक्षिण–पूर्व व उत्तरी–पूर्वी क्षेत्रों में शस्य गहनता में 15 प्रतिशत से कम वृद्धि हुई है। इस का प्रमुख कारण वर्षा की कमी के साथ–साथ सिंचाई के समुचित साधनों के विकास का अभाव पाया जाता है (मानचित्र संख्या 3. 6B)।

शस्य श्रेणी क्रम

किसी कृषि वर्ष (जूलाई से जून) में किसी खेत या क्षेत्र अथवा स्थान पर जिस कृषि पद्धति का अनुकरण किया जाता है' उसे शस्य क्रम अथाव शस्य परम्परा कहते है। शस्य क्रम फसलों को उगाने का वार्षिक क्रम अथवा किसी स्थान या क्षेत्र की फसलों के उगाने की व्यवस्था को कहते है। शस्य श्रेणी क्रम के आधार पर भी कृषि प्रारूप का अध्ययन किया जा सकता है।[15] जबकि उन्नत कृषि व्यवस्था में फसलों के उत्पादन में प्रति हेक्टेयर वृद्धि होने से खाद्यय फसलें अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु पैदा की जाती है। शेष कृषि क्षेत्र में भौगोलिक परस्थितियों के अनुकूल होने के कारण तिलहन एवं दलहन के उत्पादन को प्राथमिकता दी जाने लगी हैं। क्योंकि तिलहन एवं दलहनों से खाद्य फसलों की तुलना में अधिक लाभ प्राप्त होता है।

इस प्रकार शस्य श्रेणी क्रम से आशय क्षेत्र में उत्पादित फसलों में प्राथमिक स्तर पर प्रमुख फसलों की जानकारी करना है। हर क्षेत्र में भौगोलिक दशाओं एवं अन्य कृषि कारणों से कुछ ही फसलें प्रमुख होती है। जिले में अधिकांश कृषि क्षेत्र यहाँ की प्रमुख फसलों के अन्तर्गत शामिल होता है।[16] सवाई माधोपुर जिले में शस्य श्रेणी में उन फसलों को लिया गया है जो कि कुल बोये क्षेत्र की तुलना में 15 प्रतिशत अधिक हो इस प्रकार प्रथम द्वितीय, तृतीय क्रम पर रखा गया है। जिले के शस्य श्रेणी क्रम वितरण सारणी संख्या 3.3 में दर्शाया गया है–

जिले में फसलों का शस्य श्रेणी क्रम का वितरण

सारणी संख्या 3.3

क्रम संख्या	वर्ष	प्रथम क्रम	द्वितीय क्रम	तृतीय क्रम
1	1992–93	बाजरा	सरसों	गेंहू
2	2002–03	बाजरा	गेंहू	सरसों
3	2008–09	सरसों	बाजरा	गेंहू
4	2012–13	सरसों	गेंहू	बाजरा

स्त्रोतः–भू अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि फसल शस्य श्रेणी क्रम के अध्ययन से ज्ञात होता है कि जहाँ 1992–93 में प्रथम क्रम पर बाजरा, द्वितीय क्रम पर सरसों तथा तृतीय क्रम पर गेंहू है। वहीं 2002–03 में बाजरा ने अपना स्थान बनाये हुएं है लेकिन गेंहू की फसल ने दुसरा स्थान बनाया है। वर्तमान समय में प्रथम क्रम पर सरसों का स्थान है, द्वितीय क्रम पर गेंहू ने अपना स्थान बना लिया है तथा तृतीय क्रम पर बाजरा है। उपर्युक्त फसल श्रेणी क्रम के अध्ययन से ज्ञात है कि ज्यो– ज्यो सिंचाई की सुविधाओं में बढ़ोतरी हुई त्यों–त्यों सरसों प्रथम क्रम की फसल के रुप में उभरकर आई। सन् 2008–09 से लगातार सरसों का प्रथम क्रम की फसल पर बने रहने के प्रमुख कारण निम्नांकित है–

1. किसानों में खाद्यान्न की अपेक्षा लाभदायनी तिलहन फसल को करने में रुचि का होना।

2. सरसों कम वर्षा और शुष्क कृषि पद्धति के कारण भी बोयी जाने लगी है।

3. वर्षा के अभाव में बाजरा व ज्वार का उत्पादन घटने से भी सरसों प्रथम क्रम की फसल बन गई।

जिले में भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों के अनुसार शस्य श्रेणी क्रम अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 2012–13 में जिले के उत्तर, उत्तरी–पूर्व व दक्षिण भाग में सरसों,

बाजरा, गेंहू प्रमुख है क्रमशः जो खण्डार, सवाई माधोपुर, फलौदी आदि निरीक्षक वृतों में सरसों व गेंहू क्रमशः प्रथम द्वितीय स्थान पर बाजरा तृतीय क्रम पर है। सन् 1992–93 में बाजरा प्रथम क्रम पर था जो 2012–13 में परिवर्तित होकर द्वितीय क्रम पर आ गया व इसका प्रमुख कारण है कि खरीफ की फसलें सामान्य वर्षा से भी पैदा हो जाती है। लेकिन वर्तमान में किसान खरीफ की फसलों की कम पैदा करने लग गए और उसे खाली छोड़कर सरसों की फसल के लिए तैयार करने लगे है। वर्तमान समय में कृषि विकास में आधुनिक साधन ,उन्नत बीज, रासायनिक खाद्य और कीटनाशक औषधियों के प्रयोग हेतु भी पानी की आवश्यकता होती है तथा फसलों पर खर्च भी प्रति हेक्टेयर अधिक आता है। इसलिए व्यापारिक फसलों के उत्पादन हेतु उपर्युक्त आधुनिक आदानों का उपयोग अधिक लाभ प्रद है। इस प्रकार हम कह सकते है कि सवाई माधोपुर जिले के कृषि विकास स्तर में आधुनिक प्रक्रिया शुरु हो गई है और आगे भी इसकी गति में बढ़ोत्तरी होगी।

इस प्रकार जिले में कुल मिलाकर सरसों, बाजरा व गेंहू प्रमुख फसलें है। और अन्य सभी फसलें जिले में गौण स्थान रखती है। जिले के शस्य श्रेणी के अनुसार खरीफ एवं रबी की प्रमुख फसलों का विवरण फसलनुसार इस प्रकार है जो जिले में मुख्य रुप से बोई जाती है।

खरीफ की प्रमुख फसलें

खरीफ की प्रमुख फसलों में बाजरा, खरीफ की दाले, तिल, चावल एवं ज्वार है। खरीफ की फसल वर्षा ऋतु के प्रारभ्भ (जून–जुलाई–अगस्त) मौसम में जिले के कुल खरीफ फसल के क्षेत्रफल के 90 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र पर ये फसले बोई गई है। खरीफ फसल 1992–93 में जिले के कुल बोये गए क्षेत्र के 55.05 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई गई। जो कि 2012–13 में कम होकर 32.52 प्रतिशत रह गई है। इस प्रकार इस वर्ग में पिछले 20 वर्षों में लगभग 22.53 प्रतिशत क्षेत्र की कमी हुई।

बाजरा

बाजरे की कृषि कम एवं मध्यम वर्षा वाले क्षेत्रों में व्यापक रुप से की जाती है। इसमें सुखे को सहन करने की क्षमता अधिक होती है। बाजरे के लिए जल निकास की व्यवस्था वाली हलकी या दोमट मिट्टी उपयुक्त है। जिले की कृषि परिस्थितियाँ बाजरे के लिए उपयुक्त है। बाजरा जिले में खरीफ फसलों के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्र में प्रधान क्रम की फसल है। सन् 1992–93 में फसलें श्रेणीक्रम में प्रथम फसल थी जो सन् 2012–13 में तीसरे क्रम पर आ गया। 1992 में 36373 हेक्टेयर था जो बढ़कर 2002 में 58998 हो गया, 2008 में 68000 व 2012 में 68610 हेक्टेयर हो गया । (सारणी संख्या 3.3)

FLATE No. 5

I

II

खरीफ फसल क्षेत्र– गन्ना

खरीफ फसल क्षेत्र– बाजरा

खरीफ फसलों के अन्तर्गत बोया गया क्षेत्र 1992 से 2012

सारणी संख्या 3.4

वर्ष	बाजरा	ज्वार	तिल	उडद	मूंग	मूंगफली	सोयाबीन	मक्का	ग्वार	अरहर
1992	36373	11849	1991	3296	316	25740	378	3110	2037	519
2002	58998	6080	9780	6117	101	13211	602	788	3252	792
2008	68000	3500	41714	6035	974	7527	1593	1400	4000	54
2012	68610	877	38647	7652	1133	6750	2974	668	13154	131

स्त्रोतः– भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

बाजरे की कृषि कम एवं मध्यम वर्षा वाले क्षेत्रों में व्यापक रुप से की जाती है। इसमें सुखे को सहन करने की क्षमता अधिक होती है। बाजरे के लिए जल निकास की व्यवस्था वाली हलकी या दोमट मिट्टी उपयुक्त है। जिले की कृषि परिस्थितियाँ बाजरे के लिए उपयुक्त है। बाजरा जिले में खरीफ फसलों के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्र में प्रधान क्रम की फसल है। सन् 1992–93 में फसलें श्रेणी क्रम में प्रथम फसल थी जो सन् 2012–13 में तीसरे क्रम पर आ गया। 1992 में 36373 हेक्टेयर था जो बढ़कर 2002 में 58998 हो गया, 2008 में 68000 व 2012 में 68610 हेक्टेयर हो गया ।

ज्वार

ज्वार शुष्क कटिबन्धीय प्रदेश की उपज है। इसकी बुवाई के समय पर्याप्त गर्मी की आवश्यकता होती है। लेकिन अधिक वर्षा इसकी फसल के लिए हानिकारक सिद्ध होती है। 30 से 100 सेन्टीमीटर वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी कृषि सफलता से की जाती है। इसमें शुष्क दशाओं को सहन करने की क्षमता होती है यह इन क्षेत्रों के लिए उपयोगी है जहाँ पर कृषि मुख्यतया वर्षा पर निर्भर करती है वहाँ ज्वार एक आदर्श

I

FLATE No. 6

खरीफ फसल क्षेत्र–सोयाबीन

II

खरीफ फसल क्षेत्र– तिल्ली

फसल बन जाती है। जिले में 1992–93 में फसले श्रेणी क्रम में चतुर्थ क्रम की फसल थी। 22° से 32° सेल्सियस तापमान ज्वार की फसल के लिए अनुकूल माना जाता है।[17] इस की बुवाई के लिए भारी दोमट मिट्टी अथवा काली चिकनी मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है।

जिले में ज्वार ग्रामीण क्षेत्रों में शीत ऋतु का मुख्य खाद्यान्न है। जिले में सन् 1992–93 में 11849 हेक्टेयर क्षेत्र में ज्वार बोया गया। जो सन् 2002 में 6080 हेक्टेयर सन् 2008–09 में 3500 हेक्टेयर व सन् 2012–13 में घटकर 877 हेक्टेयर रहे गया। उपरोक्त आरेख व तालिका संख्या 3.4 से स्पष्ट है कि पिछले 20 वर्षों में ज्वार के क्षेत्र में 10972 हेक्टेयर क्षेत्र की कमी हुई। किन्तु 1992–93 के बाद से इसके क्षेत्र में निरन्तर कमी हुई। इसका प्रमुख कारण सिंचाई सुविधाओं में निरन्तर वृद्धि से ज्वार के क्षेत्र में कमी हुई, क्योंकि ज्वार का स्थान व्यापारिक व मुद्रादायनी फसलों (सरसों, सोयाबिन, तिल व गेंहूँ) ने ले लिया है।

तिल

यह तिलहन फसलों के अर्न्तगत आती है। जिले में सन् 1992–93 में 1991 हेक्टेयर क्षेत्र पर बोयी गई थी जो 2002–03 में 9780 हेक्टेयर था, 2008–09 में 41714 हेक्टेयर हो गया जबकि 2012–13 में बढ़कर 38647 हेक्टेयर हो गया । जिले में पिछले 20 वर्षों से इस के बोये गये क्षेत्र में निरन्तर वृद्धि हो रही है। आरेख संख्या 3.3 में दर्शाया गया है।

उड़द

बोये गये क्षेत्र की दृष्टि से दलहन फसलों में उड़द का दुसरा स्थान है। क्योंकि अधिकांश लोग दालों के रुप में उड़द का प्रयोग करते है। उपरोक्त आरेख व सारणी संख्या 3.4 में उड़द के क्षेत्र में पिछले 20 वर्षों में आये परिवर्तन को दर्शाया गया है।

उपरोक्त आरेख व सारणी संख्या 3.4 से स्पष्ट है कि जिले में सन् 1992–93 के दोहरान उड़द का क्षेत्र 3296 हेक्टेयर था जो सन् 2002–03 में बढ़कर 6177 हेक्टेयर हो गया इस दशक में दुगनी वृद्धि हुई। सन् 2008–09 में घटकर 6035 हेक्टेयर रहे गया। सन् 2012–13 में 7652 हेक्टेयर क्षेत्र में उड़द बोया गया। दो दशकों में उड़द के बोये गये क्षेत्र में 4356 हेक्टेयर क्षेत्र की वृद्धि हुई। इस का प्रमुख कारण अच्छी वर्षा व इस मूंग, बाजरा व तिलहन फसलों के साथ बोया जाता है।

अन्यः– अन्य दलहन फसलें मटर, चौला, मसूर व मोट जिले में सन् 2012–13 में 798 हेक्टेयर क्षेत्र में बोया गया है।

खरीफ फसल प्रारूप में आया परिर्वतन

आरेख संख्या 3.3

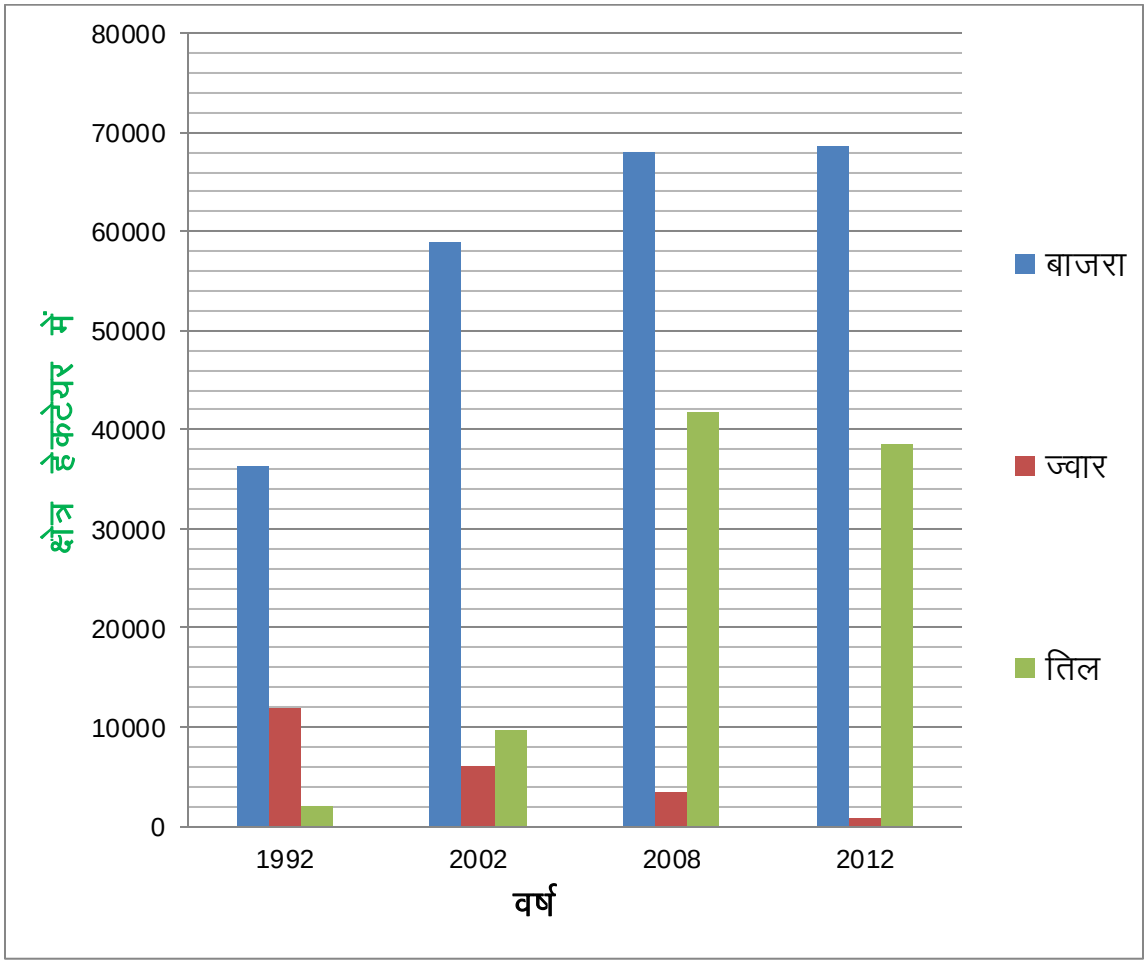

मूंग

जिले में बोये गये क्षेत्र की दृष्टि से दलहन फसलों में तीसरा स्थान है। सारणी संख्या 3.4। से स्पष्ट है कि सन् 1992–93 में मूंग 316 हेक्टेयर क्षेत्र में बोया गया जो 2012–13 में बढ़कर 1133 हेक्टेयर हो गय। 20 वर्षों में इस क्षेत्र में चार गुने से अधिक वृद्धि हुई। (आरेख 3.4)

मूंगफली

मूंगफली ब्राजील मूल का पौधा है। यह ऊष्ण कटिबन्धीय पौधा है तथा सामान्यतयाः खरीफ की फसल है। इसके लिये 75 से 150 सेन्टी मीटर वर्षा पर्याप्त होती है। कम वर्षा होने पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए बलुई मिट्टी उपयुक्त रहती है।

जिले में सन् 1992–93 से 2012–13 के दोहरान मूंगफली के बोये गये क्षेत्र में निरन्तर कमी हुई है। इस आरेख संख्या 3.4 में मूंगफली के क्षेत्र में दशक में आये परिवर्तन को दर्शाया गया है। पिछले 20 वर्षो से इसके क्षेत्र में निरन्तर कमी हो रही है। इसका प्रमुख कारण जिले में इसका स्थान अन्य तिलहनी फसलों (सरसों, तिल व सोयाबीन) आदि ने ले लिया है।

सोयाबीन

जिले मे सोयाबीन के बोये गये क्षेत्र मे पिछले एक दशक से ही वृद्धि हुई है और वर्तमान में यह जिले की चर्थुत मुख्य तिलहन फसल है। दिनों–दिन इसका महत्त्व बढ़ता जा रहा है। क्योंकि इसको दलहन व तिलहन दोनों ही रूप में इस्तेमाल किया जाता है तथा यह काफी पौष्टि होती है।

जिले के कुल बोये गये क्षेत्र में 0.74 प्रतिशत सोयाबीन का है। सन् 2012–013 में इसका क्षेत्र 2974 हेक्टेयर था सन् 1992–93 में 378 हेक्टेयर रहे गया जो नगण्य है। इस प्रकार 1992–93 से 2012–13 के दोहरान सोयाबीन के क्षेत्र में 2596 हेक्टेयर क्षेत्र की वृद्धि हुई है। (आरेख संख्या 3.4) इसका प्रमुख कारण यह एक मुद्रादायनी व व्यापारिक फसल है।

अरहर

सन् 1992–93 में जिले 519 हेक्टेयर क्षेत्र में बोयी गई थी जो सन् 2002–03 में बढ़कर 792 हेक्टेयर हो गया पुनः सन् 2008–09 में घटकर 54 हेक्टेयर रहे गया वर्ष 2012–13 में 131 हेक्टेयर क्षेत्र पर अरहर बोयी गई। (सारणी संख्या 3.4) पिछले दो दशकों में जिले में अरहर का बोया गया क्षेत्र में 388 हेक्टेयर क्षेत्र की कमी हुई। इसके लिए 20° सेल्सीयस तक तापमान की आवश्यकता होती है। 50 से 70 सेन्टीमीटर तक वर्षा उपर्युक्त रहती है इसके लिए इस प्रकार की मिट्टी की आवश्यकता होती है जिसमे जल रुके नहीं इसकी खेती निकृष्ट एवं अनुपजाऊ खेतीहर भूमि में भी की जाती है।

मक्का

मक्का खरीफ की फसलें है। सन् 1992–93 में जिले में 3110 हेक्टेयर क्षेत्र पर बोया गया था जो सन् 2012–13 में घटकर 668 हेक्टेयर क्षेत्र रहे गया है। (सारणी संख्या 3.4) दो दशकों में इसके क्षेत्र में 2442 हेक्टेयर क्षेत्र की कमी हुई। उपरोक्त आरेख में मक्का के क्षेत्र में आये परिवर्तन को दर्शाया गया है। जिले में पिछले 20 वर्षों से मक्का के बोये गये क्षेत्र में निरन्तर कमी हो रही है।

I

FLATE No. 7

II खरीफ फसल क्षेत्र– मूँगफली

खरीफ फसल क्षेत्र– मक्का

खरीफ फसल प्रारूप में आया परिर्वतन

आरेख संख्या 3.4

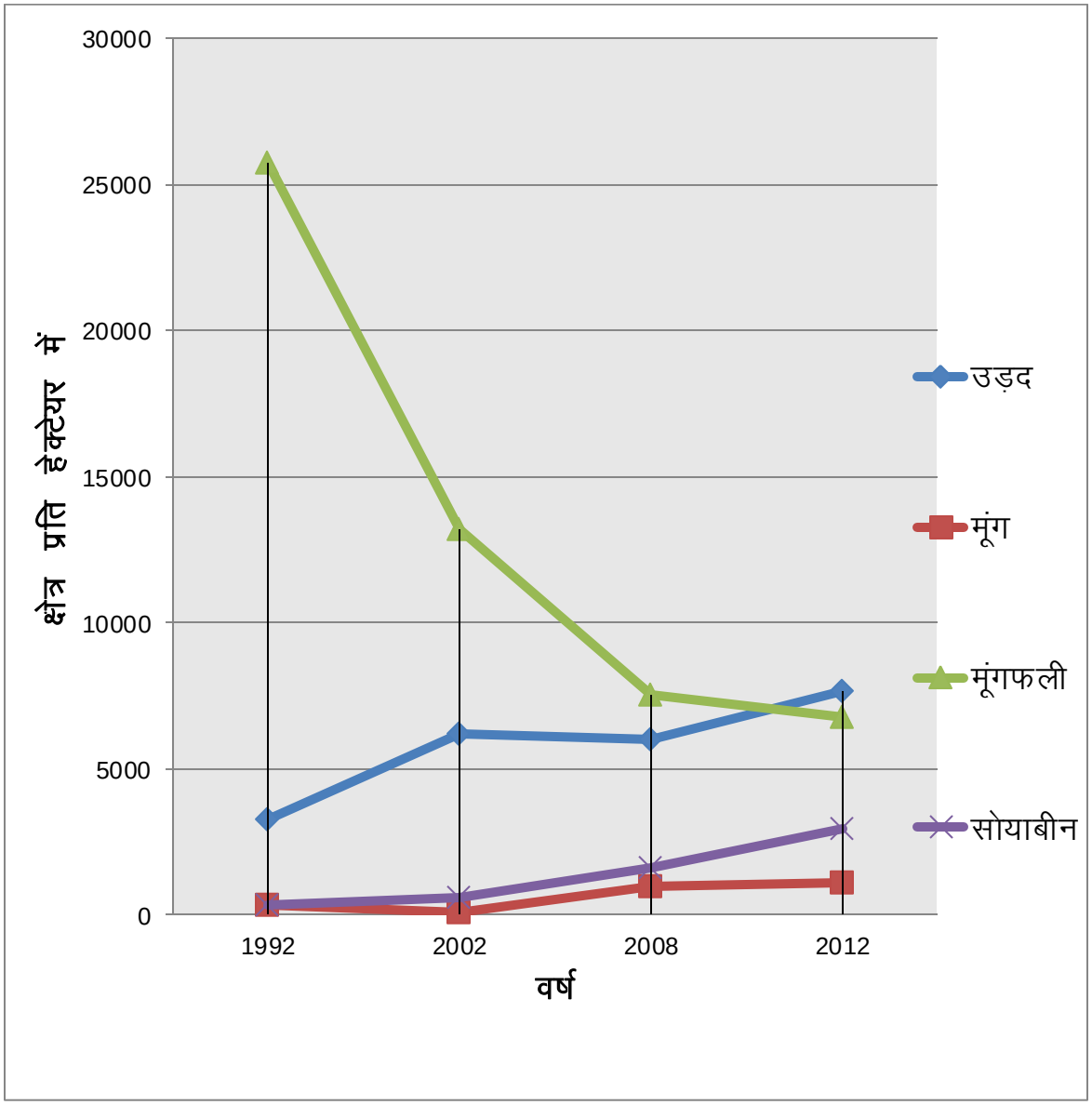

ग्वार

यह एक व्यापारिक फसल है। सन् 1992–93 में 2037 हेक्टेयर क्षेत्र पर बोयी गई थी। सन् 2002–03 में 3252 हेक्टेयर क्षेत्र पर बोया गया जबकि सन् 2008–09 में 4000 हेक्टेयर क्षेत्र हो गया (सारणी संख्या 3.4) जो सन् 2012–13 में बढ़कर 13154 हेक्टेयर क्षेत्र पर ग्वार की फसल बोयी गयी थी । दो दशकों में 11117 हेक्टेयर क्षेत्र की वृद्धि हुई है।

खरीफ फसल प्रारूप में आया परिर्वतन

आरेख संख्या 3.5

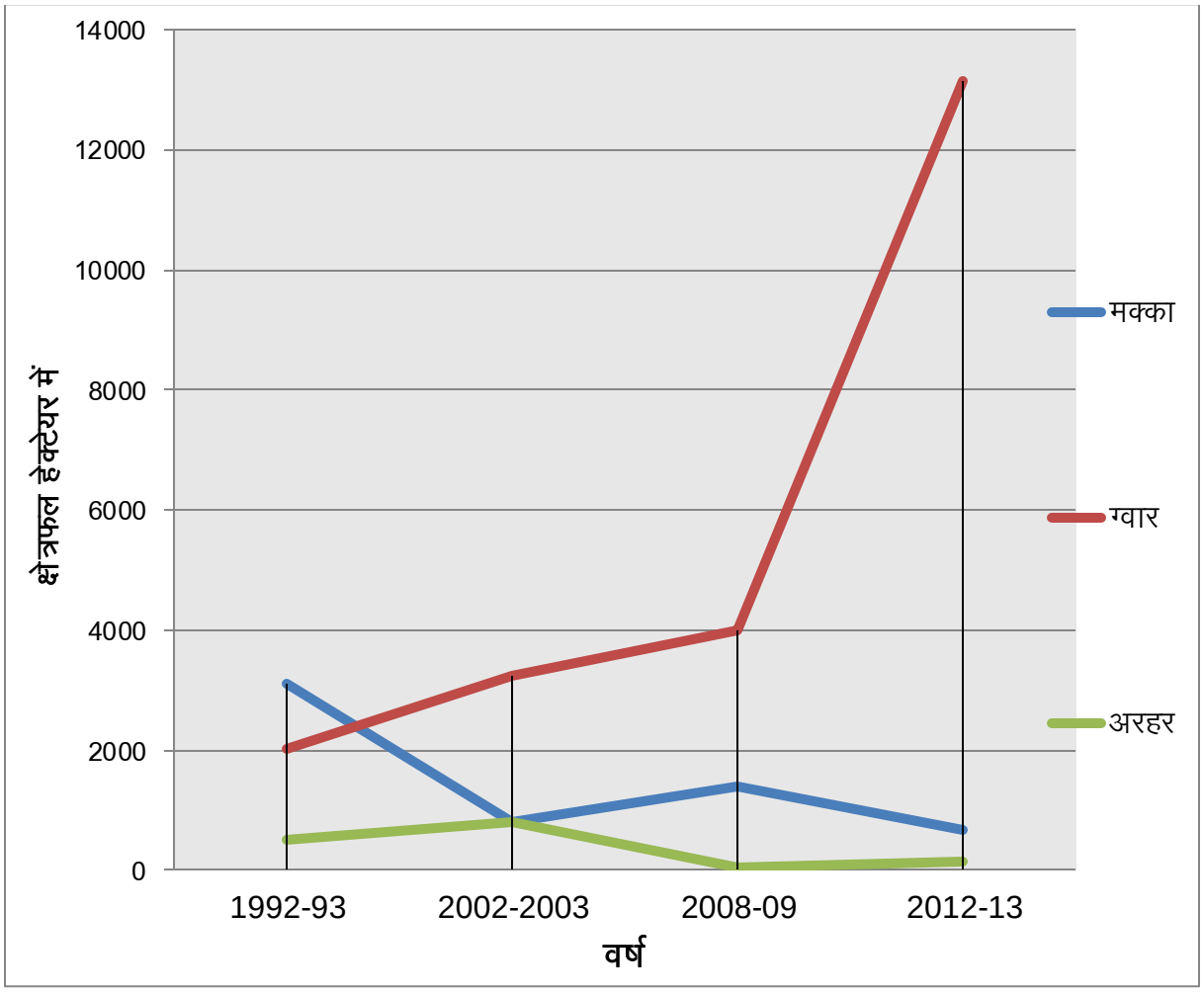

रबी की प्रमुख फसलें

सवाई माधोपुर जिले में रबी की फसलों का प्रतिशत अधिक पाया जाता है। जिले में रबी की फसलों में सरसों , गेंहू , चना , जौ तथा तारामीरा आदि प्रमुख है। रबी मौसम में जिले के कुल रबी फसलों के क्षेत्रफल के 93 प्रतिशत क्षेत्र पर ये फसलें बोई जाती है। रबी फसलें सन् 1992–93 में जिले में कुल बोये गये क्षेत्रफल के 44.95 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई गयी थी जो सन् 2012–13 में बढ़कर 67.26 प्रतिशत हो गई। पिछले 20 वर्षों में 22.31 प्रतिशत क्षेत्र की वृद्धि हुई। निम्नलिखित सारणी में जिले में बोई जाने वाली रबी फसलों को दर्शाया गया है–

I FLATE No.8

रबी फसल क्षेत्र– सरसों

रबी फसल क्षेत्र –गेंहू

जिले में रबी फसलों के अन्तर्गत बोया गया क्षेत्र

सारणी संख्या 3.5

(क्षेत्र हेक्टेयर में)

वर्ष	रबी की प्रमुख फसलें				
	सरसों	गेंहू	चना	जौ	तारामीरा
1992–93	35509	30262	13213	6791	4420
2002–03	24814	54192	8038	1775	167
2008–09	173907	53446	10634	1221	1332
2012–13	187552	74331	23776	2025	2211

स्त्रोतः– भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

सरसों

जिले में रबी व तिलहनी फसलों में प्रथम स्थान है। सरसों से तेल निकाला जाता है जिसका उपयोग खाने के तेल के रुप में अधिक होता है। तेल निकलने के बाद जो लुग्दी बच जाती है, उसे खल कहते है। यह पशुओं को खिलाने के काम आती है। इसके लिए औसत तापमान 20° से 25° सेल्सियस और 75 से 150 सेन्टीमीटर वर्षा लाभ दायक होती है व उपजाऊ दोमट मिट्टी विशेष रुप से उपयुक्त होती है।[18] सरसों जिले में मुख्य व्यापारिक फसल है, इस कारण इसका कुल बोया गया क्षेत्रफल प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है। जिले में कुल तिलहन में बोये गये क्षेत्र में सरसों का 44 प्रतिशत क्षेत्र है।

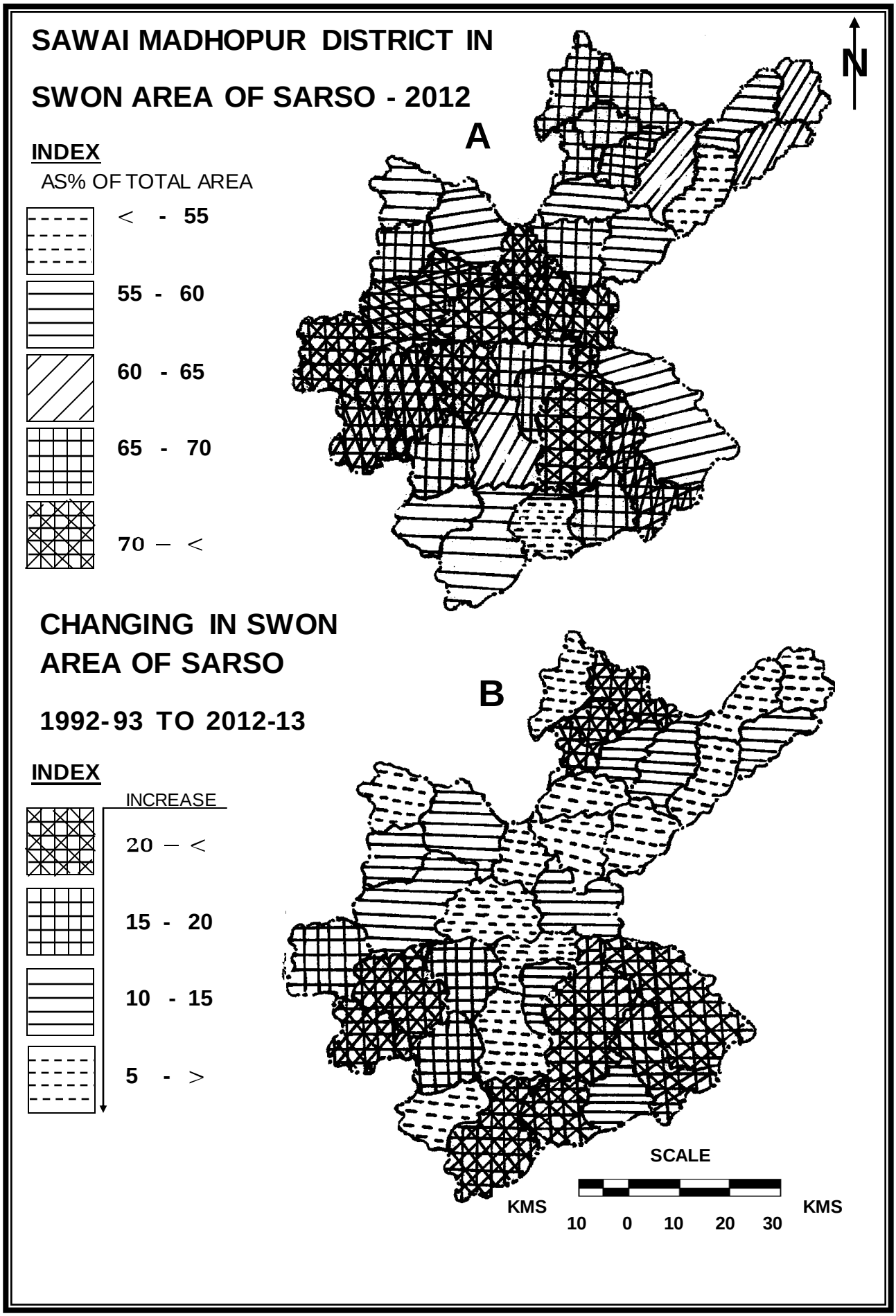
SAWAI MADHOPUR DISTRICT IN
SWON AREA OF SARSO - 2012
INDEX
AS% OF TOTAL AREA
< - 55
55 - 60
60 - 65
65 - 70
70 – <
A
N
CHANGING IN SWON
AREA OF SARSO
1992-93 TO 2012-13
INDEX
INCREASE
20 – <
15 - 20
10 - 15
5 - >
B
SCALE
KMS
10 0 10 20 30
KMS

जिले में सन् 1992–93 से 2012–13 के दौहरान सरसों के क्षेत्र में अत्याधिक परिवर्तन हुआ है। सारणी संख्या 3.5 में स्पष्ट है कि सन् 1992–93 में 35509 हेक्टेयर क्षेत्र था जो सन् 2012–13 में बढ़कर 187552 हेक्टेयर हो गया। गत दो दशकों में सरसों के बोये गये क्षेत्र में 152043 हेक्टयर क्षेत्र की वृद्धि हुई है। जिले में पिछले 20 वर्षों से इसके क्षेत्र में वृद्धि हो रही है। (आरेख संख्या 3.6) इसका प्रमुख कारण सिंचित क्षेत्र में वृद्धि व उन्नत किस्म के खाद्य बीज आदि प्रमुख है।

मानचित्र संख्या 2.7A के अनुसार 2012–13 में सर्वाधिक सरसों का कुल बोया गया क्षेत्र दक्षिणी–पूर्वी भाग में 70 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र है, इसका प्रमुख कारण जिले की मुख्य मुद्रादायनी फसल होने के कारण, उत्तर–पश्चिमी भाग में 65 से 70 प्रतिशत क्षेत्र पर सरसों के अर्न्तगत आता है। जिले में सबसे कम बहरावण्ड़ा खुर्द व कुनकटा कलॉ भू–अभिलेख वृतों में 55 प्रतिशत से कम है। इसका प्रमुख कारण यहाँ दो फसलों की चाहत में सरसों के स्थान पर गेंहू के क्षेत्र में वृद्धि रहा है।

सरसों के क्षेत्र में आया परिवर्तन

सन् 1992–93 से 2012–13 के दौरान जिले में सर्वाधिक परिवर्तन दक्षिण–पूर्वी भाग में 20 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई है। इसका प्रमुख कारण घटते हुए बाजरा व ज्वार के क्षेत्र में कमी रहा हैं। शिवाड़ भू–अभिलेख वृत में 15से 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। दो दशकों में सबसे कम वृद्धि मध्यवृर्ति व उत्तर–पूर्वी भाग में 5 प्रतिशत से कम हुई। इसका प्रमुख कारण सिंचाई के साधनों का अभाव रहा है।

गेंहू

गेंहू की अधिक पैदावार के लिए बलुई दोमट, अच्छी उर्वरा व जल धारण क्षमता युक्त मिट्टी वाले सिंचित क्षेत्र उपयुक्त है। अधिकाशतः इसकी कृषि सिंचित क्षेत्रों में की जाती है। सवाई माधोपुर जिले में रबी की फसलों के अन्तर्गत काश्त क्षेत्र में द्वितीय स्थान है। जिले में कुल खाद्यान्न फसलों में गेंहू का 48.78 प्रतिशत क्षेत्र है।

जिले में 20 वर्षों से गेंहू के काश्त क्षेत्र में अधिक परिवर्तन हुआ है। इस में दर्शाया गया है। (आरेख संख्या 3.6) गेहू का काश्त क्षेत्र सन् 1992–93 में 2002 व 2008 में क्रमशः 30262, 54192, व 53446 हेक्टेयर था (सारणी संख्या 3.5) जो 2012–13 में बढ़कर 74331 हेक्टेयर हो गया दो दशकों में गेंहू के काश्त क्षेत्र में 39858 हेक्टेयर काश्त क्षेत्र की वृद्धि हुई। इस का प्रमुख कारण जिले में गेंहू मुख्य खाद्यान्न फसल एवं सिंचाई साधनों का विकास हैं।

जिले में 2012–13 के दौरान गेंहू का सर्वाधिक बोया गया क्षेत्र उत्तर–पूर्वी भाग में बहरावण्ड़ा खुर्द, कुनकटा कलॉ, खड़ेली भू–अभिलेख वृतों में 50 प्रतिशत से अधिक है। (मानचित्र संख्या 2.8B) सबसे कम गेंहू का क्षेत्र उत्तर व उत्तर–पश्चिमी भाग में 20

MAP No. 3.8

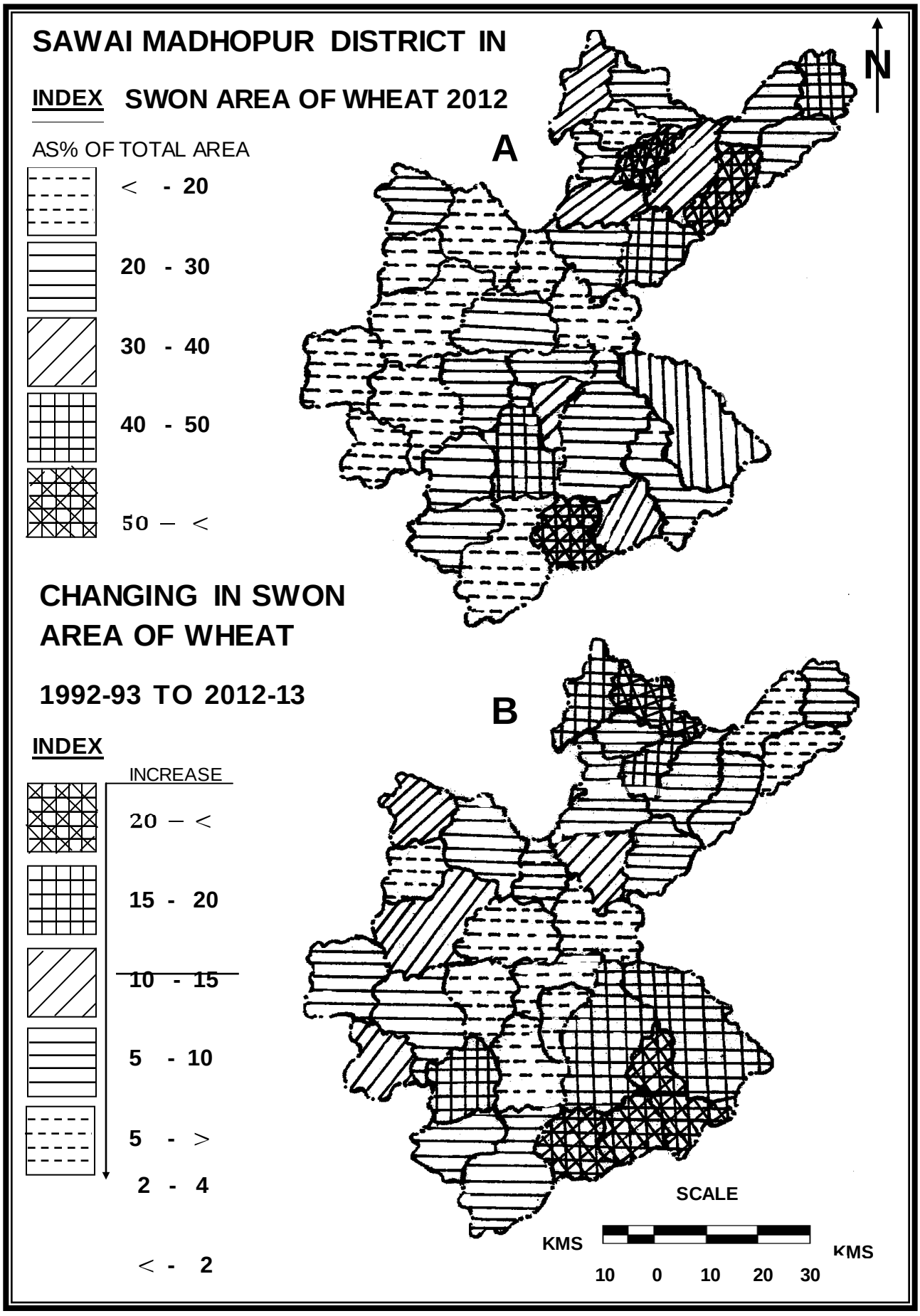
SAWAI MADHOPUR DISTRICT IN
INDEX SWON AREA OF WHEAT 2012
AS% OF TOTAL AREA
< - 20
20 - 30
30 - 40
40 - 50
50 – <
A
N
CHANGING IN SWON AREA OF WHEAT
1992-93 TO 2012-13
INDEX
INCREASE
20 – <
15 - 20
10 - 15
5 - 10
5 - >
2 - 4
< - 2
B
SCALE
KMS
KMS
10 0 10 20 30

प्रतिशत से कम है। इस का प्रमुख कारण यहाँ सरसों के कुल बोये गये व अन्य फसलों में बाजारा, मिर्च, साक–सब्जियों के क्षेत्र में वृद्धि रहा है।

गेंहू के क्षेत्र में आया परिवर्तन

सन् 1992–93 से 2012–13 के दौरान जिले में सर्वाधिक परिवर्तन हुआ है। मानचित्र संख्या 2.8B के अनुसार 20 वर्षों में दक्षिण–पूर्वी व उत्तर–पश्चिमी भाग में में 20 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई है। कुश्तला भू–अभिलेख वृत में 15 से 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जबकि दक्षिण–पश्चिमी भाग में 10 से 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस का प्रमुख कारण यहाँ सिंचाई के साधनों का हो रहा है। जिले में सबसे कम वृद्धि मध्यवृर्ति व उत्तर–पूर्वी भाग में 5 प्रतिशत से कम वृद्धि हुई है।

जौ

जौ भी एक महत्त्वपूर्ण खाद्यान्न फसल है। परन्तु आधुनिकीकरण प्रक्रिया में इसका क्षेत्रफल घटता जा रहा है। सन् 1992–93 में यह जिले में 6791 हेक्टेयर क्षेत्र में बोया गया था जो सन् 2012–13 में कम होकर 2025 हेक्टेयर रहे गया है। पिछले 20 वर्षों के परिवर्तन को आरेख संख्या 3.6 में दर्शाया गया है। जिले में जौ के क्षेत्र में 1992–93 से निरन्तर कमी हो रही है। इसका प्रमुख कारण जौ की खाद्यान्न फसलों का स्थान गेंहू व बाजरे ने ले लिया है।

तारामीरा

तारामीरा एक तिलहनी फसलें है जो रबी के मौसम में बोई जाती है। पिछले 20 वर्षों से जिले में इसके बोये गये क्षेत्र में निरन्तर कमी हो रही है। उपरोक्त आरेख व सारणी सख्या 3.5 से स्पष्ट है कि जिले में सन् 1992–93 में तारामीरा का काश्त क्षेत्र 4420 हेक्टेयर था जो सन् 2012–13 में घटकर 2211 हेक्टेयर रहे गया। दो दशकों में जिले में इसके काश्त क्षेत्र में 2209 हेक्टयर क्षेत्र की कमी हुई है।

उपयुक्त फसल विश्लेषण के आधार से स्पष्ट है कि जिले में कृषि व्यवस्था व्यावसायिकरण की और अग्रसर हो रही है। सारांश में कहा जा सकता है कि जिले का कृषि विकास स्तर में आधुनिक तकनीकी के कारण और खाद, बीज एवं कीटनाशक औषधियों के कारण बदलाव आ रहा है।

रबी फसल प्रारूप में आया परिवर्तन

आरेख संख्या 3.6

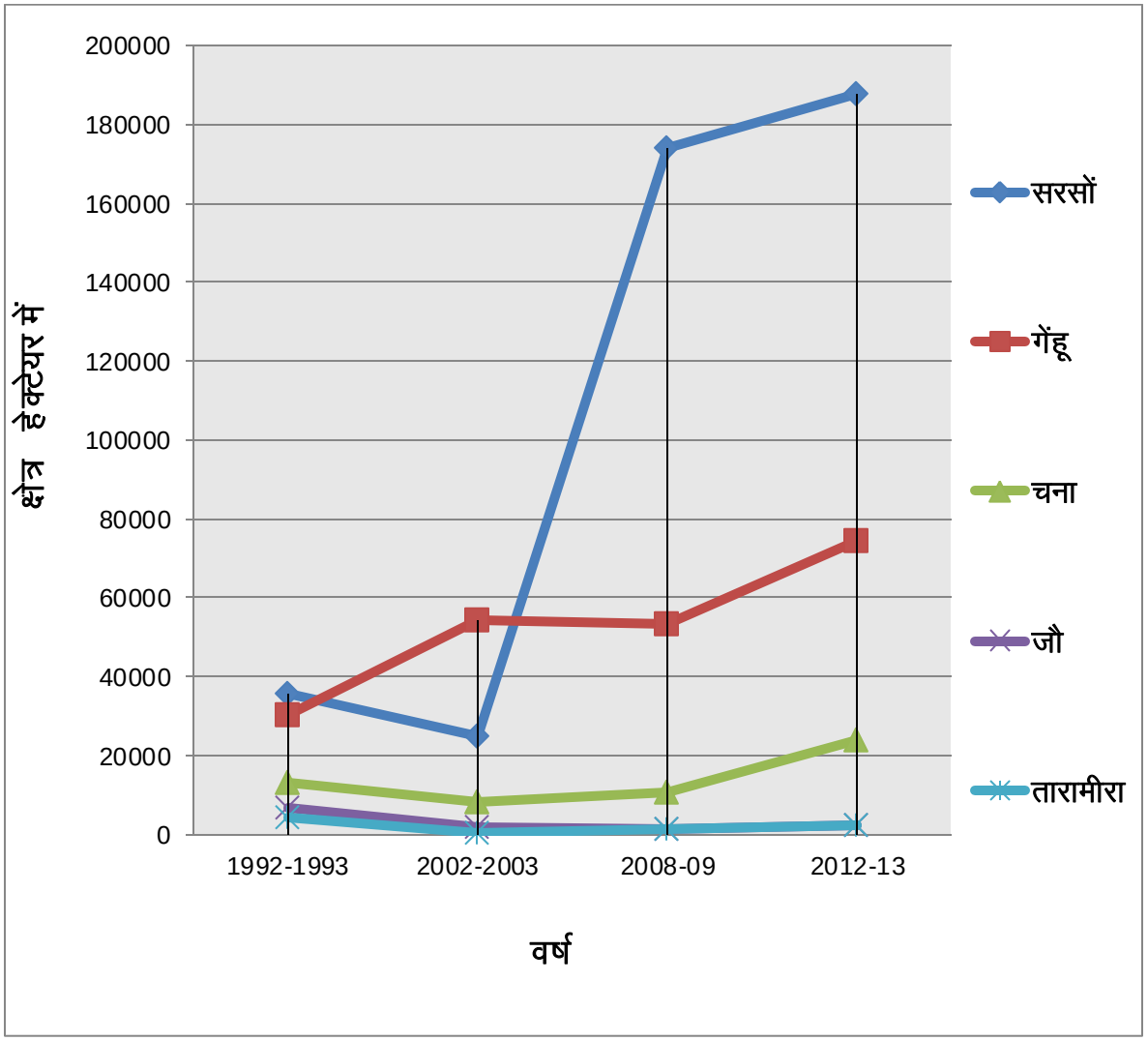

चना

सवाई माधोपुर जिले में रबी फसलों के अन्तर्गत चने की फसल का तीसरा स्थान है। चने की फसल को गेंहू की फसल की तुलना में पानी की आवश्यकता कम पड़ती है। यह फसल मिट्टी में विद्यमान नमी के द्वारा भी उगायी जा सकती है। इसमे सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती है। सर्दियों में थोड़ी बहुत मावट ही इसकी फसल के लिऐ पर्याप्त है। उपरोक्त आरेख व सारणी संख्या 3.5 में दशकीय परिवर्तन व वृद्धि को दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 3.4 से स्पष्ट है कि जिले में सन् 1992–93 से 2012 तक निरन्तर वृद्धि हो रही है केवल सन् 2002–03 में चने के काश्त क्षेत्र में कमी हुई। आरेख संख्या 3.6 के अनुसार पिछले 20 वर्षा में जिले में चने के बोये गये क्षेत्र में 10563

I

FLATE No. 9

रबी फसल क्षेत्र–चने

II

रबी फसल क्षेत्र–चावल

हेक्टेयर क्षेत्र की वृद्धि हुई। यह फसल जिले में कुल बोये गये क्षेत्रफल के 5.93 प्रतिशत क्षेत्र में बोई गई।

शस्य संयोजन प्रदेश

फसलें कदाचित ही पूर्णतया एकाकी रूप में ली जाती है। किसी प्रदेश या इकाई क्षेत्र में कई प्रकार की फसलें ली जाती है। जिनका क्षेत्र विस्तार तथा कोटि गुणांक अलग–अलग होता है। शस्य स्वरूप न केवल उस प्रदेश के भौगोलिक कारकों के प्रभाव को प्रतिम्बित करता है। वरन् फसल समुह में विभिन्न फसलों के क्षेत्रीय विस्तार और मापने योग्य एक विधि को प्रकट करता है। यह कृषि उपयोग के भौगोलिक प्रतिरूप को स्पष्ट करता है। जिसकी सहयता से तथ्य परक कृषि प्रदेशों में सहायता मिलती है।[19] शस्य संयोजन कृषि के महत्त्वपूर्ण आकारिकी स्वरूप को पहचाने में भी अत्याधिक सहायक होते है।

प्रो.पी.ई. जेम्स तथा सी.एफ. जोन्स के अनुसार शस्य संयोजन सम्बन्धि अध्ययन के अभाव में कृषि की क्षेत्रीय विशेषताओं को ठीक से समझा जा सकता है। साथ ही साथ क्षेत्रीय संकल्पना के बिना कृषि प्रदेश विभाजन की दिशा में भी संतोषजनक नहीं हो सकता है।[20]

वीवर का शस्य संयोन प्रदेश

शस्य संयोजन पर विचार करने वालों में जे.सी. वीवर 1954 सर्वप्रथम है तथा उनकी न्यूनतम विचलन विधि बहुचर्चित है। अधिकांश परवर्ती विधियाँ वीवर की संशोधित रूप है। उन्होंने शस्य संयोजन प्रदेश निश्चित करने का एक गणितीय मॉडल बनाया जिसका प्रयोग पश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य पश्चिमी क्षेत्र का शस्य संयोजन निर्धारित करने में किया।[21] इस मॉडल का सैद्धांतिक आधार यह है कि फसलों के अन्तर्गत भूमि समान रूप से वितरीत हो । उदाहरण के लिए अगर किसी क्षेत्र में एक फसल है तो शत प्रतिशत कृषित भूमि एक ही फसल के अन्तर्गत होनी चाहिए। इस तरह दो फसलें है तो प्रत्येक का हिस्सा 50 प्रतिशत तीन फसलें होने पर प्रत्येक के अन्तर्गत 33.3 प्रतिशत और इसी तरह दस फसलें होने पर प्रत्येक के अन्तर्गत 10 प्रतिशत कृषि भूमि होनी चाहिए । इस सैद्धांतिक स्थिति की तुलना वास्तविक स्थिति से करने पर प्रमाणिक विचलन विधि से न्यूनतम विचलन वाला शस्य संयोजन निर्धारित किया जाता है। वीवर का उद्देश्य विचलन की वास्तविक मात्रा ज्ञात करना नहीं था बल्कि विचलन का सापेक्षिक क्रम जाना था। इस कारण उन्होंने

प्रमाणिक विचलन के सूत्र $\alpha = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}}$ के स्थान पर प्रसरण का सूत्र $\alpha = \frac{\overline{d^2}}{N}$ का प्रयोग किया है।

यहाँ d का तात्पर्य फसलों के सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशत क्षेत्रों के अन्तर से है और n का तात्पर्य सम्बन्धित संयोजन में फसलों की संख्या से है। जिस संयोजन में सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों में न्यूनतम प्रसरण होता है, वहीं दस इकाई क्षेत्र का शस्य संयोजन माना जाता है। इस विधि द्वारा गणना के चरण निम्नानुसार है–

1 प्रत्येक फसल के क्षेत्रफल का कुल फसलों के क्षेत्रफल से प्रतिशत ज्ञात कर उन्हें घटते क्रम में रखा जाता है।।

2. इन फसलों का प्रथम फसल से प्रारम्भ करके एक फसल प्रथम दो फसल प्रथम तीन फसल आदि का समुह बना लेते है ये समुह संख्या में उतने ही होगे जितने की विचारणीय फसलों की संख्या होगी । इन समुहों को संयोजन कहते हैं।

3 प्रत्येक शस्य संयोजन की प्रत्येक फसल के सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों का अन्तर d ज्ञात करते हैं। ध्यान देने की बात है कि संयोजन में फसलों की संख्या बढ़ाने के साथ ही सैद्धान्तिक प्रतिशत घटते जाते हैं।

4 सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों के अन्तर का वर्ग d किया जाता है।

5 इस तरह संयोजन को सभी फसलों के अन्तर का वर्ग का योग ($\sum d^2$) किया जाता है।

6 इन अन्तर के वर्ग के योग को संयोजन में सम्मिलित फसलों की $\sqrt{\frac{\sum d^2}{N}}$ संख्या से भाग देकर प्रसरण ज्ञात किया जाता है। ये सभी चरण उतनी बार करने पड़ते है जितने की फसलों के कुल संयोजन होते हैं। तभी यह ज्ञात करना सम्भव है कि न्यूनतम विचलन किस प्रमुख का है। इन चरणों को जिले की फसलों को लेकर समझा जा सकता है। इस जिले में प्रमुख फसलों का क्षेत्रफल निम्नानुसार है। जिले का कुल कृषित क्षेत्र 400428 हेक्टेयर है।

उपरोक्त आरेख के अनुसार प्रथम चरण का प्रतिशत क्षेत्र ज्ञात कर फसलों को घटाते क्रम में रखने पर उपर्युक्त कार्य सारणी से पूरा हो जाता है। दूसरे चरण में फसलों के समुहन का कार्य किया जाता है। इस विश्लेषण में प्रथम संयोजन सरसों

का दूसरा संयोजन प्रथत दो फसलों का अर्थात सरसों और गेंहू, तीसरा संयोजन प्रथम तीन फसलों (सरसो, गेहू व बाजरा) का होगा।

प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण सन्–2012–13

सारणी संख्या 3.6

(क्षेत्र हेक्टेयर में)

	सरसों	गेंहू	बाजरा	तिल	चना
फसलों का क्रम	I	II	III	IV	V
फसलों का क्षेत्रफल	187552	74331	68464	38647	23776
कुल कृषि भूमि का प्रतिशत	46.83	18.56	17.10	8.40	5.93

स्त्रोत : – भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

चतुर्थ संयोजन में प्रथम चार फसलों (सरसों, गेंहू, बाजरा, तिल) का होगा पंचम संयोजन में प्रथम पाँच फसलों (सरसों, गेंहू, बाजरा ,तिल व चना) का होगा। इस प्रकार सवाई माधोपुर जिले में पाँच फसलों का शस्य संयोजन सम्भव है। इनमें सबसे उपर्युक्त कौन होगा, यह जानने के लिए गणना की निम्न प्रक्रियाएँ करनी होगी।

इस तरह न्यूनतम प्रसरण 204.01 है जिले की चार फसलों वाले शस्य संयोजन के लिए है। इस कारण इस जिले का शस्य संयोजन चार फसलों सरसों, गेंहू व बाजरा व तिल का है।

इस विधि से जिले में शस्य संयोजन ज्ञात करने पर इसमे निम्नलिखित त्रुटियाँ पायी गयी–

1 यह विभिन्नता के क्षेत्रीय विस्तार एवं कोटि पर निर्भर करती है।

2 इसमें व्यक्ति परकता का समावेश है। जैसे कि आरम्भ में फसलों का चयन किसी स्थिर नियम द्वारा नहीं बल्कि व्यक्ति की सुविधा पर निर्भर होता है। वीवर ने सुविधा के लिए ही 1.0 प्रतिशत से अधिक कृषित भूमि पर बोई जाने वाली फसलों पर ही विचार किया था अन्यों पर नहीं।

जिले में फसलों का क्रम

आरेख संख्या 3.7

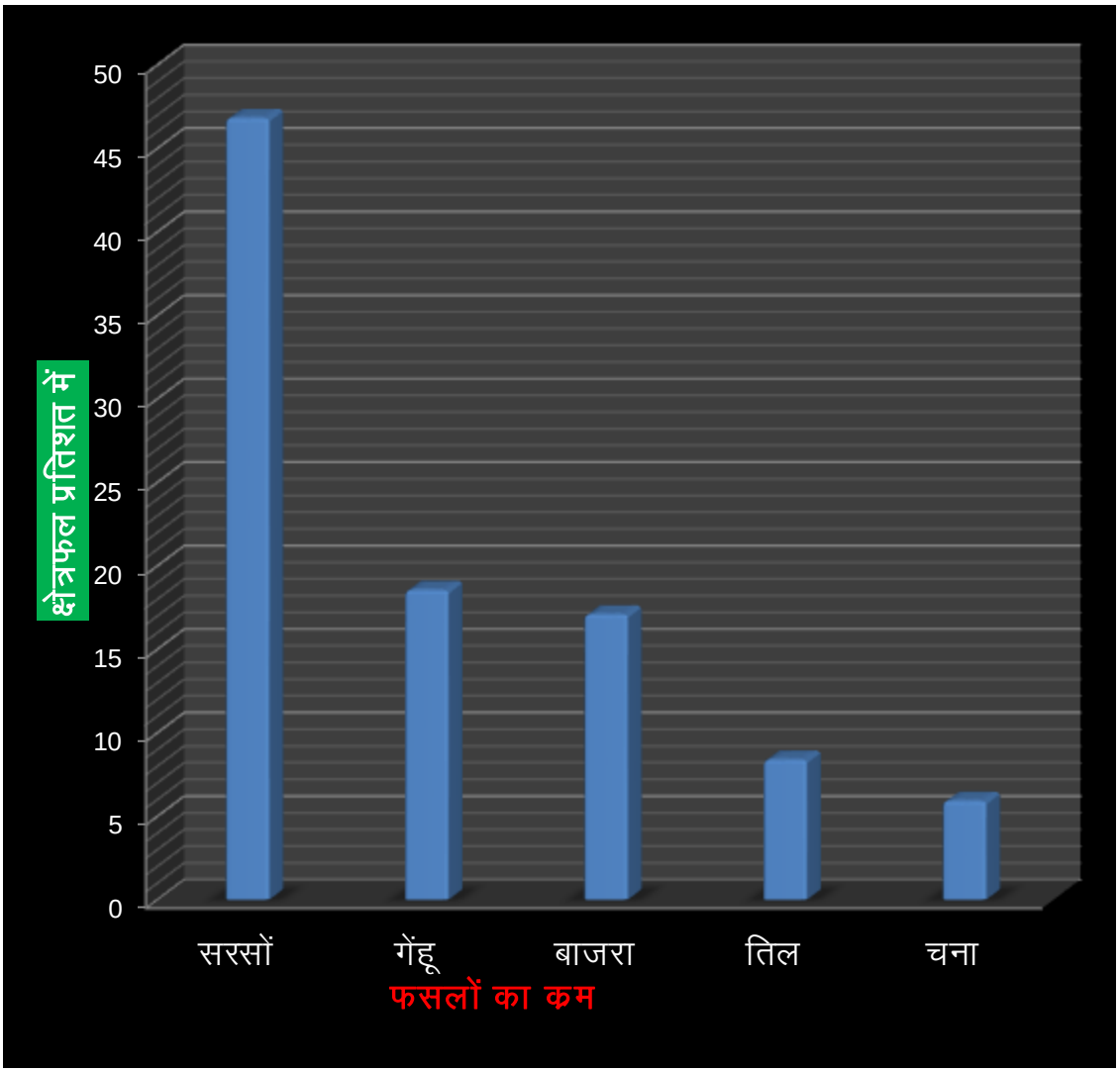

3 यह मॉडल ऐसे क्षेत्रों के लिए तैयार किया था जहाँ अध्ययन वाली प्रशासनिक इकाईयाँ लगभग समान आकार की है परन्तु सर्वत्र ऐसा नहीं हैं। विभिन्न आकार की इकाईयों में आने वाली गणना की समस्या की इसमे नहीं रखा गया है।

4 इस मॉडल में गणना की प्रक्रिया बहुत लम्बी व अन्तिम फसल तक चलती है।

शस्य संयोजन के निर्धारण में प्रतिशत समुह सीमान्त सांख्यिकी परिणाम बताते है वहाँ व्यक्ति निष्ठ तत्त्व प्रवेश कर जाते है। इसी तरह कुछ फसल जो क्षेत्रीय विस्तार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नहीं होती पर बहुत उच्च कीमत वाली होने के कारण इस प्रकार की फसलों को भी शस्य संयोजन में स्थान नहीं मिल पाता है।

वीवर विधि द्वारा शस्य–संयोजन की गणना के चरण–2012–13

सारणी संख्या 3.7

संयोजन में फसल संख्या	सैद्धान्तिक % क्षेत्र (T)	वास्तविक प्रतिशत क्षेत्र (A)	अन्तर (T-A=d)	अन्तर का वर्ग(d^2)	वर्गइकाई योग्य (Σd^2)	प्रसरण $\frac{\Sigma d^2}{N}$
एक फसल सम्मिश्रण	100	46.83	53.17	2827.04	2827.04	2827.04
दो फसल सम्मिश्रण	50 50	46.83 18.56	3.17 31.44	10.04 988.47	998.51	499.25
तीन फसल सम्मिश्रण	33 33 33	46.83 18.56 17.10	–13.83 14.44 15.90	191.26 208.51 252.8	652.58	217.52
चार फसल सम्मिश्रण	25 25 25 25	46.83 18.56 17.10 8.40	–21.83 6.44 7.90 16.6	476.54 41.47 62.41 272.24	852.66	213.16
पाँच फसल सम्मिश्रण	20 20 20 20 20	46.83 18.56 17.10 8.40 5.93	–26.83 1.44 2.90 11.6 14.39	719.84 2.07 8.41 134.56 206.49	1071.37	214.27

दोई का शस्य संयोजन प्रदेश

दोई ने वीवर की विधि संशोधन कर के उसका प्रयोजन जापान की औधोगिक संरचना ज्ञात करने के लिए किया (1957) । इनके भी सैद्धान्तिक आधार ठीक वैसे ही जैसे कि वीवर के अर्थात उन्होंने भी माना है कि कृषित भूमि सभी फसलों में समान रूप से वितरित हैं। सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों का अन्तर भी ज्ञात किया जाता है। अन्तर केवल इतना है कि वीवर ने प्रसरण $\frac{\sum d2}{n}$ को शस्य

संयोजन का आधार माना जाता है परन्तु दोई ने सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों के अन्तर के वर्ग योग ($\sum d^2$) को ही आधार माना है। इससे संयोजन में आने वाली फसलों की संख्या में बहुत ही अन्तर आ जाता है। पिछली सारणी संख्या 3.7 से स्पष्ट है कि वीवर की विधि के अनुसार जिले में चार फसलों के संयोजन में ही न्यूनतम विचलन है परन्तु दोई आधार पर न्यूनतम विचलन तीन फसलों के लिए है। परन्तु इस जिले का उपयुक्त शस्य संयोजन के तीन फसलों सरसों, बाजरा व गेंहू वाला है।

दोई ने न्यूनतम विचलन की गणना को सारणी बनाकर सरल कर दिया है तथा प्रत्येक संयोजन के लिए सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशत क्षेत्रफलों का अन्तर का वर्ग निकालना एवं उनका योग प्राप्त करना आवश्यक नहीं रहे गया है। इस सारणी में संयोजन की सभी फसलों के प्रतिशत क्षेत्रफल के योग के सन्दर्भ में संयोजन की अगली फसल के क्रान्तिक मान दिया है। अगर अगली फसल का प्रतिशत क्षेत्रफल उस क्रान्तिक मान से अधिक है तो उसे संयोजन में सम्मिलित किया जायेगा अन्यथा नहीं । इस क्रान्तिक मान की सारणी का एक अंश सारणी 3.8 में उद्धत है

इस सारणी की मदद से सवाई माधोपुर जिले की फसलों के प्रतिशत क्षेत्रफल के आधार पर शस्य–संयोजन की गणना इस प्रकार कर सकते है। इस क्रान्तिक मान की सारणी का उपयोग करने के पूर्व फसलों के प्रतिशत क्षेत्र के घटते क्रम में रखकर समुच्चयी ज्ञात कर लेने की सुविधा होती है। चूंकि सारणी में 50 प्रतिशत क्षेत्रफल के लिए क्रान्ति मान नहीं है, किन्तु उतनी फसलों के प्रतिशत क्षेत्र का योग करना पड़ता है। योग 50 प्रतिशत से अधिक हो जाये। यदि एक फसल में 50 प्रतिशत क्षेत्र नहीं हो पाता है तथा यदि क्रान्तिक मान उस फसल के क्षेत्र से अधिक हो जाता है तो अगली फसल का उस सम्मिश्रण में शामिल नहीं करते है। अन्यथा इस तरह अगली फसल का क्षेत्र क्रान्तिमान से अधिक होने पर उसे सम्मिश्रण में शामिल करते जाते है।

दोई द्वारा निर्धारित शस्य संयोजन हेतु क्रान्तिक मान

सारणी संख्या 2.8

फसलों की कोटि	संयोजन में सम्मिलित फसलों के प्रतिशत क्षेत्र का योग									
1	50	55	60	65	70	75	80	85	90	95
2	0.00	5.38	11.27	18.38	27.61					
3	0.00	2.68	5.46	8.66	12.25	16.67				
4	0.00	1.73	3.59	5.63	7.93	10.57	13.83			
5	0.00	1.29	2.68	4.68	5.96	7.75	10.00	12.93		
6	0.00	1.04	2.14	3.34	4.65	6.13	7.85	10.00		
7	0.00	0.85	1.78	2.77	3.85	5.06	6.46	8.17		
8	0.00	0.74	1.52	2.37	3.29	4.32	5.49	6.91	8.84	
9	0.00	0.64	1.38	2.07	2.87	3.76	4.78	5.99	7.60	
10	0.00	0.57	1.18	1.84	2.55	3.33	4.23	5.29	6.69	
11	0.00	0.52	1.06	1.65	2.29	2.99	3.79	4.73	5.94	6.68
12	0.00	0.47	0.97	1.50	2.08	2.71	3.33	4.29	5.35	6.27
13	0.00	0.43	0.88	1.37	1.90	2.49	3.14	3.91	4.49	5.68

स्त्रोतः– के. दोई, (1957) पृ. 310–316

दोई विधि के अनुसार सम्मिश्रण 1992–93 से 2012–13

सारणी संख्या 3.9

वर्ष	सम्मिश्रण वर्ग	फसलों की संख्या
1992–93	बाजरा + सरसों + गेंहू + मूंगफली +चना	5
2002–03	बाजरा + गेंहू + सरसों + मूंगफली +तिल	5
2008–09	सरसों + बाजरा + गेंहू + तिल	4
2012–13	सरसों + गेंहू + बाजरा + तिल	4

स्त्रोत : – भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

सारणी संख्या 3.9 में जिले का दो दशकीय शस्य सम्मिश्रण समझाया गया है। सारणी से स्पष्ट है कि जिले सन् 1992–93 में पाँच फसलीय सम्मिश्रण था। सन् 2012–13 में जिले में चार फसलीय सम्मिश्रण है। सम्मिश्रण में सरसों, गेंहू , बाजरा व तिल की फसलों का योगदान है। सन् 1992–93 में प्रथम स्थान पर बाजरा था जबकि सन् 2012–13 में प्रथम स्थान सरसों ने ले लिया। सरसों की फसल के प्रतिशत व काश्त क्षेत्र में बढ़ोतरी को देखते हुए आशा है कि दो या तीन फसलीय सम्मिश्रण ही रहे जायेगा।

सिंचाई प्रतिरुप

कृषि कार्यों में नमी की कमी होने पर कृत्रिम रुप से पानी देना सिंचाई कहलाता है। कृषि में सिंचाई की प्रमुख भूमिका है। भारतीय कृषि एवं कृषकों के निर्धन होने का प्रमुख कारण यह है कि यहाँ की कृषि अधिकाशतः वर्षाधीन है क्योंकि अनावृष्टि तथा अल्पवृष्टि के समय कृषकों के पास कृषि विनास को रोकने के लिए उपाय नहीं होता है। रजा मंहेदी के अनुसार भारत में सिंचाई ही सर्वस्व है जल का महत्त्व यहाँ भूमि से भी अधिक है, क्योंकि इसमें भूमि की उत्पादकता में छः गुनी वृद्धि हो जाती है, जबकि इसके अभाव में भूमि कुछ भी उत्पन्न नहीं कर सकती।[22] कृषि विकास के लिए

धरातल , मृदा, जलवायु आदि प्राकृतिक साधनों के साथ–साथ सिंचाई सुविधाओं की आज परम आवश्यकता है। आधुनिक बीज, खाद और औषधियों का सिंचाई सुविधाओं की उपलब्धता पर ही आधारित है।[23] वर्षा के अभाव या अधिक फसल उत्पादन करने की लालसा से फसलों को जल प्रदान करना मानव प्राचीन काल से करता आ रहा है। विज्ञान के विकास एवं मानव सभ्यता का साधन सम्पन्न होने के फलस्वरुप आज बड़े–बड़े जलाशयों एवं विशाल नहरों का निर्माण किया गया है। जल उपलब्ध होने पर उर्वरकों, उन्नत शील बीजों तथा नवीन कृषि विधियों के प्रयोग से उत्पादकता को शीघ्र ही बढ़ाया जा सकता है।[24]

सिंचाई का महत्त्व

देश में सिंचाई का उतना महत्त्व है उतना ही अध्ययन क्षेत्र के भौगोलिक परिवेश एवं कृषि प्रारुप देखने से ज्ञात होता है कि जिले में जनसंख्या वृद्धि दर को देखते हुए खाद्य उत्पादन के लिए क्षेत्र में सिंचाई का अत्याधिक महत्त्व रहा है। कृषि विकास के लिए सिंचाई बहुत जरुरी है। उदाहरण के लिए राजस्थान का गंगानगर कभी शुष्क जिले के लिए प्रसिद्ध था लेकिन आज वहाँ अच्छी तरह से सिंचाई करके फसलें ली जाती है।[25]

अध्ययन क्षेत्र में कृषि विकास स्तर में सिचाई का महत्त्व निम्न कारणों से है–

1 वर्षा का अभाव :– द्वितीय अध्याय में वर्षा के वितरण का वर्णन किया गया है। उस से विदित है कि जिले में वर्षा की कमी व सिंचाई के साधनों के अभाव में खरीफ फसलें नहीं हो पाती क्योंकि खरीफ फसलें वर्षा पर निर्भर है। क्षेत्र में अकाल के पड़ने पर कृषक अपने खेत छोड़ कर मजदूरी करने लग जाते है। रबी फसले सिंचाई पर आधारित होती है। लेकिन वे भी वर्षा के अभाव में नहीं पनप पाती है। अतः सिंचाई साधनों में वृद्धि कर जिले के काश्त क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है।

2 वर्षा की अनियमिता :– जिले में वर्षा का अगमन एवं प्रस्तान का समय भी निश्चित नहीं है। फसलों के लिए जल की आवश्यकता एवं वर्षा के समय तालमेल नहीं हो पाता है। खरीफ फसले वर्षा आश्रित होने के कारण सूखने लगती है और अकाल की स्थिती बनने लगती है। अतः वर्षा की अनियमिता के कारण कृषि कार्यों हेतु सिंचाई की आवश्यकता होती है।

3 बंजर भूमि के विकास हेतु :– कृषि योग्य बंजर भूमि को काश्त क्षेत्र में बदलने के लिए सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। जिले में 1992–93 में 12.94 प्रतिशत भूमि कृषि योग्य बंजर भूमि थी जो 2012–13 में कम हो कर 4.36 प्रतिशत रहे गई। अतः काश्त क्षेत्र के विकास हेतु सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

4 सघन कृषि हेतु :– जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ उत्पादन में वृद्धि भी आवश्यक है। सघन कृषि उत्पादन हेतु कृषि में उन्नत बीज रासायनिक खाद और कीटनाशक औषधियों का प्रयोग आवश्यक है एवं इन से अधिक लाभ पाने के लिए सिंचाई का अत्याधिक महत्त्व है।

5 सिंचाई करने से कुछ हानिकारक कीट तथा बीमारियाँ पानी के प्रभाव से नष्ट हो जाती है।

6 सर्दी की ऋतु में सिंचाई करके फसल को पाले से बचाया जा सकता है। जैसे अध्ययन क्षेत्र में सरसों व अरहर की फसल में पानी देना इसी बात की और संकेत करता है।

7 रबी के मौसम में काश्त क्षेत्र के विस्तार एव कृषि कार्यों हेतु सिंचाई का अत्याधिक महत्त्व होता है।

8 कई व्यापारिक फसलों एवं फलों और साग सब्जियों के उत्पादन के लिए सिंचाई का अत्याधिक महत्त्व हैं

9 सिंचित क्षेत्रों में असिंचित क्षेत्र की अपेक्षा अधिक उत्पादन होता है।

10 भूमि में हानिकारक लवणों के जमाव की समाप्त करने हेतु पानी के साथ जिप्सम मिलाकर हानिकारक प्रभाव को समाप्त किया जा सकता है।[26]

सिंचाई सुविधाओं का विकास

सिंचाई सुविधाएं मानव के अपने बुद्धि बल के आधार पर विकसीत की है। प्राचीनकाल में मानव नदियों के पानी को अवरुद्ध कर के खेतों तक पहुँचाता था लेकिन अब कृषि क्षेत्रों के विस्तार के लिए भूमिगत जल का उपयोग भी मानव करने लगा है। जगह–जगह नदियों पर बांध बनाये जा रहे है जिससे सिंचाई की जा रही है।

जिले में स्वतन्त्रता से पूर्व सिंचाई के विकास को देखा तो यह नगण्य सा प्रतीत होता है। पहले भारत में जागीदारी प्रथा थी। अध्ययन क्षेत्र भी इस प्रथा से अछुता नहीं था और यह क्षेत्र रियासतों में बटां हुआ था। अधिकांश सामन्तों ,जागीदारों का मुख्य ध्यान मात्र अपनी सुख–सुविधाओं का विस्तार करना था तथा कृषि विकास के क्षेत्र में अधिक ध्यान नहीं दिया गया। स्वतन्त्रता के बाद भारत सरकार तथा राज्य सरकार ने अनेक योजनाएं बनायी इन योजनाओं के माध्यम से सिंचाई विकास कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है। पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा जिले में सिंचाई सुविधाएं बढ़ाई गई है। जैसे राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) द्वारा सवाई माधोपुर जिले में जिला ग्रामीण उद्योग परियोजना 'ड्रिप' का क्रियान्वयन किया गया है। और किसानों

को कुएं एवं नलकूपों के लिए बैंक द्वारा आर्थिक सुविधाएं उपलब्ध कराना आदि प्रमुख है।

सिंचाई के स्त्रोत एवं साधन

अध्ययन क्षेत्र में वर्षा जल के अतिरिक्त जल की आपूर्ति धरातलीय एवं भूमिगत जल द्वारा की जाती है। धरातलीय जल का उपयोग नहरों, झीलों, तालाबों, पोखरों तथा नदियों द्वारा किया जाता है, जबकि भूमिगत जल का उपयोग कूपों तथा नलकूपों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार क्षेत्र में धरातलीय एवं भूमिगत जल का उपयोग सिंचाई के रुप में नगरों, कूपों, नलकूपों, तथा तालाबों द्वारा किया जाता है। स्वतन्त्रता के पूर्व जिले में सिंचाई के साधनों में कुछ कूप तथा झील व तालाब ही प्रमुख थे किन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में सिंचाई को प्राथमिकता दी गई जिसके फलस्वरुप इस क्षेत्र की सिंचित भूमि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। अध्ययन क्षेत्र में भूमिगत एवं सतही जल स्त्रोत से सिंचित क्षेत्र का वितरण निम्न प्रकार से है–

सिंचाई के साधन भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न है। इस विभिन्नता का प्रमुख कारण भौगोलिक परिस्थितियों की भिन्नता है। जिसके कारण सिंचाई के कई साधन प्रयुक्त होते है। सवाई माधोपुर जिले में सिंचाई के प्रमुख साधन कुऐं , नलकूप, नहरें एवं तालाब है। जिले में लगभग 40 प्रतिशत काश्त क्षेत्र अभी भी वर्षा व शुष्क कृषि पर निर्भर है। सिंचाई के साधनों का सारणी संख्या 3.10 में दर्शाया गया है। जिले में कुल सिंचित क्षेत्रफल का 88.62 प्रतिशत भाग कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचित है। (सारणी संख्या 3.10)

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि जिले के कुल सिंचित व शुद्ध सिंचित क्षेत्र में वृद्धि हुई है। सन् 1992–93 में कुल सिंचित क्षेत्र 28.94 प्रतिशत था जो बढ़कर सन् 2002–03 में 45.05 प्रतिशत हो गया सन् 2012–13 में 60.88 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र है। पिछले 20 वर्षों में जिले में 31.94 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र की वृद्धि हुई है। जिले में सिंचाई के प्रमुख साधनों में कुओं व नलकूपों का क्रमशः प्रथम व द्वितीय स्थान है।

जिले में पिछले 20 वर्षों में कुओं के सिंचित क्षेत्र में 32.32 प्रतिशत क्षेत्र की कमी हुई। इस का प्रमुख कारण वर्षा की अनियमिता व अभाव और इनका स्थान नलकूपों ने ले लिया है। जिले में तालाबों से सिंचित क्षेत्रफल सन् 1992–93 से 2012–13 तक नगण्य रहा है। आरेख संख्या 3.8 में जिले में विभिन्न सिंचाई साधानों द्वारा सिंचित क्षेत्र में हुई वृद्धि व कमी दर्शायी

FLATE No. 10

I

II

सिंचाई के साधन– गिलाई सागर तालाब

विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित भूमि का वितरण

सन् 1992–93 से 2012–13

सारणी संख्या 3.10

(प्रतिशत में)

क्र.सं.	सिंचाई के साधन	वर्ष				परिवर्तन सन् 1992–93 से 2012–13
		1992 93	2002 03	2008–09	2012–13	
1	कुएं	81.00	77.26	56.00	48.68	–32.32
2	नलकूप	2.20	22.65	32.02	39.94	+37.74
3	तालाब	0.21	0.48	1.47	1.67	+1.46
4	नहरें	16.47	1.41	4.03	4.79	+11.68
5	अन्य	0.12	0.09	6.38	6.88	+6.76

स्त्रोत : – भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

कुएं

भूमिगत जल स्त्रोतों के उपयोग हेतु कुएं बनाकर के पानी को सिंचाई के उपयोग में लाया जाता है। आरेख संख्या 3.8 से स्पष्ट है कि सन् 1992–93 में कुओं द्वारा 81. 00 प्रतिशत भाग पर सिंचाई की जाती थी। जबकि सन् 2012–13 में 48.68 प्रतिशत क्षेत्र में सिंचाई की गई है। पिछले 20 वर्षों में इसमें 32.32 प्रतिशत की कमी हुई है। इसका प्रमुख कारण वर्षा की कमी तथा भूमिगत जल स्तर का निचे चला जाना है। जिले में सर्वाधिक कमी–उत्तर व मध्य वृर्ति क्षेत्र में हुई। सर्वाधिक कुओं द्वारा सिंचाई उत्तर–पूर्व व मध्य वृर्ति क्षेत्र में होती है। सबसे कम दक्षिण भाग में होती है।

FLATE No. 11

I

II

सिंचाई के साधन– ड़ीजल पम्प

सिंचाई के साधन–ट्यूबबेल

आरेख संख्या 3.8

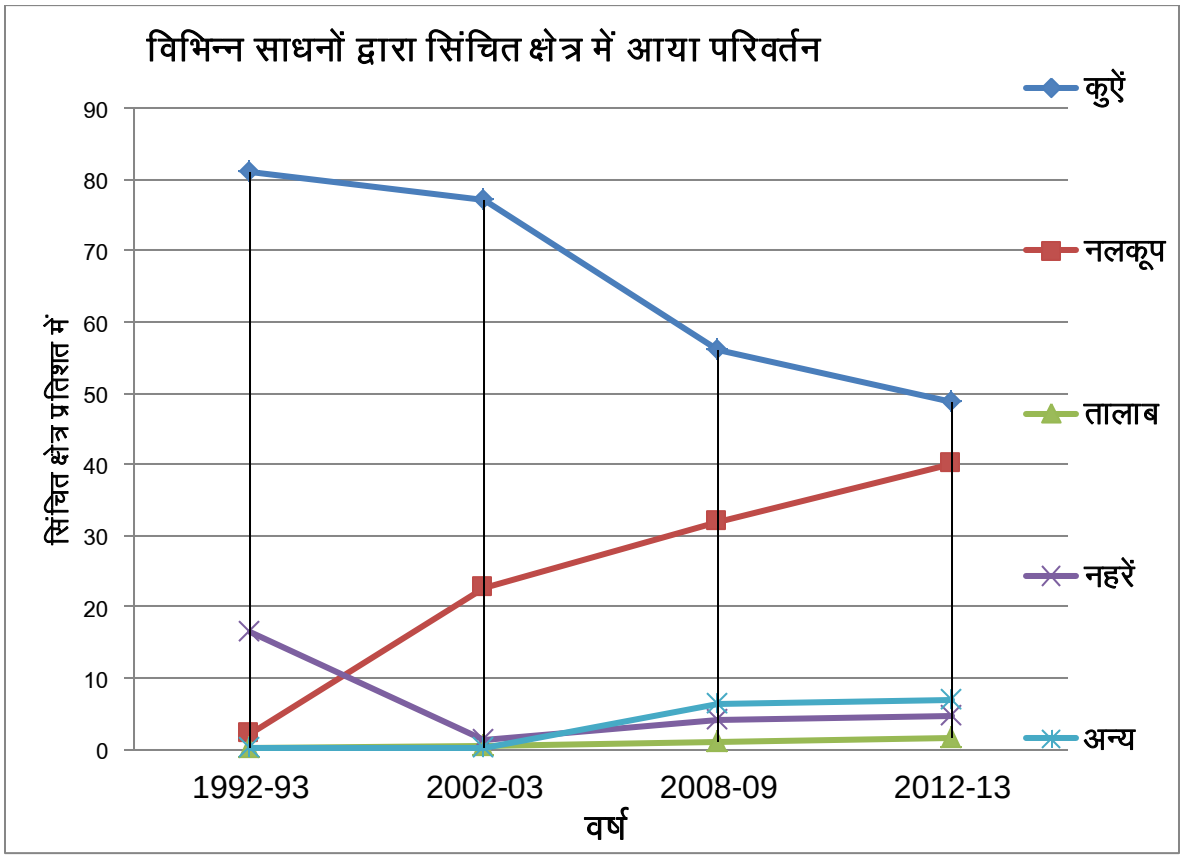

नलकूप

भूमिगत जल स्त्रोतों में दुसरा महत्त्वपूर्ण साधन नलकूप है। सारणी संख्या 3.10 व आरेख संख्या 3.8 से स्पष्ट है कि सन् 1992–93 में नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल मात्र 2.20 प्रतिशत था लेकिन सन् 2012–13 में बढ़कर 39.94 प्रतिशत हो गया है। जिले में दो दशकों में 37.14 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस का प्रमुख कारण वर्षा की कमी के कारण भूमिगत जल का अधिक से अधिक उपयोग किया जाना रहा है। जिले में सन् 1992–93 में नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्र में वृद्धि हुई है।

जिले में नलकूपों द्वारा सिंचाई दक्षिण व दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्र में होती है। सबसे कम उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में सिंचाई होती है। इसका प्रमुख कारण नलकूपों के जल में खारेपन की अधिकता है।

नहरें

जिले में नहरे सिंचाई का तीसरा मुख्य साधन है। नहरों द्वारा कुल सिंचित क्षेत्र का सन् 1992–93 में 16.47 प्रतिशत था जो सन् 2012–13 में घटकर 4.79 प्रतिशत

रहे गया है। नहरों द्वारा सिंचित क्षेत्र में पिछले 20 वर्षों में 11.68 प्रतिशत की कमी हुई है। जिले में दो दशकों में सर्वाधिक कमी दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्र में हुई है।

जिले में सन् 2012 में सर्वाधिक नहरों से सिंचित क्षेत्र जहारा, भाड़ौती, फलौदी व बहरावण्डा खुर्द भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में 1000 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र पर सिंचाई होती है। 16 भू अभिलेख वृतों में नहरों द्वारा सिंचाई नहीं होती है जबकि कुछ भू–अभिलेख वृतों में नहरों से सिंचित क्षेत्र नगण्य है। इसका प्रमुख कारण धरातलीय विषमता रहा है।

तालाबों

जिले में तालाबों द्वारा सिंचाई नाम मात्र होती है। सन् 1992–93 में मात्र 0.21 प्रतिशत क्षेत्र में तालाबों द्वारा सिंचाई होती थी जो सन् 2012–13 में 1.67 प्रतिशत क्षेत्रफल पर सिंचाई हुई है। (सारणी संख्या 3.10) पिछले 20 वर्षो में जिले में 1.46 प्रतिशत की मामूली वृद्धि हुई है। (आरेख संख्या 3.8) इसका प्रमुख कारण वर्षा का अभाव रहा है। उपरोक्त सिंचाई के साधनों से स्पष्ट है कि सवाई माधोपुर जिले में सिंचाई का सर्वसुलभ साधन कुएं व नलकूप है। जिले का 88.62 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित है। कुए व नलकूपों का पानी अन्य साधनों की अपेक्षा फसलों के लिए लाभदायक होता है।

सिंचाई गहनता

सिंचाई गहनता कृषि प्रारूप एवं विकास के स्तर को मापने का प्रमुख मापक है। क्योंकि आज कृषि विकास हरित क्रांति के आगमन के कारण पानी की अधिक आवश्यकता होती है। यदि हरित क्राति के आदानों का प्रयोग नहीं किया जाये तो उत्पादन कम हो जाता है। अतः सिंचाई के माध्यम से कृषि उत्पादकता स्तर प्रभावित होता है। प्रस्तुत अध्ययन में सिंचाई गहनता से तात्पर्य कुल काश्त भूमि क्षेत्रफल में सिंचित क्षेत्रफल का अनुपात ज्ञात करना है। सिंचाई गहनता ज्ञात करने हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।[27]

$$\text{सिंचाई गहनता} = \frac{\text{कुल सिंचित भूमि का क्षेत्रफल}}{\text{कुल काश्त भूमि का क्षेत्रफल}} \quad 100$$

इससे प्राप्त परिणामों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि क्षेत्र काश्त क्षेत्रफल के कितने प्रतिशत भाग पर अभी और सिंचाई के स्त्रोत के विकास की आवश्यकता है। अर्थात कुल काश्त क्षेत्र की तुलना में क्षेत्र में उपलब्ध सिंचाई के साधन पर्याप्त अथवा कम है। सिंचाई के साधनों की उपलब्धता होने पर सिंचाई क्षेत्र

के विकास एवं वृद्धि की योजना बनाई जा सकती है। यदि यह अनुपात 100 आता है तो सिद्ध होता है कि किसी क्षेत्र में जितना काश्त क्षेत्रफल है। वह सभी सिचिंत है और 100 से कम निम्न सिंचित सघनता को बताता है। यह काश्त क्षेत्रफल के अनुपात को व्यक्त करता है। सिंचाई गहनता का अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि जिला स्तर पर सिंचाई गहनता 2002–03 में 44.36 प्रतिशत तथा 2012–13 में 59.13 प्रतिशत हो गयी। इस प्रकार गत 10 वर्षों में इसमें 14.77 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

सिंचाई गहनता

सिंचाई गहनता जिले में सन 2002–03 में 44.36 प्रतिशत थी , जो सन् 2012–13 में बढ़कर 59.13 प्रतिशत हो गयी । एक दशक में सिंचाई गहनता में 14.77 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जिले में सन् 2012–13 में सर्वाधिक सिंचाई गहनता दक्षिण–पश्चिम व दक्षिणी–पूर्वी भाग में पायी जाती है। यहाँ 70 प्रतिशत से अधिक सिंचाई गहनता है। इन भागों में सिंचाई गहनता अधिक होने का प्रमुख कारण चम्बल व बनास नदी बेसीन रहा है। क्षेत्र के दक्षिणी भाग में 60–70 प्रतिशत सिंचाई गहनता है व उत्तर–पूर्व में 50 से 60 प्रतिशत सिंचाई गहनता पायी जाती है। उत्तर व मध्यवर्ती क्षेत्रों में 40 प्रतिशत से कम सिंचाई गहनता पायी जाती है। (मानचित्र संख्या 3.9**A**) इस का प्रमुख कारण यहाँ तालाबों व कुओं द्वारा सिचाई की जाती है, अतः वर्षा पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है। यहीं कारण है कि दक्षिणी क्षेत्र की अपेक्षा उत्तरी क्षेत्र में सिंचाई गहनता का प्रतिशत कम पाया जाता है।

सिंचाई गहनता में आया परिवर्तन

जिले में 2002–03 के दोहरान सिंचाई गहनता में अत्याधिक परिवर्तन आया है। मानचित्र सं 3.9B के अनुसार जिले में सर्वाधिक परिवर्तन दक्षिण–पूर्वी भाग में हुआ है, यहाँ 35 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई है। इस का प्रमुख कारण नलकूपों की संख्या में वृद्धि व नहरों के निर्माण से सिंचित क्षेत्र मे वृद्धि होने के कारण यहाँ सिंचाई गहनता में अधिक वृद्धि हुई है। जिले के दक्षिण–पूर्वी क्षेत्रों में 25–35 प्रतिशत की वृद्धि हुई । उत्तर व पूर्वी क्षेत्र में यह वृद्धि 15 से 25 प्रतिशत रही है, जबकि जिले में सबसे कम सिंचाई गहनता में वृद्धि उत्तर व मध्यवर्ती तथा पूर्वी क्षेत्र में 15 प्रतिशत से भी कम हुई है। इसका प्रमुख कारण वर्षा कम होने से भूमिगत जल स्तर भी कम हो गया है। यहीं कारण है कि सिंचाई कुओं व तालाब द्वारा सिंचाई होती है, अन्य साधनों का यहाँ अभाव है।

कुओं का जल स्तर भी प्रतिवर्ष घटता जा रहा है। इसलिए जरूरी है कि जिले में सिंचाई अन्य साधनों जैसे नहरों, नलकूपों आदि का विकास कर सिंचित क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है। जो कि प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है लेकिन और भी सम्भावनाएं

MAP No. 3.9

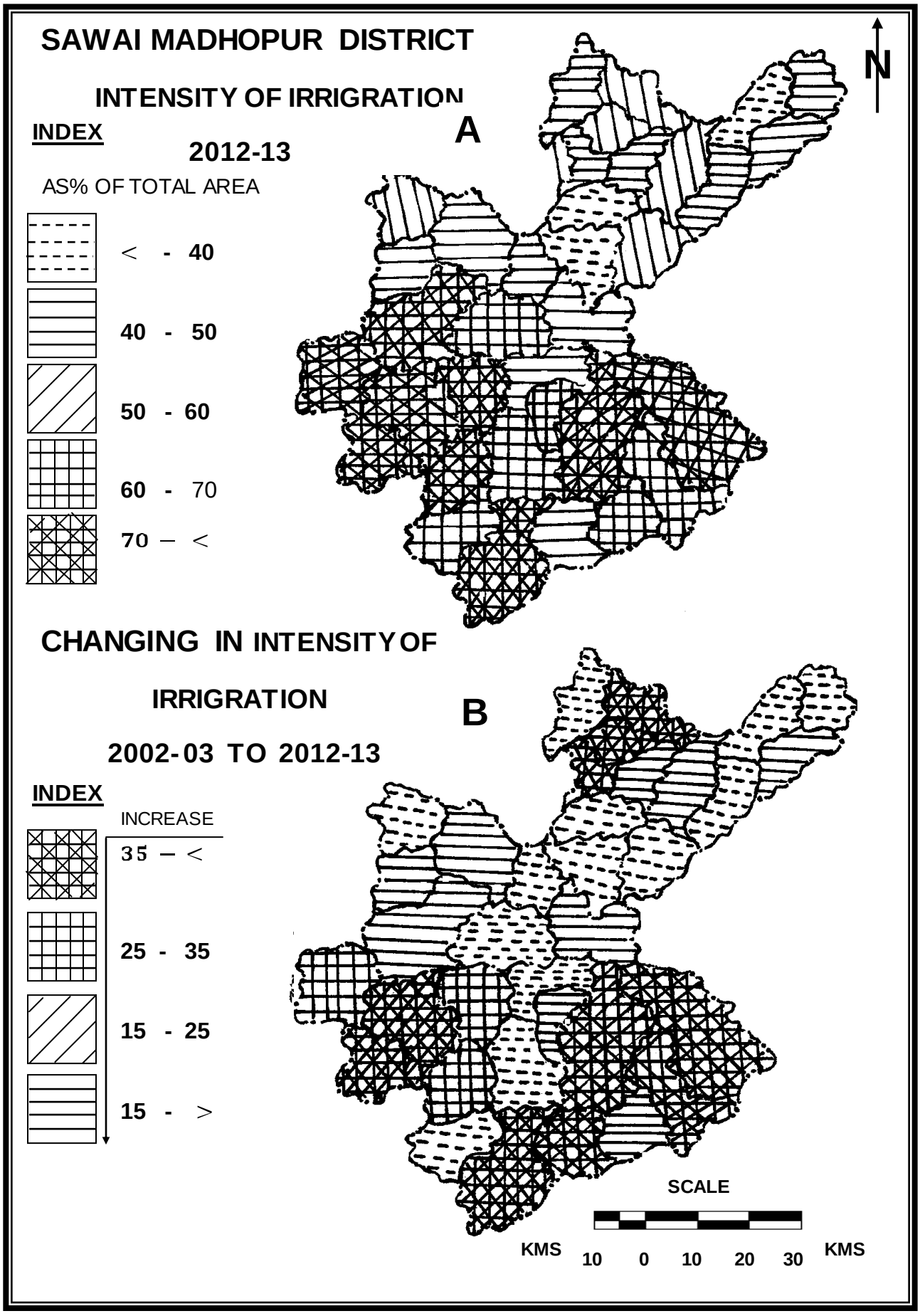

SAWAI MADHOPUR DISTRICT
INTENSITY OF IRRIGATION
INDEX
2012-13
AS% OF TOTAL AREA
< - 40
40 - 50
50 - 60
60 - 70
70 – <
A
N
CHANGING IN INTENSITY OF IRRIGATION
2002-03 TO 2012-13
INDEX
INCREASE
35 – <
25 - 35
15 - 25
15 - >
B
SCALE
KMS 10 0 10 20 30 KMS

है। अतः कृषि के पोषणीय विकास हेतु कुओं के अतिरिक्त दुसरे साधनों का विकास करना जरूरी है।

कृषि के पोषणीय विकास के लिए जरूरी है कि सिंचाई के साधनों का विकास किया जाये लेकिन उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि जिले में सन 2012 में 88.62 प्रतिशत से अधिक सिंचाई कुओं व नलकूपों द्वारा होती है। जिसके कारण भूमिगत जल स्तर प्रतिदिन गिरता जा रहा है। ऊर्जा की अधिक खपत होती है और प्रति हेक्टेयर में दुसरे साधनों की अपेक्षा लागत भी अधिक आती है। इसलिए जरूरी है कि यहाँ पर वर्षा के पानी का सदुउपयोग किया जाए अतः नदी नालों पर बाँध बनाकर क्षेत्र की भावी पीढ़ी के लिए सिंचाई की व्यवस्था हो सकेगी ।

जिले में शुद्ध सिंचित व असिंचित क्षेत्र मे आया परिवर्तन

सन 1992–93 से 2012–13

सारणी संख्या 3.11

सन	सिंचित क्षेत्र प्रतिशत	असिचित क्षेत्र प्रतिशत
1992–93	28.93	71.05
2002–03	45.05	54.95
2008–09	52.86	47.14
2012–13	60.00	40.00

स्त्रोत : – भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

सारणी संख्या 3.11 के अनुसार सन 1992–93 में शुद्ध सिंचित क्षेत्र 28.93 प्रतिशत था जो कि 2002–03 में 45.05 प्रतिशत व 2008–09 में 52.86 प्रतिशत था जो बढ़कर सन् 2012–13 में 60.00 प्रतिशत हो गया है। गत 20 वर्षों में शुद्ध सिंचित क्षेत्र में 31.07 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले मे 20 वर्षों से निरन्तर क्षेत्र में वृद्धि हो रही है। (आरेख सं 3.9) इसका प्रमुख कारण व्यापारिक फसलों की लालसा, सरकार द्वारा चलाया जा रहे किसान क्रेडिट कार्ड योजनाएं तथा आधुनिक आदानों के कारण

FLATE No. 12

I

II सिंचित क्षेत्र

असिंचित क्षेत्र

सिंचित क्षेत्र में परिवर्तन होता रहता है। यह वृद्धि जिले के कृषि विकास स्तर को दर्शाती है।

आरेख संख्या 3.9

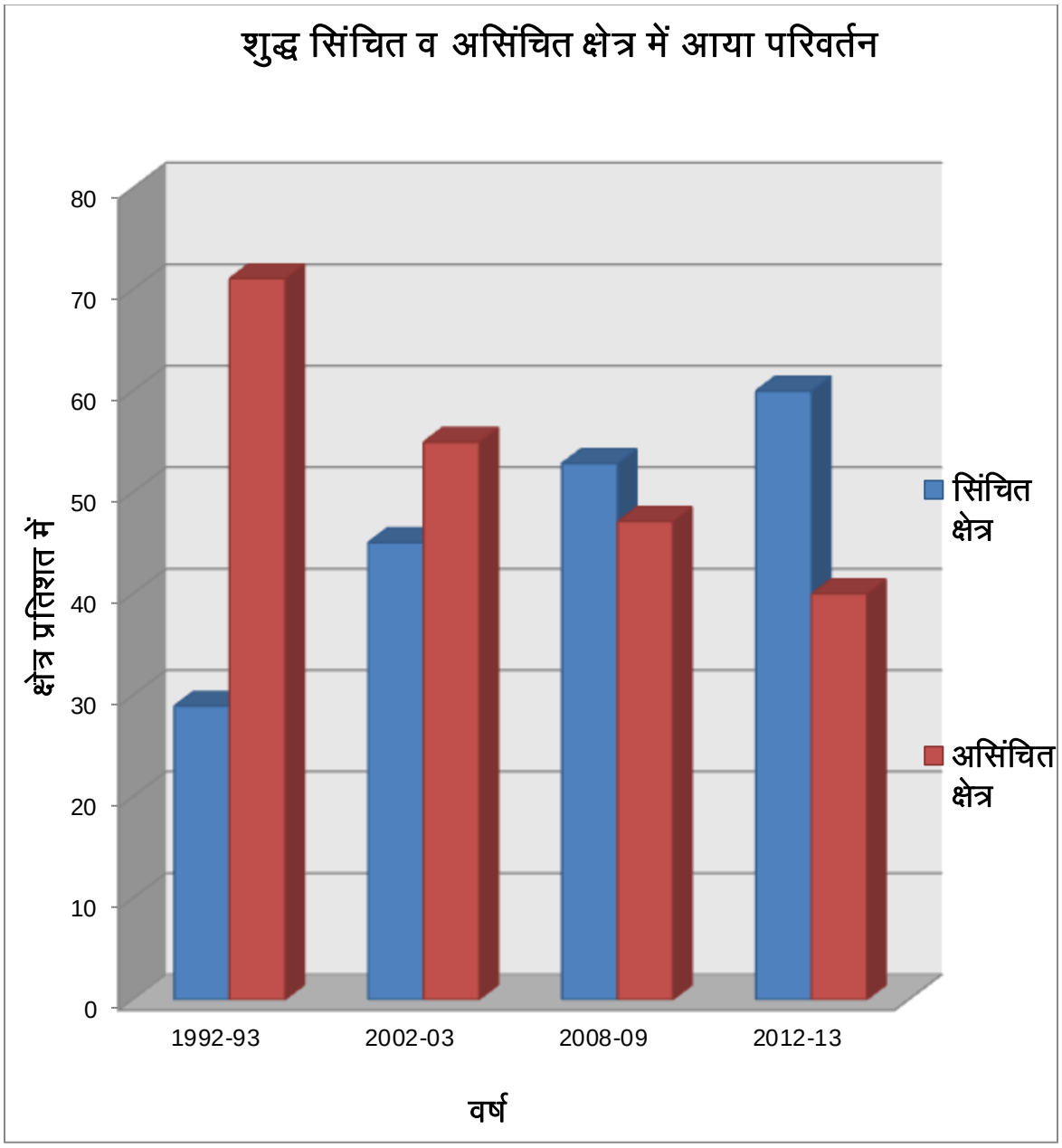

फसलों के अनुसार सिंचित क्षेत्र

पूर्व विवरणानुसार सवाई माधोपुर जिले में खरीफ मौसम में फसल उत्पादन लगभग पूर्णरूप से वर्षाश्रित है खरीफ मौसम में मिर्च, चावल , सोयाबीन ,गन्ना मौसमी फसलों हेतु वर्षा न होने पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। परन्तु इन फसलों को क्षेत्र में कम बोया जाता है। लेकिन फिर भी जिले में सन 2012–13 में 607 हेक्टेयर

क्षेत्र में चावल की फसल को सिंचित किया गया है क्षेत्र में 2633 हेक्टेयर मिर्च व 484 हेक्टेयर सोयाबीन और 42 हेक्टेयर गन्ना सिंचाई के द्वारा तैयार किया गया है। जिले में रबी की फसल वर्षा न होने पर पूर्व से सिंचाई पर निर्भर रहती हैं सन 2012–13 में रबी की फसलों में प्रथम क्रम की फसल सरसों थी जो कि सिंचाई के बिना भी हो सकती है। लेकिन अधिक उत्पादन की लालसा ,पाले से रक्षा ,आधुनिक बीज और रासायनिक खादों के उपयोग के कारण उसमें भी अब सिंचाई की आवश्यकता होती है। सन 2012–13 में 130432 हेक्टेयर सरसों सिंचाई द्वारा तैयार किया गया है। जिले के कुल सिंचित क्षेत्र के 58.98 प्रतिशत क्षेत्र सरसों का है। गेंहू का 69008 हेक्टेयर जौ 1135 हेक्टेयर व चना 2714 हेक्टेयर फसलें सिंचाई द्वारा तैयार की गई है। (सारणी 3.11) इस प्रकार रबी मौसम में खाद्यान्न तिहलन , दालें सभी को कम मात्रा में सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है जो निम्न प्रकार है–

सारणी संख्या 3.11 से स्पष्ट है कि रबी फसलों की अपेक्षा खरीफ फसलो में जल की आवश्यकता अधिक पड़ती है। हम उन फसलों को प्राथमिकता देना चाहिए जो की कम जल से अपना जीवन चक्र पूर्ण कर अपेक्षित उत्पादन देती है, जैसे सरसों, चना, तथा खरीफ में बाजरा व ज्वार आदि। जिले के सिंचित क्षेत्र में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है और खाद्यान फसलों की अपेक्षा व्यापारिक फसलों में तिहलन का उत्पादन भी बढ़ता जा रहा हैं, क्योंकि तिहलन फसलों में विशेषकर सरसों का प्रमुख स्थान है।

शुष्क कृषि पद्धति

वर्तमान में शुष्क कृषि पद्धति पर्यावरण और कृषि विकास के लिए अति उत्तम है। इस पद्धति को किसान प्राचीन काल से ही व्यवहार में लाते आ रहे है। प्रारम्भ में सभी क्षेत्र कृषि के लिए अनुकूल नहीं थे । अतः कुछ क्षेत्रों में शुष्क कृषि पद्धति के द्वारा कृषि होती थी जैसे कि नदी के बेसिन जिसमे वर्षाकाल के बाद पानी नहीं होने पर शुष्क कृषि पद्धति के आधार पर कृषि के लिए उपयोगी हो जाते थे आज भी क्षेत्र की नदियों के बेसिनों में इस प्रकार की खेती करना आम बात है। गर्मियों की सब्जियाँ और तरकारियाँ व फल क्षेत्र के नदी–बेसिनों में अभी एक परम्परा के अनुसार होने लगी है। वर्तमान सन्दर्भ में खाधानों की अधिक मांग, वर्षा की कमी और कृषि विकास की रक्षा के लिए आज शुष्क कृषि पद्धति को नया मोड़ मिला है। शुष्क कृषि पद्धति कृषि व्यवस्था, बदलते मानविय परिवेश में नवीन तकनीक व वैज्ञानिक दृष्टिकोण के लिए नई कृषि पद्धति कही जा सकती है। इस लिए इसमें नाम के अनुरूप अनेक भूगोलवेत्ता व कृषि विद्वानों के द्वारा इसे परिभाषित गया है। कृषि मे वर्षा पूरित भूमि के सन्दर्भ मे शुष्क कृषि को लिया जाता हैं क्योंकि वर्षा पूरित भूमि ही शुष्क कृषि के रूप में उपलब्ध होती हैं। ऐसी भूमि जिस पर वर्षा के आधार पर फसलें बोयी जाती है। लेकिन शीतकाल में पानी के अभाव में भूमि बेकार पड़ी रहती है, इस प्रकार इस बेकार भूमि का उपयोग ही शुष्क कृषि की विचारधारा है। इसलिए ऐसी भूमि में कृषि

करना शुष्क कृषि कहलाती है। वर्षा के अभाव में कोई सिंचाई के साधन उपलब्ध न होने पर खेती करना शुष्क कृषि कहलाती है। अतः स्पष्ट है कि फसलें मिट्टी में व्याप्त नमी पर निर्भर करती है।[28]

फसलों के अनुसार सिंचित क्षेत्र 2012–13

सारणी संख्या 3.12

(सिंचित क्षेत्र हेक्टेयर में)

रबी की सिंचित फसलें		खरीफ की सिंचित फसलें	
फसलें	सिंचित क्षेत्र	फसलें	सिंचित क्षेत्र
गेंहू	69008	मिर्च	2633
सरसों	130432	चावल	607
चना	2714	सोयाबीन	484
जौ	1135	गन्ना	42

स्त्रोत : – भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

वर्षा की कमी में की जाने वाली फसलों को प्राकृतिक तौर पर नमी प्राप्त होती है और उसी के आधार पर फसलें पानी की आवश्यकता को पूर्ण कर लेती है। शुष्क कृषि में वे ही फसलें पनप पाती है। जिनकों पानी की आंशिक आवश्यकता होती है। इसलिए कृषक अनेक तरीकों से कृषि में नमी बनाये रखता है। विशेष खेत में बार–बार हल चलाकर जिले में फेरी व पड़त विधि द्वारा खेतों में नमी बनायी रखी जाती है। जिले में शुष्क कृषि पद्धति में सरसों, चना और जौ की फसलें अधिक होती है

प्रमुख फसलों में जल की आवश्यकता

सारणी संख्या 3.13

रबी फसल	शुद्ध जल की आवश्यकता	खरीफ फसल	शुद्ध जल की आवश्यकता
गेंहू	500	ज्वार	600
चना	300	बाजरा	450
सरसों	400	मक्का	700
अलसी	300	सोयाबीन	600
धनिया	400	धान (चावल)	600
जौ	450	मूंगफली	750

स्त्रोत :– भू–राजस्व मण्डल , अजमेर।

जिले में सन 2012–13 में कुल काश्त लगभग 79 प्रतिशत क्षेत्र में सिंचाई द्वारा फसलें बोयी गयी है। शेष 21 प्रतिशत में कृषि फसलें या तो वर्षा होने पर ही बोयी जाती है या शुष्क कृषि पद्धति द्वारा बोयी जाती है। खरीफ की फसलें तो वर्षा होने पर ही बोयी जाती है लेकिन रबी फसलों में सरसों, चना और तारामीरा शुष्क कृषि पद्धति द्वारा होती है।

उपयुक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि शुष्क कृषि पद्धति जिले के कृषि विकास के स्तर में अहम भूमिका अदा कर रही है। वर्षा के अभाव में, सिंचाई के साधनों की कमी और फसल की विशेषताओं के आधार पर शुष्क कृषि पद्धति अधिक लाभदायक सिद्ध

हो सकती है। शुष्क कृषि से अधिक लाभ प्राप्त नहीं किया जा सकता है। लेकिन कम लागत में पौष्टिक आहार जरूर मिल सकते है अतः हमें परती भूमि पर कम लागत से शुष्क कृषि करनी चाहिए जिससे काश्त क्षेत्र में वृद्धि होगी।

प्रमुख फसलो में शुष्क कृषि क्षेत्र 2012–13

सारणी संख्या 3.14

फसलें	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	क्षेत्रफल प्रतिशत में
सरसों	40732	23.79
चना	11690	81.15
तारामीरा	2121	95.92

स्त्रोत : – भू–अभिलेख कार्यालय, सवाई माधोपुर।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. रेले, वी. (1958) : लैण्ड रिसोर्स इकोनॉमिक्स ; पृष्ट–2
2. पारबूव, बी.एस. (1984), :''भारत विकास की ओर राष्टीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद'', पृष्ट–31।
   डॉ. एच.एन. कोली (1996):''पर्यावरण एवं मानव संसाधन'', पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, प्रथम संस्करण, पृष्ट–125।
3. डॉ. डी.एस.श्रीवास्तव (1993) : कृषि के परिवर्तनशील प्रतिरूपों का भौगोलिक अध्ययन, शाहजापुर जनपद,क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1993, पृष्ट–65।
4. शर्मा, सुरेश चन्द (1970) : 'जिला इटावा में भूमि उपयोग' उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, अकं 6, पृष्ट–12 ।
5. उल्लेखित

6. द इण्यिन सोसाइटी ऑफ : ''एग्रीकल्चरल इकोनोमिक्स'' बम्वई, रीडिग्स इन लैण्ड यूटीलाईजेशन' 1957' पृष्ट–21 ।
7. डॉ. रामप्रसाद (2007) डॉ.सत्यवीर यादव : ''कृषि पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण नियोजन'', प्रथम संस्करण 2007, पृष्ट–60 ।
8. सिंह' बी. वी. (1990) : कान्सेटर ऑफ लैण्ड यूटीलाइजेशन इण्डियन ज्योग्राफिक रिव्यू, पो.–2, पृष्ट–52–63।
9. नन्द किशोर (1990) : ''ग्रामीण राजस्थान में सामाजिक आर्थिक परिवर्तन के भौगोलिक आधार'', पोइन्टर पब्लिसर'जयपुर' द्वितीय संस्करण 2005, पृष्ट–36।
10. चौहान'डी.एस. (1966) :''स्टैडिज इन दा यूटीलाइजेशन ऑफ एग्रीकल्चरल लैण्ड'', प्रथम संस्करण, 1966 पृष्ट–48 ।
11. Zobler, Leonard (1962) : "The Economic Historical View of Natural resoures use and Conservation" Economic geography, Vol.38, p-89 .
12. जिला सांख्यिकीक : ''1992–93, 2002–03, 2008–09 व 2012–13'', सवाई माधोपुर, राजस्थान ।
13. जोशी, (1972) : ''नर्मदा बेसिन का कृषि भूगोल'', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भूगोल, पृष्ट 851
14. सिंह, जसवीर (1976) :''एग्रीकल्चर ज्योग्राफी ऑफ हरियाणा'', विशाल पब्लिकेशन, हरियाणा, 1976 पृष्ट सं. 309–10
15. Bhatia, S.S. (1976) :"A new Measure of Crop Efficiency in Uttarpradesh" Economic Geography, Journal Volume 43 No.3.
16. मोधे, बंसत व जैन (1985) :''राजस्थान में कृषि उत्पादन'' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ट सं. 108–111
17. भल्ला, एल.आर. (2007) :''राजस्थान का भूगोल'', कुलदीप पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, सोलवां संस्करण 2007, पृष्ट सं. 73
18. डॉ. एस.एस.गर्ग (2010) :''भारत का भूगोल'', ओमेगा पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण 2010, खण्ड –स, अर्थव्यवस्था, पृष्ट सं. 78–79
19. सिंह , बी. सी. व (1974) : ''शस्य सम्मिश्रण विधि अध्ययन में एक

पुनर्विलोकन'', उत्तर भारत भूगोल पत्रिका अंक 10, संख्या 1–2, पृष्ट –1

20. Janmes, P.E.& (1974) : "American Georaphy Invetory and Prospet", Jones, C.F. Syracuse University press, P-30.

21. Weaver, J.C. (1954) : "Crop Combination Regions in the Middle West", The Geographical Reviend 48- 44, P-175-200.

22. रजा, महेन्दी (1968) :''लैण्ड रिफार्मस एण्ड लैण्डयूज इन उत्तर प्रदेश'', प्रोसीडिग्स ऑफ सिम्पोजियस, आन लैण्ड यूज इन डेवलपिंग कंट्रीज, अलीगढ़।

23. सिंह, बृज भूषण (1996) :''कृषि भूगोल'', ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।

24. गुर्जर, रामकुमार (1992) :''इन्द्रिरा गाँधी नहर क्षेत्र का भूगाल'', राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ट सं. 115.

25. डॉ. सत्यवीर यादव :''कृषि पारिस्थितिक एवं पर्यावरण नियोजन'', राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ट 91.

26. NCAER (1960) : Techno Economic Suruey of M.P. Asia Publishing House, Bombay,Its ted.

27. शर्मा, एल. एन. (1990), :''शुष्क संभाग की परिस्थितिकी पर सिंचाई का प्रभाव,'' शोध प्रबन्ध, पृष्ट सं. 49–57।

चतुर्थय–अध्याय

कृषि में तकनीकीकरण का विकास

- कृषि में तकनीकीकरण का महत्त्व
- कृषि में हरित क्रान्ति का प्रभाव
- कृषि में विद्युत का प्रयोग
  - ❖ जिले में कृषि यन्त्र व औजारों में आया परिवर्तन
  - ❖ जिले में रासायनिक खाद के प्रयोग में आया परिवर्तन
- उन्नत बीजों , रासायनिक खाद, कीटनाशक व पौधे संरक्षण औषधियों का प्रयोग
- कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरणीय सम्बन्ध

कृषि विकास स्तर में तकनीकीकरण

आधुनिक युग को तकनीकी विकास का युग कहा जाता हैं। क्योंकि आज जो भी उन्नति हुई है। उसका श्रेय विकसित तकनीकी को है। कृषि विकास स्तर पशुपालन , उत्खनन, परिवहन और उ़द्योग जैसे अनेक कार्यों में नित्य नई तकनीकी का उपयोग आम बात हो गयी है। इन तकनीकों ने आर्थिक सामाजिक प्रगति को नया आयाम दिया है। तकनीकी विकास के बल पर मानव–समाज जिन ऊँचाई को छूने लगा है, उसकी कल्पना भी कुछ समय पहले सम्भव नहीं थी। कृषि विकास स्तर एंव उत्पादन की बढ़ोतरी के लिये यन्त्रों (ट्रेक्टर , थ्रेसर , डरलिंग मशीन, कमांड़, हल) बीजों और सिंचाई के साधनों का योगदान सर्वविदित है। कृषि में उपयुक्त रासायनिक उर्वरकों व खनिजों के उत्खनन में भी विकसित तकनिकों से कई गुना उत्पादन प्राप्त किया जाने लगा है।[1] परिवहन के क्षेत्र में तकनीकी विकास में धरातल की दूरी जिस तरह कम की है वह हैरत में ड़ालने वाली है। सम्पूर्ण पृथ्वी को ही इसने छोटा कर दिया है। वायुयान की बढ़ती प्रगति तकनीकी उन्नति के शिखर पर पहुँचने लगी है। समुद्री मार्ग से जितना परिवहन आज सम्भव है, उतना नव युग मे सम्भव नहीं था। आज विशाल जलपोतों तकनीकी उन्नति के प्रतीक बन गये है। कृषि विकास में तकनीकी सुधार में उत्पादन को कई गुणा बढ़ा दिया है। सवाई माधोपुर जिले में सन् 1992–93 में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 39.78 प्रतिशत था जो बढ़कर सन् 2012–13 में 58.63 प्रतिशत हो गया। पिछले 20 वर्षों में जिले में 18.85 प्रतिशत की वृद्धि हुई। सन 1992–93 में कुल बोया गया क्षेत्र 47.50 प्रतिशत था। गत 20 वर्षों मे कुल बोये गये क्षेत्र में 32.92 प्रतिशत की वृद्धि हुई सन् 1992–93 में कुल सिंचित क्षेत्र 28.94 प्रतिशत था जो बढ़कर सन् 2012–13 में 60.88 प्रतिशत हो गया। इन 20 वर्षों में 31. 94 प्रतिशत की वृद्धि हुई । ''तकनीकी की उन्नति के बल पर मनुष्य अन्तरिक्ष में कारखाना, नगर और कृषि विकसीत करने के स्वप्न देख रहा है।[2] वर्ण संकर पौधे, जानवर और अब मनुष्य का विकास तकनीकी का जीता–जागता प्रमाण है। कम्प्यूटर का विकास तकनीकी उन्नति का एक ऐसा करिश्मा है , जो जीवन के सभी पक्षों को प्रमाणित कर रहा है। मानव स्वास्थ्य रक्षा , कृषि स्वास्थ्य में भी तकनीकी विकास क्रान्तिकारी हैं। वास्तव में वर्तमान युग विकास और तकनीकी उत्पादन का युग है।

कृषि में तकनीकीकरण का महत्त्व

प्राचीन काल में जब मानव प्राचीन कृषि यन्त्रों से कृषि कार्य करता था उस समय तक मानवीय आवश्यकता अत्यन्त कम थी जैसे ही मानव ने अपना स्थानीय निवास करना सिख लिए एवं जब वह कृषि के महत्त्व को मानवीय जीवन का अभिन्न अंग समझने लगे तब से कृषि में तकनीकीकरण का महत्त्व समझने लगे थे। प्राचीन कृषि यन्त्रों में कुल्हाडी, खुरफा, कुदाली, हसीया, हल–बैल, पशु के कृषि कार्यों से वर्तमान में कृषि भूमि पर बढ़ रहे जनसंख्या भार के लिए ये प्राचीन कृषि

यन्त्र उपयुक्त नहीं है। 1960 के दशक में इंग्लैण्ड में हुई औद्योगिक क्रान्ति के साथ –साथ कृषि भूमि पर कृषि आधारित औद्योगिक भार बढ़ने लगा। घटती हुई कृषि भूमि बढ़ती हुई मानवीय आवश्यकताओं को देखते हुए। कृषि विकास स्तर में तकनीकीकरण, महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है। वर्तमान कृषि समास्याओं को सुलझान में कृषि में बढ़ते हुऐ तकनीकीकरण का अत्याधिक महत्त्व है।

प्राचीन समय में दस कृषक कृषि भूमि में एक दिन काम करते तब पूरा होता था। परन्तु आधुनिक तकनीकीकरण के युग में उस ट्रेक्टर, थ्रेसर ट्रोली से महज एक या दो घण्टों में पूरा किया जा सकता है। कृषि विकास स्तर में तकनीकिकरण से कृषि भूमि की उत्पादन क्षमता में वृद्धि हुई और मानवीय श्रम व समय की बचत हुई है। भारत देश वर्तमान समय में कृषि में बढ़ते तकनीकीकरण से खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हो रहा है। राजस्थान में कृषि तकनीकीकरण का विकास अन्य राज्यों हरियाणा, पंजाब, तमिलनाडू, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात आदि से कम हुआ है। सवाई माधोपुर जिले के कृषि विकास के स्तर में तकनीकीकरण का विकास होता जा रहा है। सन् 1992–93 में 2.5 प्रतिशत था जो गत 20 वर्षों में बढ़कर 50.70 प्रतिशत हो गया है। सवाई माधोपुर जिला एक कृषि प्रधान क्षेत्रों में से एक है। यहाँ 70.2 प्रतिशत जनसंख्या काश्त क्षेत्र पर जीवनयापन करती है। जिले में कृषि विकास तिव्र गति से हो रहा है तथा कृषि विकास में आधुनिक यन्त्रों व तकनीकी का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। जिले में तकनीकी में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है। पुराने कृषि यन्त्रों का स्थान आधुनिक यन्त्र लेते जा रहे है। जिले में कृषि के अन्तर्गत विद्युत का प्रयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। सारणी सं. 4.5 में दर्शाया गया है। सिंचाई में आधुनिक यन्त्रों व आधुनिक सिंचाई विधियों में स्प्रिंगल सिंचाई प्रणली, बूँद–बूँद सिंचाई प्रणाली का प्रयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार जिले के कृषि विकास स्तर में तकनीकीकरण व आधुनिकीकरण का विशेष महत्त्व रहा है। भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होने के कारण कृषि में तकनीकीकरण का महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है।

कृषि में हरित क्रान्ति का प्रभाव

भारत में नवीनतम हरित क्रान्ति 19 वीं शताब्दी के छठवें दशक में हुआ। यह विपुल उत्पादन देने वाले बीजों के प्रयोग के साथ आरम्भ हुई है। उस समय देश में स्वतन्त्रता के बाद से सबसे खराब आर्थिक स्थिति थी प्रति व्यक्ति आय न्यूनतम हो गई थी। प्रमुख उधोग मंदी के शिकार हो गये थे बेरोजगारी बहुत बढ़ गई थी। भारत में 1960 के दशक मध्य से कृषि में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। ये परिवर्तन मौलिक एवं नई ब्यूह रचना पर आधारित थे। देश में खाद्यान्नों के अभाव की स्थिति से कारगर ढ़ंग से निपटने के लिए इस ब्यूह रचना की आवश्यकता हुई थी। भारत में हरित क्रान्ति का जनक एम. स्वामी नाथन थे। पुरानी ब्यूह रचना के अन्तर्गत विस्तृत खेती,

संस्थागत सुधार, कृषि साधनों की बड़े पैमाने पर आपूर्ति तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रम और प्रसार सेवाओं की व्यवस्था की गई थी। पहली तीन पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत कृषि विकास की मूलभूत नीतियों के ढ़ाँचे में व्यापक परिवर्तन हुए जिसमें सरकारी समितियों और सामुदायिक विकास खण्ड़ों को माध्यम बनाया गया। लेकिन इस कार्यक्रम के परिणाम उत्साहबर्धक नजर नहीं आये कृषि क्षेत्र के उत्पादन में उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ। ऐसी स्थिति में 1965 में जिस नई नीति को अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ा उसे नई ब्यूह रचना का नाम दिया गया। इस ब्यूह रचना के चार मुख्य अंग थे–

(1) अधिक मात्रा में फसल उत्पादन पर बल दिया गया। इसके लिए उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग गेंहू और चावल फसलों के लिए किया गया। फसलों के प्रारुप में भी परिवर्तन किया गया , क्योंकि कृषक अब वर्ष में दो तीन फसलें प्राप्त कर सकता था। पंजाब तथा हरियाणा के कुछ क्षेत्रों में किसानों ने चार–चार फसलें भी प्राप्त की।

2. परती भूमि के विकास के लिए प्रयत्न शुरु किये गये। वर्ष 1965 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पुनर्गठन किया गया तथा इस वर्ष कृषि मूल्य आयोग की स्थापना की गई अनेक कृषि विश्वविद्यालय खोल गये।

3. उन्नत किस्म के बीज, उर्वरक, पौधें संरक्षण , नवीन कृषि उपकरण तथा सिंचाई हेतु पानी का बेहतर प्रबन्धन आदि के विकास पर जोर दिया गया।

4. नई सार्वजनिक सेवाओं का निर्माण किया गया इन संस्थाओं में राष्ट्रीय सरकारी विकास निगम कृषि उधोग निगम, राष्ट्रीय बीज निगम, नबार्डा आदि प्रमुख है। इस नई कृषि नीति में उत्पादन के क्षेत्र में जो नवीन आयाम जोड़े उन्हे कालान्तर में हरित क्रान्ति के नाम से जाना जाता है।

हरित क्रान्ति

हरित क्रान्ति वास्तव में कृषिगत नए निवशों एवं कृषि की नवीन विधा के पैकेज का नाम है। इस पुलिंदे का केन्द्रीय तत्व था ''करामाती बीज''।[3] इस प्रकार के बीज के कई गुण थे। इनकी बहुत अधिक उपज देने की क्षमता के कारण ही इन्हें 'चमत्कारी' बीज कहा जाता है। इन बीजों में फसलों के अच्छे गुणों का सम्मिश्रण किया गया था। इनके मूल्य गुणों की गणना ए.के चक्रवर्ती ने इस प्रकार किया है–

1. इन बीजों पर उर्वरकों का शीघ्र प्रभाव होता है।

2.उर्वरकों के प्रयोग से प्रति इकाई मात्रा पर उपज ज्यादा होती है।

3. अन्न के पकने से बाले भारी होने पर भी नहीं गिरती है।

4. धान को छोड़कर अन्य बीज शुष्कता को सहने में सक्षम होते है और इनका प्रयोग विस्तृत अक्षांशीय क्षेत्रों में किया जा सकता है।

5. इन बीजों से तैयार फसल अल्पावधि में पकती है, जिससे वर्ष में एक से अधिक फसल पैदा करना सम्भव होता है।

6. स्थानीय परम्परागत बीजों की तुलना में दो चार गुना उपज देने में सक्षम होते है।

इन चमत्कारी बीजों से अधिकतम लाभ लेने के लिए इनके साथ अन्य निवेशों का उपयोग अनिवार्य है। पहली आवश्यकता है समय पर समुचित नियन्त्रित जल की पूर्ति जो सिंचाई की व्यवस्था से ही संभव है। साथ ही बिना उर्वरकों के इस पैकेज का पूर्ण लाभ नहीं मिल सकता। उन्नत बीज विशेषकर चावल के बीजों पर रोगाणुओं और खरपतवारों का प्रकोप बाधक होता है। परन्तु रोगाणुनाशक एवं खरपतवारनाशक दवाइयों का उपयोग भी आवश्यक हो जाता है। उन्नत बीजों के छोटे उत्पादन के कारण दो फसलें पैदा करना सम्भव होता है परन्तु खेत की तैयारी के लिए ट्रेक्टर जैस उपकरणों का उपयोग काम को सरल व शीघ्रता से कर देता है। इन सभी निवेशों का एक साथ उपयोग ही संभावित अधिक लाभ दे सकता है। जैसे कि नियमित जल की सुविधा एवं उर्वरकों के बिना उत्पादन बढ़ना सम्भव नहीं। बिना मशीनों के एक खेत से कई फसलों के उत्पादन की सम्भावना का दोहन सम्भव नहीं। परन्तु इन निवेशों का एक साथ उपयोग हरित क्रान्ति मुख्य आधार है। हरित क्रान्ति की सहायता से सवाई माधोपुर जिले के किसान भी कृषि की गतिहीनता से निकल गया और उसने सरकारी नीतियों एवं प्रोत्साहनों के प्रति सक्रिय प्रतिक्रिया निभाना आरम्भ किया। यद्यपि हरित क्रान्ति से सभी किसान तो समान रुप से प्रभावित नहीं हो सके, पर इसका प्रभाव व्यापक रुप से पड़ा। जिन किसानों ने हरित क्रान्ति को अपनाया वे निश्चित रुप से लाभान्वित हुए है। जिसने इसे नहीं अपना पाये वे अपनाने के लिए उत्साहित दिखाई दे रहे है। जो निम्नानुसार है– जिले में हरित क्रान्ति का प्रभाव निम्नानुसार है–

1. यान्त्रिक शक्ति निवेश

कृषि कार्य में पूँजी नियोजन का सबसे बड़ा भाग यान्त्रिक शक्ति निवेश का है। कृषि यन्त्रों के प्रयोग से यद्यपि मानव श्रम का विस्थापन होता है फिर भी कृषि कार्य सरलता एवं शीघ्रता से सम्पन्न होता है। कम जनसंख्या वाले देशों के लिए कृषि यन्त्रों का प्रयोग व्यापारिक स्तर पर कृषि करने हेतु वेरदान सिद्ध हुआ है। भारत सदृश श्रम प्रधान कृषि में भी कृषि यन्त्रों का प्रयोग लाभप्रद सिद्ध हुआ है। यह हरित क्रान्ति का प्रभाव ही है। कृषि यन्त्रों, उर्वरकों, रासायनिक खाद, बीजों के प्रयोग से न केवल उत्पादकता में वृद्धि होती वरन् कृषि पर प्रति हेक्टेयर व्यय कम होता है। बढ़ती हुई मजदूरी, श्रम का समय पर उपलब्ध न होना तथा पशु शक्ति निवेश की मंदी ने

यांन्त्रिक शक्ति निवेशन की प्रोत्साहन दिया है। यान्त्रिक शक्ति अधिकाधिक प्रयोग कृषि विकास के स्तर में हरित क्रान्ति महत्त्वपूर्ण अंग है। किसी भी औजार उपकरण अथवा मशीनों के उपयोग के द्वारा कृषक को अधिक फसल उत्पादन में सहायता मिले अथवा जिससे कृषि क्रियाएं अधिक आराम से कम समय और कम खर्च पर की जा सके इस यन्त्रीकरण कहते है। कृषि क्षमता को बढ़ाने के लिए यान्त्रिक शक्ति का उपयोग आवश्यक है। इसके द्वारा श्रम और पूँजी के अनुपात में परिवर्तन लाया जा सकता है। कृषि यंत्रों के प्रयोग से प्रति इकाई उत्पादन लागत में कमी, श्रम कार्य क्षमता में वृद्धि, प्रति हेक्टेयर भू–उत्पादनता में वृद्धि, कृषि कार्य में समय की बचत, भूमि उपयोग में सुधार, भू–संरक्षण तथा पशुओं की माँग में कमी लायी जा सकती है। जिले के वर्तमान बदलते परिवेश में कृषि का यंत्रीकरण आवश्यक है।[4]

सवाई माधोपुर जिले में कृषि यन्त्र व औजारों में आया परिवर्तन

1992–93 से 2012–13

सारणी संख्या 4.1

क्र.सं.	कृषि यन्त्रों के नाम	वर्ष				आया परिवर्तन
		1992–93	2002–03	2008–09	2012–13	
1	हल	47021	33244	20153	12054	–34967
2	गाडियाँ	27543	14140	11230	7451	–19570
3	ट्रेक्टर	2732	6267	9325	15231	+12499
4	कोल्हूगन्ने	125	55	29	15	–110
5	घाणियाँ	39	20	12	7	–32
6	थ्रेशर	225	535	856	1203	+1181

स्त्रोत–पशु जनगणना , सवाई माधोपुर।

आधुनिक वैज्ञानिक एवं हरित क्रान्ति के प्रयास से आज कृषि में अनेक मशीनों का प्रादुर्भाव हुआ है। सम्पन्न कृषकों ने स्वयं के कृषि यंत्र खरीद लिए है। तथा उनका प्रयोग कृषि कार्यों में करते है। मध्यम व सीमान्त कृषक इन मशीनों को किराये पर लेकर अपना कृषि कार्य करते है। ट्रेक्टर जुताई करने, खेतों को समतल करने और फसल काटने, दाना, भूसा अलग करने में, मेंड़ बनाने में, सिंचाई करने और

फसलें ढ़ोने के काम आता है। पशुचालित यन्त्रों की तुलना में इन से कम समय में अधिक कार्य किया जा सकता है। कुओं व नलकूपों का प्रयोग बढ़ रहा है। जिन क्षेत्रों व गाँवों में बिजली नहीं है वहाँ डीजल इंजन से सिंचाई अधिक उपयोगी एवं लोकप्रिय है। नहरों तथा तालाबों से सिंचित क्षेत्रों में इनकी आवश्यकता विशेष पारिस्थितियों में ही होती है। पिछले कुछ वर्षों से जिले में क्रान्ति सी आई हुई है। मशीनीकरण क्षेत्र में कृषि के विकास में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। हरित क्रान्ति के कारण मशीनों की आवश्यकता अधिक हुई क्योंकि रासायनिक खाद उन्नत बीज और किटनाशक दवाओं के प्रयोग से कृषि के क्षेत्र में मशीनों का प्रयोग बढ़ा है। उपरोक्त सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र की कृषि में प्रयोग किये जाने वाले प्रमुख यन्त्रों की संख्या में गत 20 वर्षों में निम्न प्रकार कमी व वृद्धि हुई है।

ट्रैक्टर

जीवन निर्वाह कृषि तो कुदाली से भी संभव थी उसके बाद परम्परागत कृषि में लकड़ी के हल बैलगाड़ी सिंचाई कार्यों में पशुओं का उपयोग अधिक था । वर्तमान कृषि विकास स्तर मे बढ़ता मशीनों का प्रयोग कृषि आधुनिकीकरण का सूचक हैं। हम जानते है कि ट्रैक्टर कृषि उत्पादन क्रिया में पौधें संरक्षण में, औषधियों के अलावा अन्य सभी कार्यों में उपयोगी है। शुष्क व अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में नमी संरक्षित रखने हेतु विशेष जुताई की आवश्यकता पड़ती है। रबी की अधिकांश फसलों से पहले खेत तैयार करने हेतु कई बार जुताई करनी पड़ती है। रबी की अधिकांश फसलों और कुछ खरीफ की फसलों को भी सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त फसल बुवाई , फसल कटाई , फसल ढुलाई आदि कार्यों हेतु यह बहुउद्देशीय मशीन है। कृषि में ट्रैक्टर को आधार मशीन कहा जाता है। मध्यम व सामान्य किसान के पास जोत का आकार छोटा होता है व किराये पर ट्रैक्टरों से काम करा लेते है। बड़े एव सम्पन्न किसानों के पास ट्रैक्टरों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। ट्रैक्टरों को कृषि कार्यों के अतिरिक्त अन्य काम भी लिए जाते है।

सारणी सं 4.1 के अनुसार क्षेत्र में सन् 1992–93 में ट्रेक्टरों की संख्या 2732 थी जो बढ़कर सन 2012–13 में 7250 ही गई। गत 20 वर्षा में 6640 ट्रेक्टर की संख्या में वृद्धि हुई है। आरेख सं 4.1 में तुलनात्मक स्थित को दर्शाया गया है। इसका पता चलता है कि जिले में तकनीकीकरण में वृद्धि हो रही है।

हल

हल दो प्रकार के होते है, लकड़ी के एवं लोहे के बने हुए। लोहे के हल लकड़ी के हलों की बजाय अधिक उपयोगी व टिकाऊ होते है। लकड़ी के हलों की बजाय लोहे के हलों से गहरी जुताई भी की जा सकती है। दूसरी और लोहे के हल पशु एवं ट्रैक्टरों दोनों से खीचे जाते है जबकि लकड़ी के हल ट्रैक्टर आदि आधुनिक यन्त्र के

FLATE No. 13

I

कृषि में यंत्रीकरण

II

साथ नहीं चल सकते। इसलिए जुताई , बुवाई कार्यों में लकड़ी के हलों की बजाय लोहे के हलों की संख्या बढ़ती जा रही है। प्रस्तुत अध्ययन में ट्रैक्टरों से संचालित हलों का वर्णन नहीं है केवल पशु चालित यन्त्रों का ही अध्ययन है। सारणी संख्या 4.1 देखने से ज्ञात होता है कि हलों की संख्या घटती जा रही है। 1992–93 में जिले में हलों की संख्या 56942 थी जो 2012–13 में घटकर 13430 रह गयी है। अतः 20 वर्षों में 42800 की कमी हुई। इस कमी का कारण कृषि में ट्रैक्टरों द्वारा संचालित हलों की वृद्धि से है।

थ्रेशर

थ्रेशर फसलों से अनाज साफ करने का मुख्य कृषि यन्त्र है। वर्तमान समय में इसका उपयोग बहुत बढ़ गया है। जिन कृषकों के पास थ्रेशर नहीं होता है वे भी फसल को पकाकर सूख जाने पर थ्रेशर से फसल को साफ करवा लेते है , जिससे समय की बचत होती है तथा साथ ही फसल खराब होने से बच जाती है। सन् 1992–93 में जिले में थ्रेशर 255 थी जो बढ़कर 2012–13 में 1090 हो गई 20 वर्षों में 835 थ्रेशरों की वृद्धि हुई। (सारणी संख्या 4.1) गत 20 वर्षों में थ्रेशरों की संख्या में 4 गुने से अधिक वृद्धि हुई। सन् 2012–13 में थ्रेशरों की सबसे अधिक संख्या जिले के पश्चिमी व उत्तरी भाग में है इस क्षेत्र में शुद्ध बोया गया क्षेत्र व सिंचित क्षेत्र में गेंहू का क्षेत्र अधिक होने के कारण थ्रेशरों की संख्या भी अधिक मिलती है। जिले के मध्यवर्ती क्षेत्र में गेंहू के अन्तर्गत अधिक क्षेत्र होने क कारण प्रति 1000 हेक्टेयर पर थ्रेशरों की संख्या 12 से 16 ही पायी जाती है। जबकी दक्षिण–पूर्वी भाग में कम पायी जाती है। यह क्षेत्र कृषि की दृष्टि से व जोतों का आकार छोटा होने में कारण कम पायी जाती है।

गाडियाँ

कृषि विकास स्तर में गाडियाँ प्रमुख स्थान रखती है। परम्परागत कृषि में फसलों को लाने व ले जाने में इनका प्रमुख महत्त्व था लेकिन आधुनिक कृषि यंत्रों के बाद इनके प्रयोग में कमी आ गई। जिले के गाँवों में दो प्रकार की गाडियाँ दृष्टि गोचर होती है। (1) बैलगाड़ी (2) ऊँटगाड़ी, बैलगाड़ी प्राचीन काल से चली आ रही है। लेकिन ऊँटगाड़ी अभी कुछ वर्षों से प्रकट हुई है। ऊँटगाड़ी अधिक उपज ढ़ोने में सक्षम है। जिले में अब ऊँट गाडियों की संख्या में वृद्धि हुई है लेकिन बैल गाडियों की संख्या में कमी आयी है। जिले में सारणी संख्या 4.1 के अनुसार गाडियों की संख्या में 1992–93 की तुलना में 2012–13 में 85.5 प्रतिशत की कमी आयी है। इसका कारण ट्रैक्टरों द्वारा संचालित ट्रोलियों का प्रादुर्भाव होना है जो कि कम समय में अधिक भार ढ़ोने में सक्षम है। जिले में सर्वाधिक गाड़ियों की संख्या दक्षिण, पश्चिम व मध्यवर्ति भाग में बालेर, बहरावण्डा कलाँ, मेई कलाँ, बैराड़ा, बाटोदा,जहारा में लगभग 35

प्रतिशत गाडियाँ है। इन भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में हैं। सवाई माधोपुर, बामनवास, खण्डार, गंगापुर, बौंली भू–अभिलख वृतों में गाडियाँ बहुत कम संख्या में पायी जाती है इसके 10 प्रतिशत से कम पायी जाती है। वर्तमान में गाडियों की संख्या में धीरे धीरे कमी आ रही है यह कमी कृषि विकास में आधुनिकीकरण एवं हरित क्रान्ति के प्रभाव का धोतक है।

अन्य कृषि यन्त्र

जिल में ट्रैक्टर, थ्रेशरों, हलों के अतिरिक्त अन्य अनेक कृषि यन्त्रों का उपयोग किया जा रहा है, जिसमें बीज बोने के यन्त्र, स्प्रेयर, डस्टर सॉयल स्ट्रीम, सापल टरनिंग तथा सीड कम फर्टिलाइजर ड्रिल (बीज बोने व खद देने वाले यन्त्र) आदि पशु जनगणना के अनुसार इनकी संख्या सारणी संख्या 4.1 में दर्शाया गया है। कृषि यन्त्रों की सुविधा उपलब्ध कराने हेतु 1969 में कृषि करता उधोग निगम की स्थापना की गई। निगम कृषि यन्त्रों का निर्माण एवं पूर्ति का कार्य करता है।[5] किसानों की उचित किमत पर यन्त्र उपलब्ध करता है।

सवाई माधोपुर जिल में विभिन्न प्रकार के कृषि यन्त्रों की संख्या

सन् 1992–93 से 2012–13 सारणी संख्या 4.2

क.स.	कृषि यन्त्रों का नाम	1992–93	2012–13	वृद्धि
1	बीज बोने के यन्त्र	548	10442	1805.47
2	स्प्रेयर	785	655	219.51
3	ड्रस्टर	48	200	316.67
4	सायल स्ट्रींग	350	4664	1232.57
5	सायल टैरनिंग	435	4360	902.30
6	सीडकम फर्टीलाइजर (बीज बोने व खाद देने के)	125	450	260.00

स्त्रोतः पशुजनगना 1992–93 से 2012–13 सवाई माधोपुर।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि सन् 1992–93 से 20012–13 के दौहरान प्रत्येक प्रकार के कृषि यन्त्रों में अत्याधिक वृद्धि हुई है। गत 20 वर्षों में बीज बोने के यन्त्रों में 1805.47 प्रतिशत , स्प्रेयर की संख्या में 219.51 प्रतिशत डस्टर में 316.67 प्रतिशत, सॉपल स्ट्रींग 1232.57 प्रतिशत, सॉपल टरनिंग में 92.30 प्रतिशत तथा बीज व खाद देने के यन्त्रों में 260 प्रतिशत वृद्धि हुई है। इन कृषि यन्त्रों के आंकड़े

भू–अभिलेख वृतों के अनुसार उपलब्ध नहीं होने के कारण भू–अभिलेख वृतों अनुसार वर्णन नहीं दिया जा सका। डीजल व विद्युत पम्प सेटों का वर्णन कृषि में विद्युत के प्रयोग के बिन्दू में दिया गया है।

कृषि में विद्युत का प्रयोग

वर्तमान समय में भारत व राजस्थान के साथ–साथ सवाई माधोपुर जिले में भी कृषि विकास के स्तर में विद्युत का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। कृषि विकास के स्तर में तकनीकीकरण में हो रहे विकास के साथ–साथ विद्युत ऊर्जा का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। जहाँ पहले सिंचाई में पशु शक्ति का अधिक मात्रा में प्रयोग किया जाता था वहीं आज विद्युत का प्रयोग होने लगा है। जहाँ सिंचाई कुओं व नलकूपों से की जाती है वहाँ सिंचाई हेतु इन्जन तथा विद्युत मोटर, विद्युत पम्प सेट का प्रयोग किया जाने लगा है। इसे सारणी सं 4.3 मे दर्शाया गया है।

जिले में डीजल पम्प सेटों के प्रयोग में आया परिवर्तन–

सन् 1992–93 से 2012–13

सारणी संख्या 4.3

वर्ष	डीजल पम्प सेटों की संख्या	प्रतिशत में	आया परिवर्तन प्रतिशत में
1992–93	22993	50.2	–
2002–03	40379	69.4	+19.2
2008–09	41985	80.7	+11.3
2012–13	45210	81.2	+0.50

स्त्रोत : जिला कृषि अधिकारी सवाई माधोपुर से प्राप्त आंकड़ों से परिकलित ।

डीजल पम्प

जहाँ सिंचाई कुओं एंव नलकूपों से की जाती है वहां सिंचाई हेतु इंजन तथा विद्युत मोटर की आवश्यकता पड़ती है। अधिकतर डीजल इंजन उन क्षेत्रों में है। जहाँ विधुत की सुविधा नहीं है। सारणी सं 4.3 के अनुसार जिले में 1992–93 में जहां

टूयूबवेल व पम्प सेटों की संख्या 22993 थी व 2002–03 में 40379 हो गई , जो 2012–13 में बढ़कर 45210 हो गई है। पिछले 20 वर्षों में डीजल पम्पों की संख्या में 1992 से 2002 में 19.2 प्रतिशत वृद्धि हुई थी। 2002 से 2008 में 11.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि 2008 से 2012 में 0.50 प्रतिशत की वृद्धि हुई इन 20 वर्षों में यह सबसे कम वृद्धि रही है। इसे कम वृद्धि का मूल कारण

आरेख संख्या 4.1

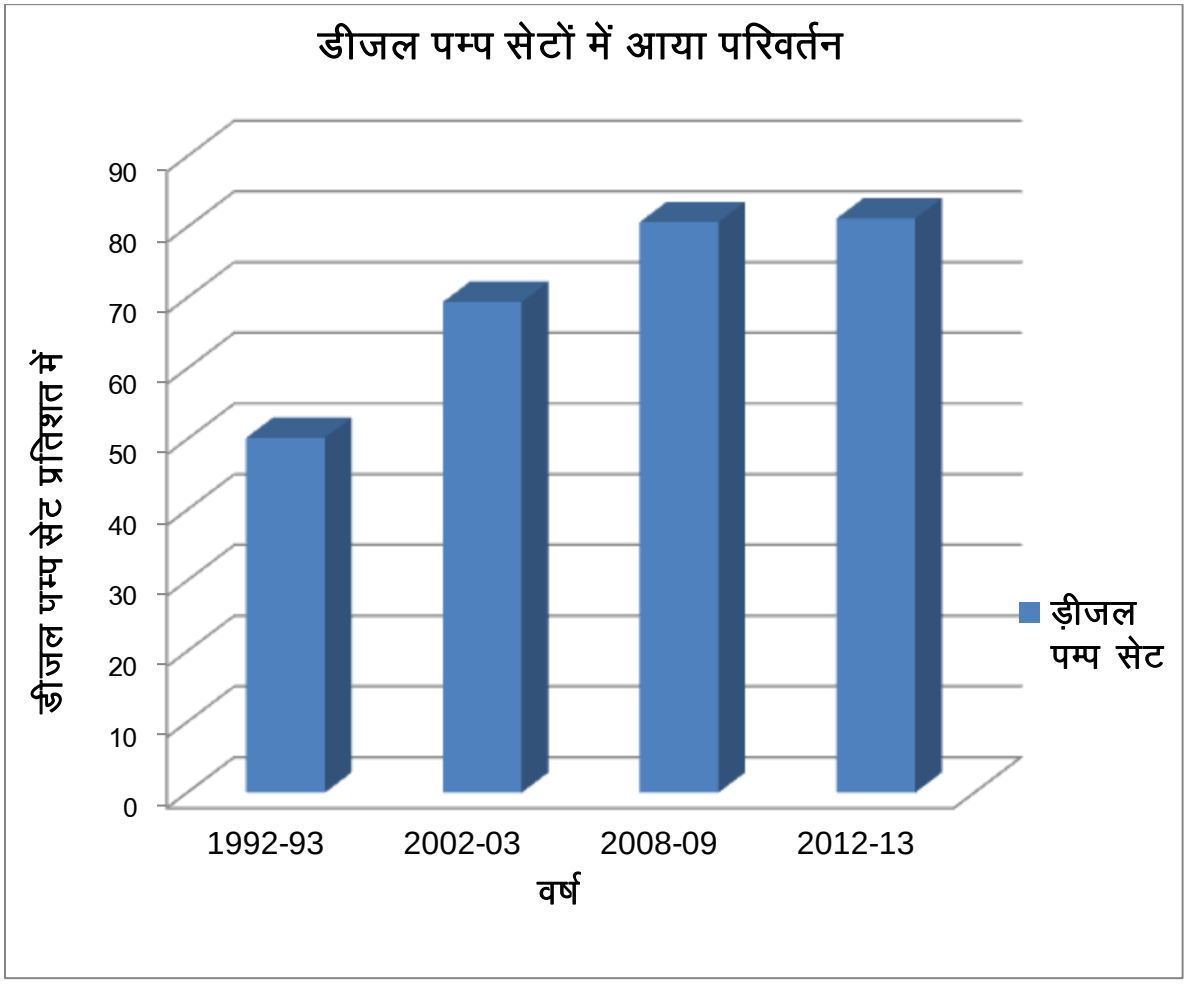

जिले में विद्युत पम्प सेटों में वृद्धि रहा है। (आरेख व सारणी) । गत 20 वर्षो में जिले में सर्वाधिक वृद्धि दक्षिण व उत्तरी भाग में तिव्र गति से हुई लेकिन मध्यवृर्ति व पश्चिमी भाग में मध्यम वृद्धि हुई । इस वृद्धि का कारण जिले में विद्युत प्रसार कम होना है। यहाँ पर किसान पहले पशुओं से सिंचाई करता था। जिसमें अधिक समय व अधिक श्रमिक की आवश्यकता होती थी तथा पुरे दिन में बहुत कम क्षेत्र में सिंचाई हो पाती थी। लेकिन अब डीजल पम्प से सिंचित क्षेत्र में विस्तार दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है यह वृद्धि दर जिले के कृषि विकास के स्तर मे महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। समय अनुसार कृषक परम्परागत कृषि व्यवस्था को धीरे–धीरे छोड़े रहे है।

विद्युत पम्प

विद्युत की सुविधा वाले क्षेत्रों में इंजन के स्थान पर सिंचाई कार्य में विद्युत पम्प का प्रयोग किया जाने लगा है। विद्युत पम्प भी कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचाई किये जाने वाले क्षेत्रों मे ही उपयोग में लिए जाते है। नहरों एंव तालाबों द्वारा जहाँ सिंचाई होती है वहीं तो विद्युत एंव ड़ीजल इंजन पम्पों की कम ही आवश्यकता होती है।

जिले में विद्युत पम्प सेटों के प्रयोग में आया परिवर्तन

सन् 1992–93 से 2012–13

सारणी संख्या 4.4

वर्ष	विद्युत पम्प सेटों की संख्या	प्रतिशत में	आया परिवर्तन प्रतिशत में
1992–93	2145	8.12	–
2002–03	7974	17.73	+9.00
2008–09	8889	25.52	+7.79
2012–13	10256	36.20	+12.68

स्त्रोत : जिला कृषि अधिकारी सवाई माधोपुर से प्राप्त आंकड़ों से परिकलित ।

आरेख संख्या 4.2

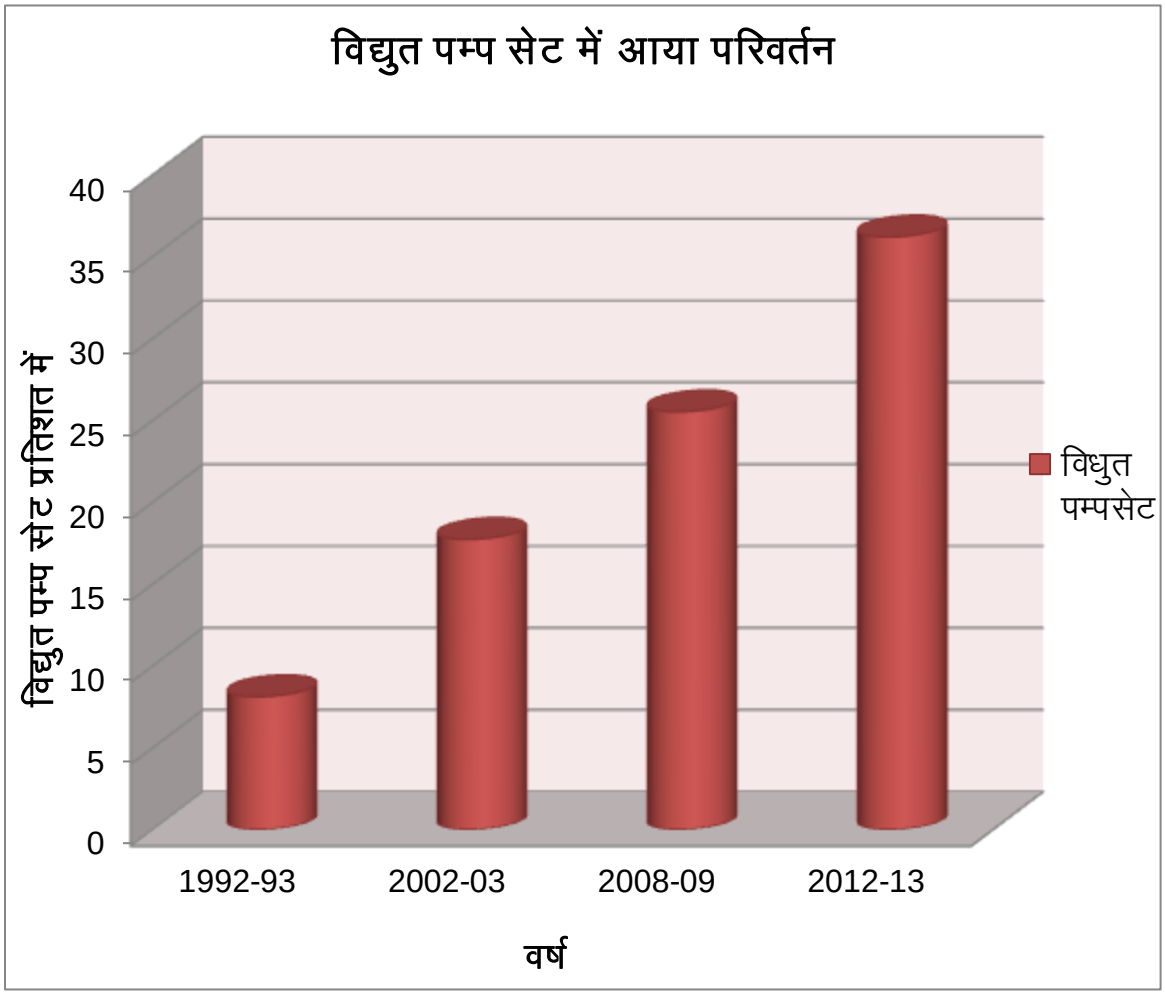

पहले सिंचाई में पशु शक्ति का अधिक उपयोग किया जाता था लेकिन वर्तमान में गाँवों का विधुतिकरण तिव्र गति से होने के कारण अब कृषक कुओं से पानी निकालने के लिए विद्युत पम्प सेटों का उपयोग अधिक करने लग गये हैं। निम्नसारणी में जिले में विद्युत पम्प सेटों की संख्या में हुई वृद्धि को दर्शाया गया है। जो गत दो दशकों में कृषि में विद्युत के बढ़ते प्रयोग को इंगित करती है–जिला स्तर पर विद्युत पम्पों की संख्या काफी कम है फिर भी इनकी संख्या में दिन–प्रति दिन वृद्धि हो रही है। इन दो दशकों में विद्युत पम्प सेटों में 12.68 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं। सन् 1992–93 में 8.12 प्रतिशत था जो 2012–13 में बढ़कर 36.20 प्रति हो गई। गत 20 वर्षों में जिले में सर्वाधिक वृद्धि दक्षिणी–पूर्वी व उत्तरी भाग में गंगापुर , सवाई माधोपुर , खण्डार , बामनवास भू अभिलेख वृतों में हुई थी सबसे कम वृद्धि पश्चिम व उत्तर पश्चिमी भाग में हुई । वर्तमान जिले में भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा चलाया जा है। कृषि विकास प्रोत्साहन योजनाओं में कृषकों को –जैसे किसान क्रेडिट कार्ड, ई–चौपाल , सोसाइटी योजना दी जा रही है। जिले में 2012 में विद्युत का सिंचाई में 36.20 प्रतिशत प्रयोग किया गया।

उन्नत किस्म के बीज

भारत में हरित क्रान्ति का प्रारम्भ अधिक उत्पादन देने वाले बीजों के प्रयोग से हुआ है। खाधानों में देश को जो आत्मानिर्भरता की प्रगति हुई यह उन्नत किस्म के बीजों एवं सिंचाई के उपयोग से ही संभव हुई है। इन किस्मों में अपनी अत्याधिक अनुकूलता उच्च उपज उर्वरकों के प्रति अनुकूल अनुक्रिया, प्रकाश ,असंवेदिता, कम ऊँचाई अैर अधिक फलों के बावजूद दृढ़ता से ठिके रहन की विशेषता के कारण फसलों की उपज बढ़ाने की नवीन सम्भावनाओं को जन्म दिया है। इन बीजों के उपयोग में पर्याप्त सिंचाई के साधन की उपलब्धता के साथ–साथ उर्वरकों का निश्चित मात्रा में प्रयोग परम आवश्यक है। शीघ्र पकने की क्षमता होने के कारण इस असंचित क्षेत्रों में वर्षा की सहायता से लाभ प्राप्त किया जाने लगा जिससे इसके क्षेत्र में विस्तार संभव हुआ है।

पहले किसान अनाज में से ही बीजों को छांट कर प्रयोग करता था, इन बीजों का प्रतिशत अंकुरण में कम होने के कारण बीज की मात्रा अधिक प्रयोग में ली जाती थी। उनमें अन्य बीजों का मिश्रण होने से खरतवार की समस्या पैदा होती थी। फसल का न पकना तथा उसमें रोग रोधक व सुखा सहन करने की क्षमता का नहीं होना आदि कारणों से उत्पादन पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता था।

जिले में उन्नत किस्म के बीजो का वितरण

सारणी संख्या 4.5

क्र सं	फसल का नाम	2002–03		2012–13		दशकीय परिवर्तन (क्विंटल में)
		कुल बोया गया क्षेत्र (हेक्टेयर में)	कुल बीज व वितरण क्विंटल में	कुल बोया गया क्षेत्र (हेक्टेयर में)	कुल बीज व वितरण क्विंटल में	
1	बाजरा	29500	2026	68610	3500	+1474
2	ज्वार	800	107	877	110	+3
3	गेंहू	19700	7552	38875	14553	+7001
4	तील	1100	100	32851	190	+90
5	सरसों	17900	745	35800	1595	+850

स्त्रोत : जिला कृषि अधिकारी सवाई माधोपुर से प्राप्त आंकड़ों से परिकलित ।

I FLATE No.14

गेंहू की उत्तम किस्म की फसल

II

लकड़ी का हल व बैल

सारणी सं. 4.5 के अन्तर्गत क्षेत्र की प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उन्नत बीजों का प्रयोग प्रत्येक फसल के क्षेत्रफल के आधार पर दिखाया गया है। जिसमें सभी फसलों में उन्नत बीजों के बढ़ने का संकेत दिखाई दे रहा है। जिसमें सबसे अधिक वृद्धि गेंहू में हुई है। यह वृद्धि 7001 क्विंटल है।

आरेख संख्या 4.3

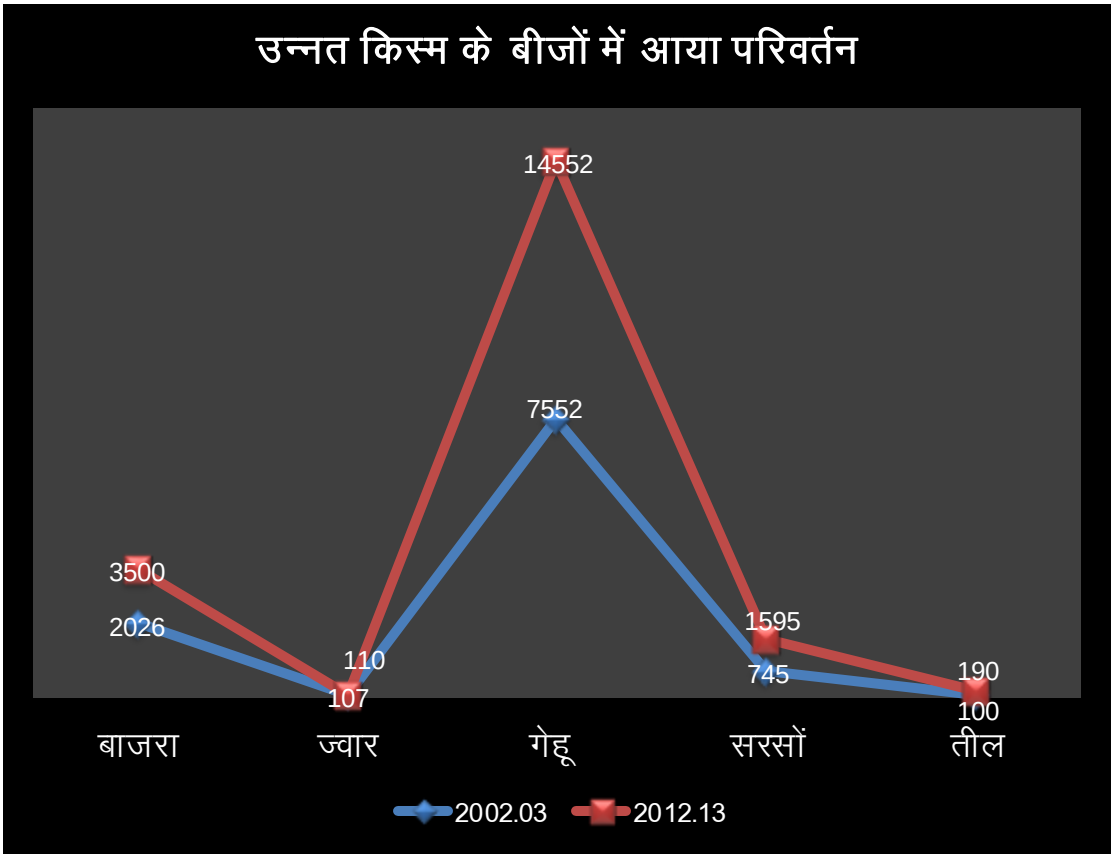

बाजरा

बाजरा खरीफ की खाद्य फसलों मे प्रमुख स्थान रखता है और क्षेत्र के सभी गिरदावरी मण्डलों में पैदा होता है। बाजरे के उन्नत बीजों में क्षेत्र में आर.सी.सी. डब्ल्यु. सी. सी. 75, एम. एच 179, सी. एम. 46, आर. बी. 2 आदि किस्मों का वितरण हुआ है। यहाँ बाजरे के कुल बोये गये क्षेत्र के 29500 हेक्टेयर के 2026 क्विंटल उन्नत बीजों का उपयोग सन् 2002–03 में किया गया जो सन् 2012–13 में बढ़कर हेक्टेयर हो गया जिसमें 3500 क्विंटल उन्नत बीज का उयोग किया गया । इस प्रकार पिछले 10 वर्षों में उन्नत बीजों के क्षेत्र में 1474 क्विंटल बीज की वृद्धि हुई है। (आरेख संख्या 2.3) अर्थात संपूर्ण क्षेत्र में बाजरे के उन्नत बीजों का प्रयोग हो रहा है।

गेंहू

गेंहू की फसल क्षेत्र की रबी फसलों में प्रथम स्थान रखती है। सवाई माधोपुर जिले में सिंचाई सुविधा वाले सभी क्षेत्रों में गेंहू की फसल का उत्पादन होता है। जिले में गेंहू की उन्नत किस्मों में कल्याण सोना, सोनालिका राज 1482, राज 1972/डी, राज 2184, राज 3077, एच.डी.2329 एच 2204 डब्ल्यु. एच. 147 दुर्गापुरा 65, सुजात और मुक्ता है। सारणी सं. 4.5 के अनुसार सन 2002–03 में गेंहू 19700 हेक्टेयर क्षेत्र में 7552 क्विंटल उन्नत बीजों का प्रयोग किया गया। सन् 2012–13 में बढ़कर 38875 हेक्टेयर हो गया जिसमें 14553 क्विंटल बीज का प्रयोग किया गया। पिछले 10 वर्षों में लगभग 7001 क्विंटल उन्नत किस्म के बीज की बढ़ोतरी हुई है। इस प्रकार सम्पूण क्षेत्र में गेंहू के उन्नत बीजों का उपयोग किया गया है।

सरसों

सरसों की फसल क्षेत्र की रबी फसलों में द्वितीय स्थान रखती है, इसमें भी उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग होने लगा है। यहाँ पर सरसों की उन्नत किस्मों में पूसा कल्याणी, दुर्गामणी, टी 59 क्रान्ति, पूसा बोल्ड, आर. एच. 30 और कृष्णा है। जिलें में सन 2002–03 में 17900 हेक्टेयर में 745 क्विंटल उन्नत बीज बोया जो बढ़कर सन 2012–013 में 35800 हेक्टेयर में 1595 क्विंटल उन्नत किस्म के बीज की बढ़ोतरी हुई । आरेख व सारणी सं 4.5 अनुसार विगत दस वर्षो में 17900 हेक्टेयर क्षेत्र की वृद्धि हुई साथ ही साथ 850 क्विंटल उन्नत किस्म के बीज की वृद्धि हुई । इसमें और वृद्धि होने की सम्भावना है।

अतः जिले में अन्य फसलों की विभिन्न उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग किया जाता हैं इनमें गन्नें की मुक्ता को 1007 ओर को 1111 उन्नत बीज ,ज्वार की एस. सी. एस. एच. 5, सी. एस. एच. 6, एस. पी वी. 545, व मक्का की संकर मक्का मेगा–5, संकुल मक्का आदि प्रमुख उन्नत बीजों का प्रयोग किया गया है। क्षेत्र में खरीफ दालों के अन्तर्गत मूंग में के. 851 व उड़द में टी. 9 बी उन्नत किस्म के बीजों का प्रयेग किया गया है।

रासायनिक खाद

निरन्तर फसलें पैदा करते रहने से भूमि की उर्वरा शक्ति घटती जाती है। जिसकों बनाए रखे तथा वृद्धि करने हेतु खदों एवं उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है। विपुल उत्पादन देने वाले बीजों से अधिकतम लाभ तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब तक उसमे उत्तम जल प्रबन्ध के साथ ही उर्वरकों का भी अनुकूलतम उपयोग हो। वास्तव में उर्वरक केवल सिंचित क्षेत्र में ही उत्पादन की अभिवृद्धि में भी ये सहायक है। इस कारण रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग सघन कृषि प्रक्रिया के कारकों की पूँजी

FLATE No.

I

II कृषि में रासायनिक दवाईयों का प्रयोग

रेलवें यातायात के साधन

है। वर्ष 1970 के पूर्व जिले में परम्परागत रूप से पशुओं की गोबर खाद का उपयोग उर्वरकों के रूप में किया जाता था परन्तु इनकी मात्रा तथा उपलब्धता दोनों कम होने के कारण शस्य भूमि को पर्याप्त खाद प्राप्त नहीं हो पाती है। जिससे उत्पादकता का स्तर न्यूनतम रहा। कृषि में रासायनिक उर्वरकों की तीनों किस्मों नाइट्रोजनी, फास्पटी व पोटाश (NPK) का प्रयोग एंव 4 : 2 : 1 के अनुपात में किया जाना चाहिए।[6] जिनका उपयोग एंव महत्त्व निम्न प्रकार है–

नाइट्रोजन का महत्त्व :1 पौधों की वृद्धि में सहायक ।

2 पौधों की जड़ों का तिव्र विकास करता है।

3 फलों की वृद्धि एवं बीज निर्माण में सहायक ।

4 पौधों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ जाती है।

पोटाश का महत्त्व : 1 यह पत्तियों में सर्करा एंव स्टार्च के निर्माण में वृद्धि करता है।

2 पानी की कमी को नियन्ति करता है।

3. यह दानों एवं फलों में अधिक गुदा पेदा करता है।

4. यह पौधों में बीमारी एवं कीड़ों के नुकसान को सहन करने की शक्ति बढ़ाता है।

फास्फोरस का महत्त्व1 फास्फोरस पौधों में कोशिकाओं के विकास हेतु आवश्यक है।

2 पौधों के लिए वसा एवं प्रोटीन निर्माण में सहायक एवं नाइटोजन के प्रभाव को कम या उदासीन करता है

3 पौधों में दीमक एवं चीटिंयों के आक्रमण को सहन करने की शक्ति को बढ़ाता है।

4 यह फसल को शीघ्र पकाता है।

5 जड़ों की वृद्धि एवं तनों को मजबूत बनाता हैं।

6 इससे पौधों में सुखा सहन करने की क्षमता बढती है।

जिले में रासायनिक खाद के प्रयोग में आया परिवर्तन

सन 2002–03 से 2012–03

सारणी संख्या 4.6

(मैट्रिकटन में)

क्र. सं	पोषक तत्त्व	2002–03	2012–13	10 वर्षीय परिवर्तन
1	नत्रजन	8906	20160	+11254
2	फास्फोरस	6686	5016	+1670
3	पोटाश	87	240	+153

स्त्रोत : जिला कृषि अधिकारी सवाई माधोपुर से प्राप्त आंकड़ों से परिकलित।

जिले में सन् 2002–03 में नाइट्रोजन खाद (अमोनियम सलफेट के रूप में) 8906 मैट्रिक टन उपयोग में लाई गई जबकि सन् 2012–13 में 20160 मैट्रिक टन का उपयोग किया गया। इस प्रकार इस खाद के प्रयोग में 10 वर्षो में 11254 मैट्रिक टन की वुद्धि हुई। इसी प्रकार फास्फेटिक खाद (सुपर फास्फेट के रूप में) का सन् 2002–03 में 6686 मैट्रिक टन प्रयोग किया जबकि 2012–03 में 5016 मैट्रिक टन का उपयोग हुआ सारणी संख्या 4.6 के अनुसार गत 10 वर्षो में 1670 मैट्रिक टन खाद के उपयोग में वृद्धि हुई है। पोटेशियम खाद का सन् 2002–03 में 87 मैट्रिक टन हुआ इस प्रकार इसमें 10 वर्षों में 153 मैट्रिक टन खाद का अधिक प्रयोग हुआ है। रासायनिक खादों के प्रयोग से फसलोत्पादन में वृद्धि हुई पर अनेक कृषि विकास की समस्याओं का भी प्रादुर्भाव हुआ जैसे कृषि में अधिक लागत मृदा प्रदूषण और पौष्टिक आहार में कमी हुई है।

रासायनिक खाद के प्रयोग में आया परिवर्तन

आरेख संख्या 4.4

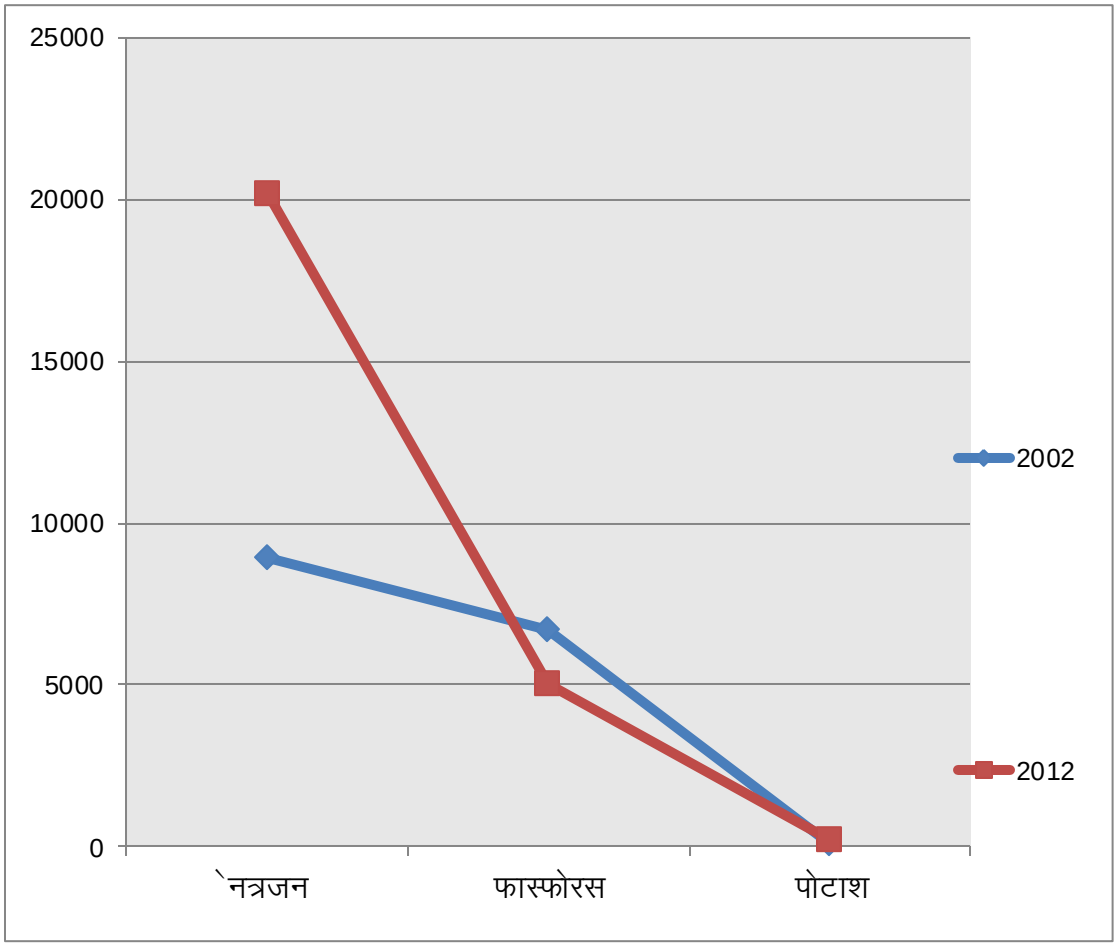

कीटनाशक व पौधें संरक्षण औषधियों का प्रयोग

कृषि विकास स्तर में हरित क्रान्ति के आगमन के कारण अनेक कृषि यन्त्र, खाद और उन्नत बीजों के साथ–साथ कीटनाशक दवाओं का आगमन भी हुआ है। कभी–कभी अच्छी फसल होते हुए भी पौधों में बीमारियों के कारण फसल उत्पादन पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है। पौधों में फफूद, जीवाणु, वायरस, माइक्रोप्लानुमा, आदि सूक्ष्म जीवों से एवं अनेक जलवायिक कारक जैसे तापमान में भारी बदलाव मृदा एवं जल का अन्तर आने से पौधों में पोषक तत्त्वों की कमी या अधिकता, मृदा में क्षार एवं लवण मात्रा में होने से पौधों में अनेक प्रकार की बीमारियाँ पैदा हो जाती है उनेक नियन्त्रण के बिना फसल उत्पादन को नुकसान पहुँचता है। क्षेत्र में फसलों में रोग नियन्त्रण हेतु प्रयोग की जाने वाली प्रमुख कीटनाशक सूक्ष्म, जीवाणुनाशक औषधियों का विवरण निम्न है–

1 कीटनाशक दवायेंः– बी. एच. सी कारवोरिल, साइपर मेथरीन एवं फनवलेरेट (कपास हेतु) डाइक्लारस, डी.डी.टी. डीप– थीऐट, ओ. एस. अल्फान, फमिटोथियान, मैलाथियान, फोसफोसिडान, आदि दवाइयाँ है।

2 कवकनाशकः– काफर सल्फेर, कापर आक्सेलोराइट, कारवेन्डाजीम, मानेजोजाव, सल्फर, जीनाव एवं डी. फोलशन व डाइनोकेप है।

जिले की विभिन्न फसलों में मुख्य रोग एवं औषधियों का प्रयोग

बाजरे में लगने वाले मुख्य रोग एव उपाय

सफेद लट इसके प्रभाव की रोकथाम के लिए एक किलों बीज में 3 किलों कार्योफ्यूशन 13 प्रतिशत या क्यून्मल फंस 15 प्रतिशत कण मिलाकर बुवाई करते है। काश्तकार इस कीट की रोक थाम के लिए मिथाइल पैरामिथाइन 12 प्रतिशत या क्यूनाल फांस 1.5 किलों ग्राम प्रति हेक्टेयर मुरक कर किया जाता है।

गेंहू की फसल में रोग एवं उपाय

गेंहू की खडी फसल में दीमक की रोकथाम के लिए दो लीटर एल्ड्रिन 130 ई. सी. या 2 लीटर लिन्डेन 120 ई.सी. 1 प्रति हेक्टेयर सिंचाई के साथ दिया जाये। रोली रोग के लिए जिले में रोली रोग के नियन्त्रण हेतु रोली रोधक किस्मों का प्रयोग किया जाता है। सैन्य कीट–इस कीड़े की रोकथाम के लिए बी. एच. सी. 10 प्रतिशत चूर्ण 25 किलों प्रति हेक्टेयर भुरकाया जाता है।

चने की फसल में रोग एवं उपचार

रुटवर्म, वायर वर्म एवं दीमक 10 प्रतिशत या एल्ड्रिन 15 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से आखिरी जूताई से पूर्व भुरकाते है। हुलसा रोग– इस रोग से फसलों की रक्षा के लिए रोग प्रारम्भ होते ही डाहथेन एम. 45 या घुलनशील गंधक 10.2 प्रतिशत का 10 दिन के अन्तर पर छिड़काव किया जाता है।

सरसों की फसल में रोग एवं उपचार

आरामक्खी इसके रोग से नियन्त्रण हेतु बी. एच. सी. 10 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हेक्टेयर प्रातः या सायं भुरकाया जाता है। हीरक तितली–इसकी रोकथाम के लिए क्यूनाल फांस 25 प्रतिशत ई. सी.। लिटर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़काव किया जाता है। मोयला– इसकी रोकथाम हेतु

पैराथामियान 12 प्रतिशत या पैरासियान 15 प्रतिशत प्रति 25 किलो प्रति हेक्टेयर भुरका जाता है। उपर्युक्त औषधियों का प्रयोग फसल में रोग नियन्त्रण हेतु छिड़काव घोल बनाकर अथवा चुर्ण के रुप में होता है इस में स्पेयर एवं डस्टिंग मशीनों को काम ली जाती है।

इनके प्रयोग से फसल उत्पादन में कीटों से होने वाली फसल की क्षति से बचा जा सकता है। जिले में कीटनाशक औषधियों की मात्रा की दृष्टि से अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि सन् 1992–93 में प्रति हेक्टेयर कीटनाशक औषधियों की मात्रा 0.215 किलो ग्राम थी जो 2012–13 में यहाँ बढ़कर 1.21 किलोग्राम हो गयी। इन कीटनाशक औषधियों का प्रयोग जिले के सम्पूर्ण भाग में किया जाता है। इन औषधियों का प्रयोग खरीफ व रबी दोनों ही फसलों में किया जाता है।

जिले में पौधें संरक्षण औषधियों का वितरण

सारणी संख्या 4.7 (प्रति हेक्टेयर में)

उपचार	वर्ष					
	2007–08	2008–09	2009–10	2010–11	2011–12	2012–13
बीज उपचार	72570	82135	90000	110000	110000	108600
भूमि उपचार	700	800	3500	5500	5200	5200
चूहा नियंत्रण	3700	3500	4000	4800	4900	6000
सघन उपचार	2750	3600	9000	12000	9800	9000
पेलीफेंगस कीट नियंत्रण	2340	2490	3500	4100	3900	4100

स्त्रोत : जिला कृषि अधिकारी सवाई माधोपुर से प्राप्त आंकड़ों से परिकलित।

जिले में पौधे संरक्षण औषधियों का उपयोग बढ़ रहा हैं। इन में बीज उपचार , भूमि उपचार , चूहा नियंत्रण, सघन उपचार ,पोली फेंगस कीट नियंत्रण एवं खरपतवार

नाशक रोगों पर नियंत्रण भारतीय कृषि विभाग ने खोज लिए है।[7] इन का उपयोग जिले में सन् 2012–13 में 53340 हेक्टेयर की वृद्धि हुई। यह जिले में कृषि विकास के स्तर को दर्शाता है।

कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरणीय सम्बंध

सामान्य रूप मे यह कहा जा सकता है कि कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरण सम्बंध विभिन्न वस्तुओं का एक ऐसा एकीकृत समूह होता है जिसके विभिन्न संघटक, आपस में आबद्य होते है तथा एक दूसरे के साथ अनुक्रिया करते है। उदाहरण के लिए मानव का शरीर एक तन्त्र है, मोटर कार का इंजन, गैस स्टोव आदि सम्बंध है यहाँ पर भी एक सम्बंध है।

जिले में कृषि तकनीकी विकास में अन्तनिर्मित नियन्त्रण की व्यवस्था होती है। अर्थात यदि कृषि प्राकृतिक विकास के किसी एक संघटक मे प्राकृतिक एव ंमानवीय कारणों से कोई परिवर्तन होता है तो तन्त्र के दूसरे संघटक में परिवर्तन द्वारा उसकी भरपाई हो जाती है। परन्तु यह परिवर्तन यदि प्रौद्योगिकी मानव के आर्थिक क्रिया कलापों द्वारा इतना अधिक हो जाता है कि एक पर्यावरणीय तन्त्र के अन्तनिर्मित नियन्त्रण की व्यवस्था की सहन शक्ति से अधिक हो जाता है तो उक्त परिवर्तन की भपाई (स्थानापूर्ति) नहीं हो पाती है और यह तन्त्र अव्यवस्थित तथा असंतुलित हो जाता है एवं पर्यावरणीय अवन्यन तथा प्रदूषण होता है।

जिले में कृषि तकनीकि विकास व पर्यावरणीय सम्बंध में सन्तुलन बनाये हुए है। सिंचाई के साधनों के कारण अव भूमि उनउर्वक होने से बचाया जा सकता है। उन उपजाऊ भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सकता है। तकनीकीकरण द्वारा तिव्र गति से खेतों की मेंडबन्दी, उत्तम किस्म के पेड़–पौधे लगाकर भूमि कटाव के अपर्याप्त अपरदन को रोका जा सकता है। कृषि व पर्यावरण में सदियों से अनुकूल सम्बंध बने हुए कभी कृषि तनीकीकरण पर्यावरणीय दशाओं को प्रभावित करता है तो कभी पर्यावरणीय दशाऐं कृषि विकास को प्रभवित करते है।

कृषि विधियाँ

विभिन्न कृषि विधियों का सही उपयोग करके जिले मे ंकृषि तकनीकीकरण विकास एवं पर्यावरणीय सम्बन्ध प्रगाढ़ बने रहे सकते है।

1 जुताई

भूमि संरक्षण को रोकने के लिए जुताई की संख्या गहराई व विधि का विशेष महत्त्व है। ग्रीष्म ऋतु में खाली खेत छोड़ना , जुताई करने की अपेक्षा हानिकारक है,

क्योंकि ग्रीष्म में जुताई किये गये खेत में अधिक पानी शोषित हो सकता है जो कि भूमि क्षरण को कम करता है।

2. फसलों का चयन

खेत में उगाई जाने वाली फसलों का चयन सही ढ़ंग से किया जाना।

क्षरण अरोधी फसलें :– दाल वाली फसले जैसे – उड़, मूंग लोबिया, ग्वार, लुसर्न , मूंगफली , हुलगाँव व कुल्थी आदि ।

छोटे दाने वाली फसलों में जई ,जौ, गेंहू व बाजरा आदि व विभिन्न प्रकार की घास–काचनी, चरी व वरचीन आदि।

इन फसलों के प्रमुख लाभ हैं –

1 वानस्पतिक आच्छादन वर्षा की बूँदों के सीध भूमि पर आक्रमण को रोकता है।

2 मृदा जल स्त्राव को बढ़ाता है।

3 मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ाकर भूमि के विभिन्न रासायनिक ,भौतिक व जैविक क्रियाओं में सुधार करता है। मृदा में जीवांश पदार्थ , मृदा को आपस में बाँधकर रखता है व मृदा जल को रोक व सोख कर मृदा क्षरण को कम करता है।

3 फसल चक्र

भूमि की उर्वरता को स्थिर रखने में फसल चक्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है फसल चक्र के क्षरण अवरोधी फसल का होना आवश्यकता है। फसल चक्र के प्रमुख उद्देश्य निम्न होते है–

1 क्रमबद्व खेती ।

2 मृदा उर्वरता में वृद्धि ।

3 विभिन्न खरपतवार, बीमारी व कीट–पतंगों के आक्रमण की रोकथाम ।

4 खेतों की भूमि क्षरण से सुरक्षा ।

4 खादों का प्रयोग

भूमि में पौधों के खाद्य तत्वों की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के जीवांश जैसे गोबर, क्पोस्ट व हरी तथा अकार्बनिक खाद में डालते है। विभिन्न जीवांश पदार्थ जो भूमि मे मिलाये जाते है व भूमि के कणों को आपस में बाँधते है।

5 **बुवाई विधियाँ** खेतों मे बुवाई छिड़कावों विधि की तुलना में कतारों मे बुवाई लाभदायक रहती है।

6 सिंचाई विधियाँ

इस प्रकार की विधियों को अपनाये जिसमें कम पानी से खेत में लगा कर अधिक क्षेत्र सींचा जा सके। बाढ़ विधि हमेशा ऐसे क्षेत्रों में हानिकारक होती हैं बौछारी विधि से सिंचाई अधिक लाभदायक है।

वर्तमान युग में आधुनिक नवीन तकनीकी को अपनाये जाने के फलस्वरूप इसमें वाधित विनियोग की आवश्यकता और अधिक बढ़ गई है। रासायनिक उर्वरकों एवं कीनाशक औषधियों के प्रयोग, यन्त्रीकरण, कृषि–सिंचाई सुविधाओं में अधिकाधिक वृद्धि कृषि में तकनीकी विकास से ही सम्भव है। यह एक निर्विवाद तथ्य है कि कृषि में तकनीकीकरण के अभाव में कृषि विकास की न तो कल्पना की ही जा सकती है और न ही इस सम्बन्ध में प्रतिपादित योजनाओं एवं कार्यक्रमों को मूर्त रूप प्रधान किया जा सकता है। कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरणीय सम्बन्ध का शरीर की रक्त बाँहनियों के समान माना जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शुक्ला ,राजेश एवं शुक्ला, रश्मि (2009) : '' कृषि भूगोल'', प्रकाशन अर्जून पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
2. राव श्रीवास्तव, (1990) : '' पर्यावरण और पारिस्थितिकीय'', वशुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ट संख्या –425।
3 डॉ. सत्यवीर यादव .**(1996)** :''कृषि पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण नियोजन'', राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ट 117–118।
4. शर्मा, सुरेश चन्द्र **(1970)** : ''जिला इटावा में भूमि उपयोग'', उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, अंक–6
5. गुर्जर आर. के. . **(1987)** : '' इरीग्रेशन फॉर एग्रीकल्चर मॉर्डनाइजेशन'', साइन्सटीफिक पब्लिशर्स, जोधपुर, पृष्ट संख्या–130–131।
6. सिंह, छिद्रदा (1984),'' खरीफ फसलों की वैज्ञानिक खेती एवं फसल परिस्थितिकी'', भारती भारत प्रकाशन, मरेठ, पृष्ट सं.–237।
7. खरीफ की प्रमुख फसलें **(1987)**: कृषि विभाग, राजस्थान, जयपुर, पृष्ट 79–81

पंचम अध्याय

कृषि विकास स्तर का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव

- कृषि विकास स्तर का प्राकृतिक पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव
- रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक औषधियों का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव
- सिंचाई का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव

कृषि विकास स्तर का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव

कृषि काल में भरण–पोषण की बढ़ती सुविधा के कारण जहाँ एक और जनसंख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई , वहीं दूसरी और जनसंख्या का विस्तार नये क्षेत्रों में एवं मानवीय आवश्यकताओं को बढ़ाना है। इस प्रक्रिया से जन भार वितरित होकर कृषि विकास को नया आयाम दिया है। कृषि विकास के लिए चारागाह का प्रबन्धन , आबादी के लिए भूमि एवं साजों–सामान , कृषि उपज व उपकरणों को लाने ले जाने के लिए रास्तों का निर्माण और अन्य सांस्कृतिक कार्यों के लिए मानव में संघर्ष प्रारम्भ हुआ। इस युग तक विशाल पृथ्वी के परिप्रेक्ष्य में कृषि विकास व आबादी इतनी कम थी कि इस मानवीय हस्तक्षेप को प्रकृति आसानी से क्षतिपूर्ति करने में समर्थ थी । फलतः पर्यावरणीय दशाएं अनुकूल बनी रही।

कृषि विकास स्तर , सामाजिक एवं आर्थिक विकास के साथ मनुष्य की पर्यावरणीय दशाओं पर प्रहार करने की क्षमता में भी विकास हुआ। प्रकृति लाभ नहीं देती है , प्रकृति से लाभ लिया जाता हैं– जैसी भावना ने पर्यावरणीय दशाओं का भरपूर उपयोग करने के लिए उत्साहित किया। प्राकृतिक संसाधनों के भरपूर उपयोग के लिए तकनीकी सुधार होता गया , जिससे उत्तरोत्तर कृषि उत्पादन में वृद्धि होती गई । अधिक उत्पादन से जनसंख्या का भरण–पोषण आसान होता गया , फलतः जनसंख्या बढ़ती गई। 1650 ई. तक विश्व की जनसंख्या केवल 54.5 करोड़ थी , जो बढ़कर 1850 में 126 करोड़ हो गई । सन् 2011 में लगभग सात अरब हो गई थी । स्पष्ट है कि औधोगिक क्रान्ति के पूर्व जनसंख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती रही , क्योंकि इस समय तक कृषि प्रधान देश सबसे अधिक जनसंख्या वाले हो गये थे एशिया के कृषि प्रधान देशों में भारत , चीन , पाकिस्तान व इण्ड़ोनशीया सबसे अधिक जनसंख्या के पूंज बन चुके थे , क्योंकि यहाँ की उपजाऊ भूमि , उपयुक्त जलवायु और सिंचाई के साधन उपयोग के आधार थे ।[1] उस समय तक कृषि उत्पादन और खपत में सन्तुलन था , क्योंकि कृषि उत्पादनों का व्यापारिक महत्व केवल स्थानिय था। कृषि के लिए सीमित स्तर पर पर्यावरणीय दशाओं के साथ हस्तक्षेप किया जाता था । फिर भी ऐसी परिस्थितियाँ बनने लगी थी , जिससे स्थानिय पर्यावरणीय दशाएं असंतुलित होने लेगी है। परिवर्तनशील अथवा कृषि विकास स्तर का बड़े पैमान पर वन विनाश ,जो उस युग में सुरू आज वृहत पैमान पर पहुँच रहा है। कृषि विकास के कारण बड़ी बस्तियाँ , नगर एवं ग्राम , यातायात के मार्ग , विपणन केन्द्र , सामाजिक संगठन आदि अस्तिव में आये। इसका गहरा प्रभाव पर्यावरणीय दशाओं के साथ मानव निर्मित सांस्कृतिक पर्यावरण पर भी हुआ।

यह कहना सही नहीं है कि कृषि विकास स्तर ने पर्यावरणीय दशाओं को नष्ट किया , क्योंकि कृषि विकास आधुनिक सन्दर्भ में केवल 50 वर्ष पुराना है। भारत व राज्य के साथ–साथ सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास का पर्यावरण दशकों पर प्रभाव हरित क्रान्ति के युग से प्रारम्भ हुआ है। इसके लिए जनसंख्या विस्फोट प्रमुख रूप से जिम्मेदार है। बड़ती जनसंख्या की बड़ती मांग के कारण कृषि विकास स्तर को बढ़ाने के लिए तकनीकी , रासायनिक खाद उन्नत बीज एवं सिंचाई साधनों के विकास ने पर्यावरणीय दशाओं को प्रभावित किया है। बढ़ती जनसंख्या के कारण मानव बढ़ती गतिविधियों की पूर्ति के लिए मानव ने सबसे पहले कृषि विकास के स्तर को बढ़ाया था। इसके लिए मानव ने सबसे अधिक वनों की कटाई प्रारम्भ की फलस्वरूप वायुमण्डलीय गैसीय सन्तुलन विगड़ा एवं ग्रीन हाऊस प्रभाव तथा ग्लोबल वार्मिग जैसे दुष्परिणाम सामने नजर आने लगे है। ऐसा समझा जाता है कि बड़े पैमानें पर वनों के विनाश से ही इराक में मैसोपोटामिया की सभ्यता , पीरू की इंका सभ्यता तथा सिंधुघाटी की प्राचीन सभ्यताओं का पतन हुआ था। वन विनाश , मृदा अपरदन , बाढ़, अकाल, वर्षा की कमी इत्यादि दुष्परिणाम नजर आने लगे है। पर्यावरणीय दशाओं के अन्य प्रमुख तत्व जिनमें हवा , मिट्टी , एवं पानी सभी गंभीर प्रदूषण की चपेट में क्योंकि जनसंख्या दबाव के कारण प्रकृति निरन्तर अवक्रमित होती चली जा रही हैं। अगर यही सब इसी गति से निरन्तर चलता रहा तो '' ग्रीन हाऊस प्रभाव '' कारण बढ़ती हुई गर्मी ध्रुवों की बर्फ को पिघलाकर प्रलय को आमंत्रण देगी । वैज्ञानिक 25 वर्ष मे पृथ्वी का तापमान औसतन 1 से 2 डिग्री बढ़ने का अनुमान लगाते है। तापमान बढ़ने से सम्पूर्ण पृथ्वी की पर्यावरणीय दशाओं का सन्तुलन विगड़ता चला जा रहा है। भारत में मौसमी विभाग के अनुसार उर्वर भूमि वालें उत्तरी क्षेत्र में गेंहूँ की उपज कम हो सकती है पूर्वी तटीय क्षेत्र में चक्रवात व तूफान के साथ बाढ़ आने की संभावना बनी रह सकती है। विश्व संसाधन संस्थान रिपोर्ट अनुसार भारत ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन करने वाला पांचवा सबसे बड़ा देश है।[2]

जिले में वन विनास, भूमि क्षरण, पारिस्थतिक परिवर्तन,जैव विविद्यता खतरा इससे वन्य जीव का एक स्थान से दुसरे स्थान पर पलायन करना इनमें बाघ, चितल, हिरण, नीलगाय, रोजड़ आदि प्रमुख है। जिले के उत्तरी, उत्तरी–पूर्वी व दक्षिणी भाग में स्थित 8 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में अधिक पड़ा है।

कृषि विकास के स्तर से होने वाले पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव को दूर के उपाय

प्राकृतिक तथा मानव कृत पर्यावरण कृषि विकास का अभिन्न अंग है। अगर हमें कृषि विकास के स्तर को बढ़ाना है तो पर्यावरणीय दशाओं में कुछ बदलाव तो जरूरी

है पर वे बदलाव विध्वंसात्मक न होकर रूचिकर कलात्मक हो तथा हमें लालच से बचाये। कृषि विकास के स्तर की जरूरते तथा मांगों की पूर्ति पर्यावरणीय संरक्षण को ध्यान में रखतें हुए करना होगा। पर्यावरणीय दशाओं के साख की दृष्टि ही कृषि विकास तथा प्रकृति में तालमेल विठा सकती है कृषि विकास के स्तर के सकारात्मक व नकारात्मक, परिणामात्मक व गुणात्मक विश्लेषण कर उनके संरक्षण के उपयोग की योजना बनाई जाये।

सवाई माधोपुर जिलें में कृषि विकास स्तर में भारत व राजस्थान राज्य से कम है । महज 20 वर्षों में कृषि भूमि उपयोग में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई दो फसलीय क्षेत्र में 14. 06 प्रतिशत की तथा वास्तविक बोये गयें क्षेत्र में 18.85 प्रतिशत की वृद्धि हुई। कृषि विकास के स्तर से पर्यावरणीय दशाओं पर होने वाले दुष्प्रभावों से कृषक व आमजन को अवगत करानें के लिए भारत सरकार, राज्य सरकारों एवं जिला सरकारों को जिला स्तर पर तहसील एवं ग्राम स्तर पर इन प्रभावों से अवगत कराया जायें । इन के दुष्प्रभाव वे उपयोग को समझाया जाये।

उपरोक्त कठनाई का उचित समाधान यहीं है कि धीरे–धीरे नई नीति को विस्तृत क्षेत्रों में लागू किया जाये खेतीहर , मजदूरों , छोटे कृषकों व ग्रामीण काश्तकारों के लाभ के लिए विशेष कार्यक्रम संचालित किये जाय , ग्राम्य औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया को तजे करके ग्रामवासियों के लिए रोजगार के साधनों की व्यवस्था बढ़ाई जाये। सरकार के द्वारा देश में छोटे कृषकों के लिए कृषि विकास ऐजेन्सयों की स्थापना की जाये । जिसे किसानों को पर्यावरणीय दशाओं के कुप्रभाव से अवगत कराया जा सके । सार्वजनिक निर्माण कार्यक्रम को अपनाया जाये और कृषि विकास के ढ़ाचे में तथा उद्योगों के विकास में इस प्रकार फेर बदल किये जाये जिसमें पूँजी की तुलना में श्रम का अधिक उपयोग हो सके एवं पर्यावरणीय दशाओं को निम्न स्तर पर प्रभावित करे।

कृषि विकास व पर्यावरणीय दशाओं के मध्य सम्बन्ध शरीर की रक्त वाहिनियों के समान मान सकते हैं इसमें कोई अतिशोक्ति नहीं होगी । जिससे ध्यान में रखते हुए कृषि में कतनीकी विकास किया जाना चाहिए । जिले में पर्यावरण को हानि पहुँचाने वाले रासायनिक खाद उर्वरकों के स्थान पर देशी खाद (गोबर खाद) के उपयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए । खेतों में उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए दलहन , गांठ वाली फसलों के उत्पादन व फसलों के चक्र को अपना , आदि को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। कुआँ व नलकूपों से सिंचाई के स्थान पर नहर से सिंचित क्षेत्र को बढ़ावा दिया जाये । जिले में परती भूमि पर अधिक से अधिक पेड़–पौधे लगाये जाये । कृषि विकास सवाई माधोपुर जिले की अर्थव्यवस्था का आधार ही नहीं है बल्कि हमारे भारत देश की अर्थव्यवस्था की रीड़ की हड्डी के समान है।

मानव व मानव का वातावरण स्वच्छ रहने हेतु हमें अधिकाधिक वृक्षारोपण करना होगा एवं संयुक्त प्रयास करते हुए पर्यावरणीय चेतना लानी होगी। अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर 3 जून 1992 में रीओ–द–जेनेरों में पृथ्वी सम्मेलन सम्पन्न हुआ वह पूर्णतः पर्यावरणीय केन्द्रीत था। शुष्क कृषि पद्धति को अपनाया जाये सिघ्र पकने वाले उत्तम किस्मों के बीजों के प्रयोग पर जोर दिया जाये।

जिले में रासायनिक उर्ववरों व कीटनाशक औषधियों में 20 वर्षों में सन् 1992–93 में प्रति हेक्टेयर कीटनाशक औषधियों की मात्रा 0.215 किलो ग्राम थी जो 2012–13 में यहाँ बढ़कर 1.21 किलोग्राम हो गयी। जिले में सन् 2002–03 में नाइट्रोजन खाद (अमोनियम सलफेट के रूप में) 8906 मैट्रिक टन उपयोग में लाई गई जबकि सन् 2012–13 में 20160 मैट्रिक टन का उपयोग किया गया। इस प्रकार इस खाद के प्रयोग में 10 वर्षो में 11254 मैट्रिक टन की वुद्धि हुई। इसी प्रकार फास्फेटिक खाद (सुपर फास्फेट के रूप में) का सन् 2002–03 में 6686 मैट्रिक टन प्रयोग किया जबकि 2012–03 में 5016 मैट्रिक टन का उपयोग हुआ सारणी संख्या 4. 6 के अनुसार गत 10 वर्षो में 1670 मैट्रिक टन खाद के उपयोग में वृद्धि हुई है। पोटेशियम खाद का सन् 2002–03 में 87 मैट्रिक टन हुआ इस प्रकार इसमें 10 वर्षों में 153 मैट्रिक टन खाद का अधिक प्रयोग हुआ है। यह प्रवृतिया जिले में कृषि विकास को तो दर्शाती है लेकिन इससे जिले में पर्यावरणीय दशाओं प्रभाव पड़ रहा है। जिले में पश्चिम व मध्यवृती क्षेत्र में अधिक पड़ा है।

कृषि विकास स्तर का प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव

प्राकृतिक पर्यावरण के सामान्तर निर्मित मानवीय पर्यावरण इगिंत करने लगा कि प्रकृति पर विजय पायी जा सकती है। इसी मानसिकता के कारण मानव प्रकृति सम्बन्ध में दुराव आने लगा। प्रकृति के प्रति बढ़ती उदाशीनता के कारण कृषि विकास में किये जा रहे है नित्य नये तकनीकी , रासायनिक उर्वरकों , उत्तम बीज , ऊर्जा उपयोग आदि कार्यों को करते समय यह भूला दिया गया कि प्रकृति के नियमों का उल्लंघन दुःख दायी हो सकता । कृषि में तकनीकीरण ने जो मानसिकता प्रधान की उससे कृषि विकास और पशुपालन के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। कृषि में कृषि के कारण प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रहार बढ़ता गया । अधिक उत्पादन के लिए भूमि का इतना उपयोग किया जाने लेगा कि उसकी उत्पादकता घटने लेगी लेकिन आधुनिकता के आवेश में उसे आयाम देने के लिए बाध्य किया गया । मानव के तकनीकी विकास का अहंकार प्राकृतिक पर्यावरणीय समस्याओं के रूप में प्रकट होने लगा है , जो उसके अस्तित्व के लिए खतरा बनता जा रहा है। विगत सौ वर्षों की तिव्रता आर्थिक, सामाजिक प्रगति ने प्रदुषण प्राकृतिक प्रकोप और विविध सांस्कृतिक समस्याओं को खड़ा कर दिया। अब सवाल यह उठ रहा है कि क्या हम इक्कीसवीं सदी को झेल पायेगें ? '' विश्व बैंक के 2000 की रिपार्ट में कहा गया है कि बीसवीं

सदी प्रगति के उत्तरोत्तर वृद्धि की सदी रही है तो इक्कीसवीं सदी नीचे खिसकने की सदी प्रमाणित होगी।[3] ''

कृषि भारत का ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व का प्राथमिक उद्यम हैं , जिनका इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। आज भी एक बड़ी जनसंख्या का भरण–पोषण कृषि कार्यों से हो रहा है। इस उद्यम में मानव–प्रकृति अर्न्तप्रक्रिया इतनी सरल और सामान्य रही है कि हजारों वर्ष तक इनके कारण कोई विशेष पर्यावरणीय कठनाईयाँ उत्पन्न नहीं हुई। प्रकृति के सहयोग से की गयी कृषि पर्यावरणीय दशाओं को उतना ही प्रभावित करते रहे हैं , जितनी उसकी सहन शक्ति थी। लेकिन विश्व की बढ़ती जनसंख्या तकनीकी विकास और भौतिकतावादी जीवन पद्धति के कारण कृषि का जो नया रूप विकसीत किया गया है, वह प्रकृति के नियमों की अवहेलना पर आधारित है। मृदा से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए कृत्रिम खाद , सिंचाई , लगातार जुताई और बोवाई की जो पद्धति कृषि विकास के नाम पर प्रयुक्त हुई उससे मृदा की गुणवत्ता ह्यसमान होने लगी है। हरित क्रान्ति से अधिक अन्न प्राप्त किया , लेकिन मृदा की गुणवत्ता को घुन लग गया , क्योंकि इसका प्रयोग निर्दयतापूर्वक किया गया। उन्नत बीज , सिंचाई , कीटनाशक दवायें तथा अन्य तकनीकी उपायों को बेरहमी से प्रयोग किया गया। लेकिन भारत जो कृषि पदार्थों का आयातक था अब आत्मनिर्भर हो गया है। भूमि के गहनतम प्रयोग का क्रम जो 1965 में शुरू हुआ, वह 1985 तक पहुँचते–पहुँचते मृदा ह्यस का कारण बन गया। अनेक क्षेत्रों में मृदा की घटती गुणवत्ता प्रकट होने के बाद मृदा परीक्षण का काम प्रारम्भ किया गया ताकि उर्वरकों का उपयोग नियन्त्रित ढ़ग से किया जा सके। कृषि सुधार के कार्यक्रमों का सभी राज्यों में समान महत्त्व न दिये जाने के कारण आज भी इसकी समस्याओं का लेखा–जोखा अधुरा है।

जिन क्षेत्रों में कृषि का यन्त्रीकरण अधिक हुआ वहाँ पशु शक्ति के स्थान पर यन्त्रों से काम लिया जाने लगा । पशुओं की घटती संख्या के कारण गोबर की खाद खेतों तक कम पहुँचने लगी और उसका स्थान कृत्रिम खाद ने लिया। मिट्टी की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए इन उर्वरकों का बढ़ता उपयोग कहीं ने कहीं संकट सीमा तक पहुँच गया है। कृषि उत्पादों से बढ़ती आय के पीछे किसान जाने अनजाने भागता रहा है। इस दौड़ में पंजाब , हरियाणा , तमिलनाडू , गुजरात , महाराष्ट्र और पश्चिमी उत्तर प्रदेश अग्रणी क्षेत्र बन गये। खद्यान्नों का उत्पादन 1970–71 में 238 लाख टन से बढ़कर 1982–83 में 425 लाख और 2001–02 में 21 करोड़ टन से अधिक तथा 2010–11 में लगभग 60 करोड़ टन हो गया । जिले में कृषि भूमि उपयोग में तिव्र गति से परिवर्तन हुआ है। वास्तविक बोया गया क्षेत्र 1992–93 में 47. 5 प्रतिशत था जो बढ़कर 20012–13 में 56.58 प्रतिशत हो गया । जिले में उत्तर–पूर्व व मध्यवृती क्षेत्र में अधिक पड़ा है। जिले में इस का स्वाभाविक है कि भारत अपने उत्पादन वृद्धि को बनाये रखने के लिए इतना सचेष्ट रहने लगा है कि वह इनसे

उत्पन्न होने वाली प्राकृतिक पर्यावरणीय समस्याओं से बेखबर रहा है। इसे एकांगी सोच कहा जा सकता है , जो आज प्राकृतिक पर्यावरणीय संकट को जन्म दे रहा है।

कृषि विकास स्तर ने यातायात व संचार के साधनों में तिव्र वृद्धि हुई । औद्योगिक क्रान्ति का आधार कृषि विकास ही रहा है। जैस–कृषि आधारित उद्योग , गुड़ उद्योग , चीनी उद्योग , खड़सारी , सूती वस्त्र उद्योग आदि कारकों ने प्राकृतिक पर्यावरण को प्रभावित किया है। आज कृषि भरण–पोषण का साधन मात्र न रह कर व्यापार का माध्यम बन गई है। इस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारतीय उत्तम किस्म के फल , चाय , रेशम , तम्बाकू आदि को प्राप्त करने के कारण रेल सेवा का विकास किया । इस का कारण कृषि विकास के स्तर ही रहा है। रेल मार्गों व सड़क मार्गों के निर्माण के लिए वनों का तिव्र गति से ह्रास हुआ है।

कृषि विकास के स्तर का प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव निम्नलिखीत है–

1 कृषि अपशिष्ट

ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि क्रियाकलापों से भी अपशिष्ट पदार्थ उत्पन्न होते है । खेतों में फसलों के प्रसंस्करण के समय अनेक अपशिष्ट निकते है। जिले में कृषि विकास स्तर से कृषि अपशिष्ट पदार्थों में भी वृद्धि हो रही है। कृषि अपशिष्ट पदार्थों की सर्वाधिक उत्तरी , उत्तरी–पूर्वी व दक्षिणी भाग में स्थित 8 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को सम्मिलित किया गया है। इन में खण्ड़ीप, सुकार, खड़ेली, कुनकटा कलाँ, बाड़ कलाँ, बाटोदा, रवांजना डूंगर, व बहरावण्ड़ा खुर्द भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को इस अत्याधिक विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण के वर्ग में सम्मिलित किया गया है। (मानचित्र 7.1) । इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक + 0.51 से भी अधिक है। काश्त क्षेत्र, दुपज क्षेत्र, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग, उन्नत बीजों के अन्तर्गत क्षेत्र, ट्रेक्टरों का अनुपात की दृष्टि से यह वर्ग अत्याधिक विकसित है। जिन क्षेत्रों में सिंचित क्षेत्र अधिक है वहीं कृषि विकास हुआ है। कृषि अपशिष्ट पदार्थों में पत्तियाँ , ड़ठल , जड़े , भूसा , गोबर आदि होते है। इन अपशिष्ट पदार्थों के ढ़ेर पर पानी गिरने से वह कार्बनिक मलवा सड़ने लगता है जैसे–गन्ने की खोई आदि है और वायु प्रदुषण का कारण बनता है। कृषि आधारित उद्योगों के अपशिष्ट से ओजोन गैस के नष्ट होने का खतरा बढ़ता जा रहा है।

2 भूमि क्षरण

भूमि क्षरण का प्रमुख कारण मनुष्य द्वारा कृषि विकास के स्तर को बढ़ने के लिए वृक्षों की अत्याधिक कटाई की हैं। इस कारण जिले में वर्षा के पानी की रोक कम हो गई और पानी का तेज वहाब खेतों की उपजाऊ मिट्टी जिसे बनने में कई सौ वर्ष लगे

होगे मिनटों में बहाले जाता है। एक तरफ इसे निरन्तर कृषि उत्पादन पर असर पड़ा है और दुसरी तरफ प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव पड़ रहा है। यह मिट्टी नदी , तालाब , पोखर, बांधों किनारे पर इक्कठी होकर जल भण्ड़ारों की भराव क्षमता कम करती है। जिले में बनास , मोरेल व गुदाला नदी बेसिन व पहाड़ी ढ़ालों के वृक्षों को काटकर कृषि की जा रही है। इसे कम पानी से भी भूमि क्षरण बाढ़ता जाता है।

3 भूमि का असंगत उपयोग

भूमि के असंगत उपयोग से प्राकृतिक पर्यावरण में तत्काल व बहुत अधिक पर्यावरणीय समस्याएं उढ़ आती हैं। चाहे वह कार्य राजकीय विकास के अधिकारी करते हो अथवा स्वयं कृषक अपने स्तर पर भूमि का विभिन्न प्रकार से उपयोग करता हो उदाहरण से पहाड़ी ढ़ालों के आधार के पास कृषि कार्य बांधों , नहरों , सड़कों आदि के निर्माण के कारण उपरी भाग का नीचे की और संचलन या सर्पण होना सामान्य बातें है। कमजोर शैलिका वाले (यथा–शैल चट्टान) पहाड़ियों तथा श्रेणियों के सहारे कृषि कार्य , उसके आर–पार सड़कों के निर्माण के कारण भूमिवाह प्रायः होते ही रहते है। इस तरह के भूमिवाह तथा सर्पण विंध्यन श्रेणियों तथा कैमूर पहाड़ियों के उपरी भाग की रचना शैल चट्टानों से हुई है।[4] सवाई माधोपुर जिले में अरावली व विंध्यन पर्वत श्रेणियों के निचले भाग व चम्बल, मोरेल , बनास नदी बेसिन में कृषि कार्य हेतु उपयोग में लिया जा रहा है।

4 कृषि में तकनीकी व प्रौद्योगिकी के बढ़ने से प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव

कृषि–कार्य तथा कृषि की तकनीकी मृदा परिच्छेदिका के प्रक्रमों एवं मिट्टी के गुणों एवं विशेषताओं को प्रभावित करती हैं। कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग (यथा–भारी तथा बड़े आकार वाली मशीनों का प्रयोग) के कारण मिट्टी की संरचना में कुछ खास दशाएं से (यथा–गीली , सिल्ट मिट्टी) सघनता के माध्यम से पर्याप्त परिवर्तन हो जाते है। जिले में 10 वर्षों में ट्रेक्टर व ट ट्रौलियों, थ्रेसरों की संख्या में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसका सर्वाधिक प्रभाव उत्तरी , उत्तरी–पूर्वी व दक्षिणी भाग में हुआ हैं जबकि सबसे कम पश्चिमी भाग में हुआ है। इससे जिले में वायु प्रदुषण, ध्वनि प्रदुषण, जल प्रदुषण में वृद्धि हुई है।

5 पशु चारण से प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव

पशुओं के लिए चारागाहों की आवश्यकता होती है। लेकिन बड़े पशुओं की आवश्यकता से अधिक चराई के कारण तर मिट्टीयों की संरचना में ह्यस होता है। पशु द्वारा घास को निम्न स्तर तक चर जाने के कारण निम्न वर्षा के पानी से मृदा का कटाव होने लगता है। ''ज्ञात है कि मिट्टियों में जैविक पदार्थों की मात्रा में वृद्धि होने

I

FLATE No.15

जिले में मृदा अपरदन

II

से मृदा समष्टि की स्थिरता बढ़ती है। जिले में कृषि विकास के उत्तरोत्तर बढ़ने से प्शु चारागाहों में 2.50 प्रतिशत की कमी हुई है। इसका निम्न प्रभाव पश्चिमी भाग में पड़ा है।

6 भूमि प्रदुषण

प्रत्येक पारिस्थितिक तन्त्र में आहार–श्रंखला और ऊर्जा का प्रवाह मिट्टी पर उगने वाले स्वपोषित पेड़–पौधों के द्वारा प्रारम्भ होता है। भूमि प्रदुषण का दुषप्रभाव ने केवल मिट्टी की गुणवत्ता पर पड़ता है। अपितु जीव और मानव जीवन पर भी पड़ता है। भूमि प्रदुषण का दुषप्रभाव जल प्रदुषण एवं वायु प्रदुषण का कारण भी बनता है। जिले में इसके दुषप्रभाव –

(अ) भूमि प्रदुषण के कारण मिट्टी की उर्वरता में ह्यस होने से उनकी उर्वरकता घट जाती है। उत्तरी–पूर्वी व पश्चिमी भाग में भूमि प्रदुषण का प्रभाव रहा है। जिस कारण कृषि उत्पादकता व उत्पादन में भारी कमी आती है।

(ब) कृषि विकास स्तर की बढ़ती हुई प्रवृतियों के कारण भूमि प्रदुषण से मिट्टियाँ वनस्पति के द्वारा प्रदुषक तत्त्वों को मानव तक पहुँचा कर अनेक बीमारियों को जन्म देती है। जिले में इन बीमारियों में ह्रदय रोग , मधुमेह , असमय में बालों का पकना , पेट सम्बन्धी बीमारियाँ ,हैजा, श्वास, बालों का जल्दी पकना, आदि मुख्य है।

7 कृषि भूमि के विस्तार से प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव

अधिक कृषि उत्पादन प्राप्त करने हेतु कृषि क्षेत्रों का विस्तार किया जा रहा है। इस लालसा में वनों की अंधाधुंध कटाई की जा रही है। भारत के हिमालय प्रदेश व उत्तर प्रदेश के पर्वतीय भागों में वनों को साफ कर सेव की खेती का विस्तार करना । इस तरह कृषि विकास हेतु कृषि क्षेत्र को बढ़ाने के लिए वनों का बढ़ पैमान पर विकास किया जा रहा है।

सवाई माधोपुर जिले में पिछले 20 वर्षों में वन क्षेत्र में 6.5 प्रतिशत की कमी हुई । इसका प्रमुख कारण काफी हद तक कृषि विस्तार रहा है। जिले में इसका प्रभाव

1. वन विनास से मिट्टी अपरदन मिट्टी की उर्वरता में ह्यस मृदा अपरदन जन्य अवसादों के नदियों में निक्षेपण से तल का उथला होना परिणामतः बाढ़ का आना एवं फसल का नुकसान 2 वर्षा का कम होना , 3 सुखे का प्रकोप , 4 कई जीवों का अन्यत्र विसरण , 5 कतिपय जीवों का विलोप , जिले में कृषि भूमि के विस्तार के कारण वन्य जीवों को कठनाईयों का सामना करना पड़ रहा है। विशेष तौर पर बाघ ,

चीतल , रोजड़ , हिरण आदि समस्या पैदा हो रही है और प्राकृतिक पर्यावरण अवनयन का संकट बढ़ता जा रहा है।

कृषि विकास के स्तर से होने वाले प्राकृतिक पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव को दूर करने के उपाप–

भारत में गैर–पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोतों का विकास अभी प्रारम्भिक अवस्था में है हालांकि इसकी सम्भावना बहुत अधिक है। भारत गाँवों का देश है। गाँवों को सबसे अधिक लाभ ऐसी ही ऊर्जा से हो सकता है , लेकिन आवश्यकता इनके प्रचार और विकास की है। भोजन पकाने , रोशनी करने और छोटे यन्त्रों के लिए गैर–पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोत–गोबर गैस , पवन शक्ति , कचरा विद्युत , सौर ऊर्जा आदि सबसे उत्तम प्रमाणित हो सकता है। इससे एक तरफ गाँवों में जलावन लकड़ी की समस्या का समाधन होगा , वहीं गोबर का उपयोग खेतों में खाद के लिए किया जा सकेगा। जहाँ जंगल साफ कर दिये हैं , वहाँ जलावन की समस्या विकट हो गई है। यह भी विचारणीय है कि घरेलु कार्यों में प्रयोग की जाने वाली ऊर्जा के प्रयोग की तकनीकी को सुधार कर खपत को होने वाली हानियों से बचाया जा सकता है। इस दिशा में धुआं रहित चुल्हे के प्रसार–प्रचार , कृषि हानिकारक कीटनाशकों , हानिकारक कृषि तरिकों के स्थान पर नवीन तकनीकी को अपनाने पर जोर दिया जाना चाहिए। जिले में पशुओं की संख्या को बढ़ाया जाकर घरेलु जलावन ईधन की मांग को व खेतों में कृत्रिम खाद के स्थान पर गोबर की खाद के उपयोग को बढ़ाया जाकर कृषि विकास के स्तर विकसित किया जा सकता है। इससे पर्यावरणीय दशाओं की समस्या भी हल हो सकती है। पर्यावरणीय दशाओं के सुधार के लिए वैकल्पिक स्त्रोतों का त्वरित विकास आज की सामयिक आवश्यकता है।

प्रारम्भ से ही भूमि के मुख्य संसाधन होने के कारण मानव एवं भूमि का आधार भूत सम्बन्ध रहा है। भूमि संसाधन का विवेकपूर्ण उपयोग सरकार की नियोजन की मुख्य नीति होनी चाहिए , ताकि प्रत्येक सरकार की भूमिका उचित तथा विशिष्ट रूप से राष्ट्रहित में उपयोग हो सके। कभी–कभी भूमि का मुख्य उपयोग हो सके। कभी–कभी भूमि कृषि विकास के स्तर से भूमि का मुख्य उपयोग से सामान्य उपयोग में परिवर्तन करने से अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं , अतः कृषि विकास स्तर के लिए भूमि उपयोग की उपयोगीता के आधार पर ही किया जाना चाहिए जिसे पर्यावरणीय दशाओं पर कोई असर नहीं पड़े सके । कृषि विकास के स्तर से भूमि उपयोग के हर क्षेत्र में भौतिक , जैविकीय , आर्थिक और सामाजिक कारकों का प्रभाव पड़ता है। मानव को उपरोक्त कारकों को ध्यान में रखते हुए ही कृषि विकास के स्तर के साथ–साथ सामंजस्य तथा उसका अधिकाधिक उपयोग करने का प्रयास किया

जाना चाहिए तथा उपयुक्त एवं विवकेपूर्ण उपयोग के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। इसके साथ ही मानव को पर्यावरणीय दशाओं को ध्यान में रखते हुए कृषि विकास के स्तर को बढ़ावा देना चाहिए।

(अ) ऐसी तकनीकी विकसित हो कि ये पुराने उपकरणों में नई तकनीकी को आत्मसात करने की क्षमता हो जिससे पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव न पड़। अर्थात पुर्न उपयोग की तकनीकी में सुधार हो जिससे अधिक से अधिक कृषि उपकरणों रासायनिक उर्वरकों व सिंचाई साधनों , कीटनाशक औषाधियों आदि का उपयोग लम्ब समय तक पुर्नउपयोग में सहायक हो सके।

(ब) यदि किसी तकनीकी से पर्यावरणीय दशाएं अधिक प्रभावित (प्रदुषित) हो रही है तो उस पर रोक लगे साथ ही स्थानापन्न कृषि तकनीकी विकसित की जाए।

रासायनिक उर्वरकों व औषधियों का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव

विश्व में बढ़ती हुई खाद्यान्न सम्बन्धि आवश्यकता की पूर्ति के लिए कृषि का व्यवसायीकरण हुआ इसमें कम समय में अधिक उपज देने वाले बीजों के साथ–साथ रासायनिक उर्वरकों का अधिकाधिक उपयोग कर के वर्तमान समय में मानव ने अपने भरण–पोषण के लिए आवश्यक कृषि विकास स्तर को बढ़ा लिया है लेकिन दूसरी ओर पर्यावरणीय दशाएं प्रभावित हो रही है। पर्यावरणीय दशाएं भी कृषि विकास के स्तर को प्रभावित करे बिना नहीं रहे सकती है। आधुनिक समय में कृषि में रासायनिक , उर्वरकों व औषधियों के प्रयोग के बिना बढ़ती जनसंख्या के लिए भोजन जुटाना असम्भव प्रतित हो रहा है। अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीजों का अधिक प्रकोप होने के कारण जैव नाशी रसायनों का उपयोग भी बढ़ा। इन रसायनों में शाकनाशी , कवकनाशी, कीटनाशी , चूहानाशी , दीमकनाशी प्रमुख है। सन् 1965–66 में विश्व में 2500 अरब टन जैवनाशी रसायनों का छिड़काव हुआ , जिसकी मात्रा 1990 में बढ़कर 7148 अरब टन हो गई , भारत में 1960 में 8620 टन जैवनाशी रसायनों का उपयोग हुआ जो बढ़कर 1966 में 1.7 अरब करोड़ हेक्टेयर भूमि पर अधिक उपज देने वाले बीजों का प्रयोग किया गया जो बढ़कर 1991 में 7 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर हो गया।

सवाई माधोपुर जिले में रासायनिक उर्वरकों का 1992–93 में 15673 मैट्रिकटन प्रयोग किया गया जो बढ़कर 2012–13 में 26416 मैट्रिकटन हो गया था। कीटनाशक औषधियों में सन् 2012–13 में 135600 मैट्रिकटन किया गया । इसका सर्वाधिक प्रभाव उत्तर व दक्षिणी भाग में पड़ा है।

आज हमारा पर्यावरण 50000 हजार से अधिक मानव निर्मित जहरीले रसायनों से प्रदुषित है। अस्सी हजार किस्म के हानिकारक कीटों को मारने के लिए प्रतिवर्ष 3000 हजार नए जहरीले रसायन बनाये जा रहे हैं। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि 97 से 99 प्रतिशत कीटनाशक तथा 95 प्रतिशत खरफतवार नाशक दवाएं अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाती है।

जैवनाशी रसायन फसलों में शेष रह कर केंचुए सहित अन्य लाभ कारी जीवों को नुकसान पहुँचाते हैं। वर्तमान में उपयोग में लिये जाने वाले जैवनाशी रसायनों में डी. डी.टी., पैराथियॉन , क्लोरडेन , लिडेन , एंडासल्फांस , बी. एच. सी., एल्ड्रीन , हेक्लोन , क्लोरोजेन्स और ड्राईएल्ड्रीन पर्यावरणीय दशाओं के लिए सबसे अधिक खतरनाक साबित हुए हैं। इनमें से कुछ जैवनाशी , रसायन मिट्टियों में रहने वाले जीवों द्वारा अपघटीत होकर मिट्टी में प्रवेश कर जाते हैं और पौधों के माध्यम से आहार श्रंखला में प्रवेश कर मानव सहित जीव–जन्तुओं के लिए हानिकारक सिद्ध होते है। अखील भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के एक अध्ययन के अनुसार दिल्ली वासियों के वसा ऊतको में भी ड़ी.ड़ी.पी. के तत्व पाये गये है । जैव नाशी रसायन मिट्टी में रहने वाले जीवों द्वारा अपघटित नहीं हो पाते हैं उनका मिट्टी में सान्द्रण बढ़ते रहने से मिट्टियों में रासायनिक परिवर्तन आ जाने से प्रदूषित हो जाती है।

पशुओं की घटती संख्या के कारण गोबर की खाद खेतों तक कम पहुँचने लगी और उसका स्थान कृत्रिम खादों नें लिया है। मिट्टी की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए इन उर्वरकों का बढ़ता उपयोग कहीं–कहीं संकट सीमा तक पहुँच गया है। कृषि में बढ़ते पूँजी निवेश से खर्च इतना बढ़ गया है कि बाढ़ और सुखे से होने वाली क्षति किसानों की कमर तोड़ देती है। कृषि मजदूरों को बढ़ी मजदूरी देना किसान के लिए कठिन हो रहा है , क्योंकि लागत देना जिस गति से बढ़ा है उस गति से विक्रम मूल्य में वृद्धि नहीं हुई। साथ ही फसल रक्षा के नाम पर कीटनाशकों का प्रयोग भयंकर प्रभाव ड़ाल रहा है। एक आकलन के अनुसार हरित क्रान्ति के नाम पर कीटनाशकों के प्रयोग से विकसित देशों में पचास लाख लोग जहर से प्रभावित होते है, जिसमें एक तिहाई भारतीय है।[5] ड़ी.ड़ी.पी का प्रयोग अब अनेक देशों में प्रतिबन्धित कर दिया गया है। कीटनाशक दबाएं पौधों के माध्यम से मानव शरीर में पहुँच रही है। कृषि विकास स्तर के लिए पृथ्वी के गर्भ से उर्वरक खनिजों की प्राप्ति में जो प्रगति हुई है। यह एक और प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव डालते है। साथ ही इन अपशिष्ट पदार्थों मे रासायनिक खाद् व जैवनाशी रसायनों का जो अंश होता है। वह वर्षा जल के सम्पर्क में आकर जल प्रदूषण व भूमि की गुणवत्ता को कम करते है। इसे पर्यावरणीय दशाएं प्रभावित होती है। जिले में खेतों में की गई जाँच के आधार पर मिट्टी परीक्षण से स्पष्ट हुआ है कि कृषि उपज बढ़ाने के उद्देश्य से वर्तमान में किये जा रहे विभिन्न रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के असंतुलन उपायों से कृषि भूमि के पोषक तत्त्वों में लगाातार कमी होती जा रही है। यदि इस प्रकार रासायनिक उर्वरकों एवं

कीटनाशकों का उपयोग होता रहा तो आगामी 20 वर्षों में सवाई माधोपुर जिलें की कृषि भूमि बंजर हो जायेगी । रासायनिक खादों और कीटनाशकों का दुष्प्रभाव केवल भूमि पर ही नहीं पड़ रहा है। अपितु हमारे शरीर पर भी विभिन्न प्रकार के रोगों के जन्म के रूप में भी दिखाई दे रहा है। इन रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों द्वारा उत्पादित अनाज सब्जियों फल आदि के मानव द्वारा उपयोग करने से कल तक जिन रोगों के बारे में बहुत कम सुना जाता था , आज इन रोगियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है , जिससे ह्रदय रोग , मधुमेह , असमय में बालों का पकना , पेट सम्बन्धी बीमारियाँ आदि मुख्य है।

ये विभिन्न प्रकार की बीमारियों को उत्पन्न करने में सहायक सिद्ध हो रही है। भोपाल में कीटनाशकों के रिसाव की त्रासदी भारतीय कभी नहीं भूल सकेगा । अध्ययन से पता चला है कि इसका प्रभाव दशकों तक कायम रहेगा घास और पेड़–पौधों ने इतनी मात्रा में इस गैस को सोख लिया है कि उनकों खाने वाले पशु भी प्रभावित हो रहे है। अब प्रश्न उठता है कि बढ़ती जनसंख्या के लिए किस प्रकार कृषि उत्पादन बढ़ाया जाये। जापानी कृषि विशेषज्ञ का विचार है कि बिना कीटनाशक और कम कृत्रिम उर्वरकों के प्रयोग से भी उचित सिंचाई आदि की व्यवस्था कर पर्यावरण के अनुकूल कृषि विकास के स्तर को बढ़ाया जा सकता है। इस सम्बंन्ध में केरल का एक अनुभव है कि कुछ वर्ष पहले केरल में धान के खेतों में पर्याप्त मात्रा में मेढ़क देखकर अमेरिकी पर्यटकों ने इसके निर्यात के प्रति उत्साह दिखाया । केरल से इसका निर्यात शुरू हुआ लेकिन जल्दी ही पता चला की धान की फसल के कीड़े बहुत नुकसान पहुँचा रहे है। अतंतः मेंढ़कों के निर्यात को बन्द कर दिया क्योंकि हानिकारक कीड़ों से ये धान की फसल की रक्षा करते है। इन तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि कृषि विकास के स्तर में सुधार पर्यावरणीय दशाओं के अनुकूलन के परिप्रेक्ष्य में ही योजना बद्ध ढ़ंग से किया जाना चाहिए। एक सुविधा के लिए अनेक असुविधाओं को जन्म देना अहितकर प्रमाणित हो सकता है।

कृषि विकास को बनाये रखने व पर्यावरणीय दशाओं को प्रभावित होने से बचाये रखने के लिए निम्न कार्य करने चाहिए

1 रासायनिक उर्वरकों तथा जैवनाशी रसायनों का नियन्त्रित उपयोग करके ऐस कीटनाशी रसायनों का उपयोग करना जिनका मिट्टी में जैविक अपघट लम्ब समय तक रहे सके।

2 मिट्टी की उर्वरता को बनाये रखने के लिए फसलों का हेर–फेर करना , फलीदार फसलों तथा घासों का रोपण करना , खादों के साथ सूक्ष्म पौषक तत्वों को मिट्टी में

मिलाना ताकि मिट्टी की उर्वरता बनी रहे।

3 यदि किसी रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशक औषधियों से पर्यावरणीय दशाऐं

अधिक प्रभावित (प्रदुषित) हो रही है तो उस पर रोक लगे साथ ही साथ स्थानापन्न

कृषि रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों को विकसित किया जाये।

4 आमजन व किसानों को पर्यावरणीय दशाओं पर होने वाले खतर से अवगत कराया

जाये। इसके लिए सरकार को कार्यक्रम व सीमितियाँ अयोजित करनी चाहिए।

सिंचाई का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव

कृषि विकास के स्तर को बढ़ाने के लिए सिंचाई आज एक महत्त्वपूर्ण आवश्यक साधन बन गया है। सिंचाई का प्रयोग कर कृषि विकास के स्तर को तो बढ़ा लिए है लेकिन इसे पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव हो रहा है। सिंचाई के साधनों के विकास के लिए बड़े बाधों के निर्माण तथा जल भण्ड़ारों में अपार जल राशी के संचय के कारण पृथ्वी तल पर कृषि विकास स्तर की लालसा में मानव द्वारा जनित अतिरिक्त कृत्रिम जल भार के परिणाम स्वरूप जल भण्ड़ारों के नीचे स्थित पहले से व्यवस्थित चट्टानों के सन्तुलन में अव्यवस्था हो जाने से असंतुलन हो जाता है। यदि जल भण्ड़ारों के नाचे स्थित चट्टानें पहले से ही अव्यवस्थित है जो उपर स्थित अतिरिक्त जल भार के कारण वे और अधिक अव्यवथित हो जाती है।

इस प्रक्रिया के कारण विभिन्न परिणाम वाले भूकम्पों का आविर्भाव होता है। इस कारण घातक परिणाम वाले भूकम्पों से भूमि , कृषि व्यवस्था , वन व जन–धन की अपार क्षति होती है। विश्व स्तर पर कई प्रमुख भूकम्पीय घटनाओं तथा बांधों , जल भण्ड़ारों में धनात्मक सहसम्बन्ध स्थापित किया गया है। यथा– 1929 में यूनान में निर्मित मरेधान बांध के कारण 1931 में भूकम्प का अविर्भाव , संयुक्त राज्य अमेरिका में कोलोरैड़ो नदी पर 1935 से निर्मित हूवर बांध तथा लोक जल भण्ड़ार के कारण समीपी क्षेत्र में 1936 से भूकम्पनों की शुरूआत , भारत के महाराष्ट्र राज्य के सतारा जिले में कोयना नदी पर 1962 में निर्मित कोयना बांध के कारण दिसम्बर 1967 को प्रलयकारी भूकम्प का आगमन (इसके बाद से आज तक कम्पन के सामान्य झटके आते रहते है) आदि।

जिले में सिंचाई का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव निम्न है–

1 मृदा अपरदन , दलदल , क्षारीयता और लवणीयता आदि रहे है।

2 नलकूपों व टूयूबेवलों की अधिकता से जिले में भूमिगत जल स्तर में गिरावट आ

रही हैं।

कृषि विकास स्तर को बढ़ावा देने के कारण जिले में सिंचाई सुविधाओं का विकास किया जा रहा है। इस के लिए जिले में अनेक तालाबों , चेक डेम , बांधों आदि का निर्माण किये जा रहे है। इसे पर्यावरणीय दशाएं प्रभावित हो रही है। जिले में सन् 1992–93 में सिंचित क्षेत्र 28.94 प्रतिशत था जो बढ़कर सन् 2012–13 में 60. 88 प्रतिशत हो गया है। इससे जिले में भूमिगत जल स्तर में गिरावट आयी है। जहाँ 250 से 300 फीट पर टूयूबेवलों में पानी निकले आता था लेकिन वर्तमान में जिले में सिंचाई सुविधाओं क विकास के कारण 350 से 450 फीट पर पानी निकलने की सम्भावना बढ़ गई है। जिले में दक्षियणी व पूर्वी भाग में भूमिगत जल स्तर में अधिक गिराबट आयी है। उत्तर व उत्तर–पश्चिमी भाग में जल में फ्लोराईड़ की मात्रा अधिक होने से सिंचाई कारण मृदा में क्षारीयता व लवणीय मृदा में 20 वर्षों में 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. राव श्रीवास्तव, (1990) : '' पर्यावरण और पारिस्थितिकीय'', वशुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ट संख्या –440–442।
2. भारतीय मौसम विभाग, देहरादून, रिपोर्ट ।
3. World Bank Development Report,2000.
4. सिंह, काशीनाथ (2003) : ''कृषि भूगोल'', मैट्रोपब्लिशर्स पांडव नगर, दिल्ली ।
5. राव श्रीवास्तव, (1990) : '' पर्यावरण और पारिस्थितिकीय'', वशुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ट संख्या –422–424।

षष्टम्–अध्याय

पर्यावरणीय नियोजन

- पर्यावरणीय प्रबन्धन के सिद्धान्त

- पर्यावरणीय संरक्षण की विधियाँ

  - ऊर्जा संरक्षण
  - वन संरक्षण
  - भूमि संरक्षण
  - जल संरक्षण

पर्यावरणीय नियोजन

नियोजन विकास की प्रकिया होती है। इसके दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं–

1 समाज की चहुमुखी वृद्धि तथा विकास की प्राप्ति

2 सभी प्रकार के प्राकृतिक एवं मानव संसाधनों के विदोहन एवं उपभोग द्वारा सामाजिक आर्थिक विशेषताओं को दूर करना ।

पर्यावरणीय नियोजन का इस प्रकार तात्पर्य होता है कि विकासीय कार्यों के लिए पृथ्वी के नव्य तथा अनव्य संसाधनों का विभिन्न रूपों में उपयोग करना दुर्लभ एवं बहुमूल्य संसाधनों का संरक्षण तथा स्वस्थ जीवन के लिए पर्याववरण की गुणवत्ता का परिक्षण करना ।[1]

उल्लेखनीय है कि सामान्यतया प्रकृति पर्यावरणीय सन्तुलन तथा कृषि विकास स्थिरता को कायम रखने के लिए स्वतः प्रयत्नशील रहती है परन्तु आधुनिक औद्योगिक समाज ने भारी औद्योगिकरण, प्रौद्योगिकीय क्रान्ति परिवहन एवं संचार के साधनों में तीव्र गति से वृद्धि , प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुन्ध लोलुपतापूर्ण दोहन, भूमि उपयोग में भारी वृहत स्तरीय परिवर्तन औधोगिक प्रतिष्ठानों एवं नगरीय क्षेत्रों के अनियमित एवं अनियोजित विस्तार के द्वारा पर्यावरणीय संतुलन तथा कृषि विकास स्थिरता को विक्षुब्ध तथा अव्यवस्थित कर दिया है। दूसरे शब्दों में आर्थिक एवं प्रौधोगिकीय मनुष्य के क्रियाकलापों ने पर्यावरण एवं मानव के बीच मधुर सम्बन्धों को विशाक्त कर दिया है।

पर्यावरणीय नियोजन इस प्रकार कृषि विकास एवं पर्यावरण के बीच सम्बन्धों को सुधारने की प्रकिया है ताकि पर्यावरण एवं कृषि विकास स्तर दोनों की गुणवत्ता में सुधार हो सके। पर्यावरण एवं कृषि विकास के मध्य स्वस्थ एवं मधुर सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों की स्थापन मनुष्य के विध्वंसक क्रिया कलापों पर रोक लगाकर तथा प्रकृति के परिक्षण, संरक्षण, नियमन एवं पुनर्जन द्वारा की जा सकती है।

इस प्रकार पर्यावरण प्रबन्धन मनुष्य के साथ यथोचित समायोजन से सम्बन्धित है। जिसके अन्तर्गत पर्यावरणीय सन्तुलन तथा पर्यावरणीय स्थिरता को अव्यवस्थित किये बिना प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण दोहन एवं उपयोग किया जाना चाहिए । ज्ञातव्य है कि चूँकि सामाजिक आर्थिक दृष्टि से समाज का विकास एवं संवर्द्धन आवश्यक है अतः प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन एव उपयोग करना भी जरूरी हो जाता है। यह भी स्भाविक है कि जब प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन किया जायेगा

तो कुछ पर्यावरणीय समस्याये अवश्य उत्पन्न होगी क्योंकि प्राकृतिक पर्यावरण के कतिपय संघटकों में बिना किसी क्षति के प्राकृतिक संसाधनों का सार्थक विदोहन तथा सामाजिक आर्थिक विकास सम्भव नहीं है। [2]

पर्यावरणीय नियोजन एवं प्रबन्धन इस प्रकार पर्यावरणीय संतुलन तथा पारिस्थितिक स्थिरता और मनुष्य की आर्थिक व भौतिक प्रगति के बीच एक तरह का समझोता हैं। अतः इसके अर्न्तगत पर्यावरणीय द्विान्तों एवं समाज की आवश्यकाओं पर भरपूर ध्यान देना चाहिए । इस तरह पर्यावरण प्रबन्धन के अन्तर्गत एक तरफ तो समाज के सामाजिक आर्थिक विकास पर ध्यान दिया जाता है तो दुसरी और पर्यावरण की गुणवत्ता के परिक्षण एवं संरक्षण के लिए भरपूर प्रयास किया जाता है। ज्ञातव्य है कि पर्यावरण की गुणवत्ता को परिभाषित करना भी कठीन कार्य है। क्योंकि यह एक व्यक्तिनिष्ट शब्दावली है। समाज के विभिन्न वर्गो के लोग इसका विभिन्न अर्थ लगाते हैं। पर्यावरण प्रबन्धन के अन्तर्गत निम्न को सम्मिलित किया जाता है–

1 प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुध एवं लोलुपतापूर्ण विदोहन तथा मनुष्य के अविवेक पूर्ण क्रिया–कलापों पर रोक एवं नियन्त्रण द्वारा पर्यावरण की रक्षा करना प्रदुषण स्तर पर एवं उसे कम करना, मानव जनसंख्या की तीव्र वृद्धि पर नियन्त्रण तथा हानिकारक प्रौधोगिक पर रोक लगाना।

2 पर्यावरण एवं उसके संसाधनों के आर्थिक महत्त्व को बढ़ाना

3 एवं भावी पीढ़ी के लिए पर्यावरण का परिक्षण करना ।

संसाधनों का संरक्षण तथा प्रदुषण का नियन्त्रण पर्यावरण नियोजन की आवश्यकपूर्ण दशाऐं है। संरक्षण का अर्थ विकासीय कार्यो का स्तगन नहीं होता है वरन् उपयुक्त प्रौधोगिकी के उपयोग के द्वारा सुलभ संसाधनों के मूल्यों को बढ़ाना ताकि वृद्धि एवं विकास की प्रकिया को तेज करना होता है। वास्तव में संरक्षण तथा विकास एक ही सिक्के के दो पहलु है और इस तरह ये एक दुसरे के पूरक होते हैं। वास्तविक अर्थ में कोई वृद्धि तब तक नहीं प्राप्त की जा सकती जब तक समुचित प्रौद्योगिकी द्वारा संसाधन के छोटे से छोटे अंश से अधिकतम प्राप्ति न हो जाये, प्राकृतिक संसाधनों का अपव्यय तथा अल्पता न होने पर तथा संसाधनों के पुर्नचक्रण के उपाय नहीं कर लिए जाये ताकि पर्यावरणीय तन्त्र पर न्यूनतम भार पड़ सके । संक्षेप में यह व्यक्त किया जा सकता है कि पर्यावरण प्रबन्धन के दो प्रमुख पक्ष होते है–

1 सामाजिक आर्थिक विकास तथा

2 सामान्य रूप में जीवमण्डल की स्थिरता और विशेष तौर पर एकाकी परिस्थितिक तन्त्रों का अस्तितव एवं स्थिरता।

पर्यावरणीय नियोजन एवं प्रबन्धन के दो प्रमुख उपागम है–

1 परिक्षणात्मक उपागम

2 संरक्षणात्मक उपागम

पर्यावरणीय नियोजन एवं प्रबन्धन का परिक्षणात्मक उपागम मनुष्य के प्रकृति के साथ छेड़–छाड़ न करने पर तथा प्राकृतिक पर्यावरण के साथ पूर्ण समायोजन पर जोर देता है। वास्तव में यह उपागम व्यवहार्य नहीं हैं क्योंकि यदि प्राकृतिक पर्यावरण के साथ छेड़–छाड़ न की जायेगी तो मानव समाज भूखा रह जायेगा तथा विकास के सारे दरवाजे बन्द हो जायेगें। यदि मनुष्य को जिन्दा रखना है तो उसे प्रकृति से कुछ न कुछ तो लेना पड़ेगा।

पर्यावरणीय नियोजन के संरक्षणात्मक उपगम के अन्तर्गत प्रौद्योगिक के सन्दर्भ में भौतिक जैविक पर्यावरण के साथ समायोजन तथा व्यवहारिक संस्थागत समायोजन पर अधिक जोर दिया जाता है। अर्थात मानव समाज के सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन तथा उपयोग अपव्य होना चाहिए परन्तु जहाँ तक सम्भव हो सके पर्यावरण की गुणवत्ता पर्यावरणीय संतुलन तथा पारिस्थितिकी स्थिरता को बनाये रखने के लिए भरपूर प्रयास किया जाना चाहिए। इस कार्य हेतु समुचित प्रदुषण मुक्त प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए तथा प्राकृतिक पारिस्थितिकी तन्त्र में किसी प्रकार की अव्यवस्था के लिए सम्बन्धित समाज को उत्तरदायि माना जाना चाहिए। इस तरह संरक्षणात्मक उपागम के दो प्रमुख आधार है–

1 प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन एवं उपभोग के समय मनुष्य के कार्यों द्वारा पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों को कम करना तथा

2 पर्यावरण की दृष्टि से समुचि तथा प्रदुषण रहित प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा प्राकृतिक पर्यावरणीय पारिस्थितिक तन्त्रों की उत्पादकता को अधिकतम करना । इस उपागम के अन्तर्गत पर्यावरणीय नियोजन के लिए कई वैकल्पिक रणनीतियाँ तैयार की जाती है। [3]

पर्यावरणीय प्रबन्धन के सिद्धान्त

पर्यावरणीय प्रबन्धन मानव और पर्यावरण के बीच सम्बन्धों को सुधारने की प्रक्रिया हैं। जिसका उद्देश्य मानवीय क्रियाकलापों का नियमन करना है कि ताकि पर्यावरण के तत्वों की नैसर्गिक गुणवत्ता बनी रहे।

मानव सभ्यता की प्रगति तथा प्रत्येक मनुष्य के लिए संतोष जनक जीवन स्तर पर्यावरण के अंधा–धुंध शोषण पर अधिक दिन तक नहीं टिक सकता। वस्तुतः प्राकृतिक संसाधन पूँजी के समान है जिसका सुनियोजित ढंग से समुचित लाभ के कार्यों में विनियोग होना चाहिए। संरक्षण संसाधन का अनुत्पादक संचय नहीं वरन् सतत् उत्पान के लिए विवके पूर्ण उपयोग है। इस दृष्टि से पर्यावरण प्रबन्धन के निम्न निदेशक सिद्धान्तों का अनुपालन हैं–

1 पर्यावरण प्रबन्धन (संरक्षण) का सर्वप्रथम सिद्धान्त है– पारिस्थतिक तन्त्र को एक इकाई मानते हुए इनके तत्त्वों के पारस्परिक अन्तर्सम्बन्धों को अक्षुण बनाय रखना। किसी एक तत्व का हास्य करने या विनिष्ट करने का प्रभाव पर्यावरण तन्त्र पर पड़ता है। जैसे कहीं वन को काटकर साफ कर दिया जाये तो मिट्टी का अपरदन भी बढ़ जायेगा एवं जल के प्रवाह में अनियमिता आ जायेगी इसका प्रभाव कृषि विकास स्तर एवं सम्पूर्ण पर्यावरणीय तन्त्र कुप्रभावित होगा। अतएव किसी भी एक तत्त्व या संसाधन का उपयोग करते समय सम्पूर्ण पर्यावरणीय तन्त्र पर पड़ने वाले प्रभाव का भी ध्यान रखना चाहिए।

2 विधमान आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तत्कालिन कम आर्थिक लाभ वाले अथवा अनुपोगी समझे जाने वाले संसाधनों को विनिष्ट नहीं करना चाहिए। जैसे लिग्नाइट कोयले को पहले अनुपयोगी माना जाता था। परन्तु ऐस निम्न कोटि का कोयला भी विधुत उत्पादन का महत्वपूर्ण स्त्रोत बन गया है।

3 जहाँ तक सम्भव हो सीमित एवं संचित संसाधनों के स्थान पर ऐसे संसाधनों का उपयोग करना चाहिए जो सतत् एवं नव्यकरणीय हो। कोयला व पेट्रोल जैसे स्त्रोतों के स्थान पर जल विद्युत, सौर ऊर्जा, बॉयों मास, बॉयों गैस जैसी ऊर्जा का उपयोग श्रेयस्कर है।

4 जिन तत्वों को परिवर्धित या पुर्नचकृित किया जा सकता है उनको बढ़ाने का प्रयत्न होना चाहिए। जैसे मिट्टी में उचित फसल चक्र अपनाकर तथा उर्वरक पूर्ति करके उससे अधिक समय तक अधिक उत्पादन लिया जा सकता है।

5 अधिक आवश्यक परन्तु सीमित मात्रा में पाये जाने वाले पदार्थों के विकल्प ढुड़ने के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान करने का सतत् प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के लिए घरेलु ईधन के लिए कम लकड़ी का उपयोग अथवा उसके स्थान पर बॉयो गैस का उपयोग करने हेतु उपर्युक्त चुल्हें या संयन्त्रों के निर्माण की चेष्टा करना श्रेयस्कर है।

6 किसी भी क्षेत्रीय इकाई जैसे–देश, राज्य, विकास खण्ड़ में संसाधनों का पूर्ण लेखा–जोखा निरन्तर करते रहना चाहिए। इस प्रकार वातावरण के किन तत्त्वों का हास्य हो रहा है इस पर सदैव नजर रखनी चाहिए। ऐसा नहीं करने से किसी संसाधन का दोहन क्रान्तिक सीमा से अधिक हो सकता है अथवा पर्यावरणीय तन्त्र के किसी अंग को अपूरणीय क्षति हो सकती है। समय रहते यदि अत्याधिक दोहन क्षति को रोका न जाये तो सम्पूर्ण पर्यावरणीय तन्त्र में अस्थिरता उत्पन्न हो सकती हैं जैसे किसी क्षेत्र में वनों एवं वृक्षों की बेरोक–टोक कटाई अथवा मिट्टी में निर्वाध अपरदन या भूमिगत जल के असीमित निष्कर्षण से दूरगामी कुपरिणाम होने की सम्भावना रहती है।

7 विभिन्न संसाधन समष्टि का सन्तुलित एवं बहुउदेशीय उपयोग होना चाहिए। उदाहरण के लिए किसी क्षेत्र का भूमि उपयोग सन्तुलित होना चाहिए। भूमि से उस जलवायु में उत्पन्न हो सकने वाली विविध फसलों को उगाने का प्रयास करना चाहिए न कि एक व्यापारिक फसल पर ही सर्वाधिक ध्यान देना चाहिए।

8 पर्यावरणीय तन्त्र के जिन तत्त्वों का अत्याधिक शोषण हो गया हो उनके पुर्नस्थापन पर विशेष ध्यान देना श्रेस्कर है। यदि किसी क्षेत्र में मिट्टी अपरदन अधिक हो रहा है या हो गया है। जैसे–भारत के अर्द्ध शुष्क पठारी क्षेत्रों अथवा हिमालय क्षेत्र में हुआ है तो इस अपरदन को रोकने पर तत्काल ध्यान देना तथा ठोस कदम उठाना चाहिए।

किसी मरीज की भाँति यदि समस्या को बिगड़ी हालत में समालने की चेष्टा की जाये तो पर्यावरणीय तन्त्र को सन्तुलित होने से बचाना असम्भव हो सकता है तथा अपूरणीय क्षति हो सकती है।

9 पर्यावरणीय संरक्षण में सम्बन्धित क्षेत्र के सभी की सहभागिता आवश्यक है। पर्यावरण हास्य सिर्फ बड़े पैमाने पर किये जाने वाले आर्थिक क्रिया कलाप से नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अज्ञानता अपने अविवेक पूर्ण अथवा स्वार्थ परक कार्य से पर्यावरण हास्य का कारक बनता है। उदाहरण के लिए वनों का हास्य सिर्फ ठेकदारों द्वारा करने से ही नहीं वरन् प्रत्येक व्यक्ति द्वारा ईधन की लकड़ी जुटाने अथवा पशुओं द्वारा नये पौधों चारा हेतु पत्तियों को तोड़ने अथवा खुले चरने वाले पशुओं द्वारा नये पौधें को कुचलने से होता है। परन्तु वनों के हास्य से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं से सभी लोग समान रूप से प्रभावित होते हैं। अतएव पर्यावरणीय प्रबन्धन के प्रति जन

सामान्य में जागरूकता उत्पन्न की जानी चाहिए। साथ ही यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पर्यावरणीय संरक्षण के कारण होने वाली तात्कालिक कठनाईयों का कुल भार समाज के किसी वर्ग विशेष पर न पड़े। उसी प्रकार पर्यावरणीय संतुलन से प्राप्त होने वाले ठोस लाभ से भी समान रूप से लाभान्वित होना चाहिए ।

10 पर्यावरण के विभिन्न तत्त्वों के अत्याधिक मात्रा में संसाधन दोहन से हास्य या सक्रियता में कमी से बचने के विभिन्न पदार्थों का अधिकाधिक पुर्नचक्रण करना जैसे जल का पुर्नचक्राण करके इनमें क्रमशः पेयजल, सिंचाई कारखानों में मशीन ठण्ड़ करने आदि कई उपयोगों में लाया जा सकता है। कागज लोहे के करतन, टीन व प्लास्टिक के डिब्बें आदि का एक बार उपयोग के पश्चात् फेंक देने की बजाय बार–बार उपयोगी वस्तुओं के निर्माण हेतु कच्ची सामग्री के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार पुर्नचक्रण से सम्बन्धित खनिज अथवा वन संसाधनों का कम दोहन करके भी बढ़ती मांग की आपूर्ति की जा सकती है। उसी प्रकार मिट्टी में फसल उत्पादन क्षमता बनाये रखने के लिए फसलों के ड़ंठल, कूड़ा करकट आदि जैविक पदार्थों का पुनः मिट्टी में सड़ना–गलना लाभ दायक होता है। इस जैव पदार्थों का मिट्टी में पुर्नचक्रण द्वारा जैव भू–रासायनिक चक्रों की सक्रियता एवं क्षमता बढ़ायी जा सकती है। जिससे संसाधनों में अभिवृद्धि होती है।

11 भारतीय पर्यावरणीय नीति को भी बढ़ते कृषि विकास व जनसंख्या ने पूर्णतः विफल कर दिया है। भारतीयों में पर्यावरण संरक्षण का मुद्दा महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है , इस हेतु कालान्तर में 42वां संशोधन कर राज्य के नीति निर्देशक तत्त्वों में अनुच्छेद 48 'अ' का प्रवधान रखा गया है कि ''राज्य देश के प्राकृतिक पर्यावरण , वन ,वन्य जीवों की सुरक्षा तथा विकास के उपाय करेगा ''। संविधान के मौलिक कर्तव्य के तटस्थ अनुच्छेद 51 अ (जी) में उल्लेख है कि वनों, झीलों, नदियों एवं अन्य वन्य जीवों की सुरक्षा व विकास सभी जीवों के प्रति सहानुभूति रखना परिपेक्ष्य में वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण व नियोजन के सन्दर्भ में अत्याधिक चेतना प्रदर्षित होती है।

12 प्रत्येक वर्ष पूर विश्व में अन्तराष्ट्रीय पर्यावरण दिवस के रूप में 5 जनू को मनाया जाता है।

पर्यावरणीय संरक्षण की विधियाँ

उपरोक्त निदेशक सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु उसके क्षेत्र विशेष के प्राकृतिक, जैविक पर्यावरण में सुलभता तथा पर्यावरणीय तन्त्र की सक्रियता में भूमिका के अनुरूप विशिष्ट संरक्षण विधियों को

अपनाने की आवश्यता होती है। पर्यावरणीय तन्त्र में ऊर्जा, वन, जल तथा मिट्टी का विशेष महत्त्व है। इससे सम्बन्धित सामान्य संरक्षण विधियाँ निम्न है–

ऊर्जा संरक्षण

ऊर्जा प्रवाह पर्यावरणीय तंत्र का मूलाधार है। ऊर्जा प्रवाह से भोजन श्रंखला संचालित होती है। जिसके द्वारा विभिन्न प्रकार के प्राणी परस्पर आबद्ध होते हैं। मनुष्य ने ऊर्जा पर नियन्त्रण कर के ही प्राविधिकी का विकास किया है। प्राविधिकी के सहारे मनुष्य प्राकृतिक, जैविक पर्यावरण से विभिन्न प्रकार के संसाधन प्राप्त होते है। यहीं संसाधन आधुनिक उपयोग परक संस्कृति की नींव है। इस प्रक्रिया में मनुष्य स्वाभाविक रूप से प्राप्त सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल ऊर्जा के अतिरिक्त करोड़ों वर्षों से संचित पुरा जैव ऊर्जा पर अधिकाधिक निर्भर हुआ है। इसी ऊर्जा से सौर ऊर्जा की पूर्ति करता है। परन्तु इस प्रक्रिया में वायु प्रदुषण एवं जल प्रदुषण की समस्याएं प्रकट हुई है जो दिनों–दिन विकट होती जा रही है। अतः यह वृहत पर्यावरणीय तन्त्र को सक्रिय बनाये रखते है तथा ऊर्जा संकट से बचने के लिए ऊर्जा संरक्षण की आवश्यकता है। ऊर्जा संरक्षण की निम्न विधियाँ है–

1 वैकल्पिक ऊर्जा का उपयोग

पुरा–जैव ईधन, अर्थात कोयला, पेट्रोल जो संचित मात्रा में उपलब्ध है के स्थान पर यथासम्भव ऊर्जा का उपयोग करना पर्यावरण प्रबन्धन की दृष्टि से श्रेष्कर है। ये वैकल्पिक स्त्रोत सतत् नव्यकरणीय हो सकते हैं। जिनसे निरन्तर ऊर्जा प्राप्त हो सकती है। इनमें प्राप्त ऊर्जा न सिर्फ पुराजैव स्त्रोतों पर निर्भरता कम करेगी वरन् इससे प्रदुषण की समस्या भी कम होगी। फलस्वरूप पर्यावरणीय तन्त्र की सक्रियता में कोई व्यवधान नहीं आयेगा। साथ ही पुरा जैव ईधनों को खोजने, निकालने , ढोने, साफ करने से होने वाले व्यय एवं क्षय तथा प्रदुषण भी कम होगा । नव्यकरणीय स्त्रोतों से प्राप्त ऊर्जा जैसे–जल विद्युत अथवा बॉयो गैस या पवन ऊर्जा के परिवहन एवं पोषण में किसी प्रकार का भरी मात्रा में ऊर्जा क्षय एवं अनावश्यक व्यय नहीं हो पाता हैं।

2 अपशिष्टिकरण में कमी

पुरा–जैव स्त्रोतों से ऊर्जा प्राप्त करके भारी मात्रा में अपशिष्ट पदार्थ निकलते हैं। जैसे–कोयला खोदने में कोयल के साथ भारी मात्रा में अन्य बेकार चट्टानों आदि खोद ली जाती है। इनके धरातल पर ढ़ेर जमा हो जाने से कई प्रकार की समस्याऐं उत्पन्न होती हैं। इस मलव का निस्तारण कठिन होता है। इससे विभिन्न प्रकार के अवांछित पदार्थ एवं गैस वर्षा के साथ जल में घुल जाती है। जिससे जल प्रदुषण बढ़ता है।

मलवा का ढ़ेर जमा होते जाने से उपयोगी उपजाऊ भूमि भी बैकार हो जाती है। किसी भी प्रकार का अपशिष्ट पदार्थ पर्यावरण के लिए अनेक समस्या पैदा करता है। अतएव पुरा जैव तत्त्वों का निष्कर्षण भण्ड़ारण एवं परिवहन इस विधि से होना चाहिए की उसमें अपशिष्टिकरण न होने पाये।

3 गुणात्मक समुन्नति

प्रायः जहाँ निम्नकोटि के कोयला या पेट्रोल स्त्रोत मिलते हैं उन्हें आर्थिक दृष्टि से अनुपयोगी मानकर छोड़ दिया जाता है। ऐसे ऊर्जा स्त्रोतों को समुन्त करके उपयोगी बनाया जा सकता है। उदाहरण के लिए घटीया किस्म के भूरे कोयले से विधुत उत्पादन करके विधुत का पोषण किया जा सकता है।

4 विवेकपूर्ण उपयोग

जो संचित ऊर्जा स्त्रोत सीमित मात्रा में है उनका उपयोग उन्हीं कार्यों में होना चाहिए जहाँ अन्य विकल्प उपल्बध न हो। उदाहरर्णाथ भारत में पेट्रोल का अभाव है। अतएव पेट्रोल का उपयोग उन्हीं कार्यों के लिए होना चाहिए जो अति आवश्यक हो । परन्तु अपने देश में पेट्रोल का उपयोग विभिन्न प्रकार की मशीनें चलाने, घरों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों एवं कारखानों में जेनरटरों , द्वारा विद्युत उत्पादन करते है। यदि जल विद्युत, बॉयो गैस आदि का इस्तेमाल प्रकाश एवं घरेलु ईधन के लिए किये जाए तो पेट्रोल की खपत कम की जा सकती है। उसी प्रकार यदि मोटर गाड़ियों का सीमित उपयोग सिर्फ अपरिहार्य दशाओं में ही किया जाए तो पेट्रोल की खपत बहुत कम होगी। अपने देश में सरकारी गाड़ियों में पेट्रोल का बहुत अपव्यय होता है।

5 क्षेत्रीय ऊर्जा विकास एवं उपयोग प्रतिरूप

किसी भी ऐसे देश में जहाँ प्राकृतिक, आर्थिक व क्षेत्रीय विभिन्नता पाई जाती है, सर्वत्र एक ही ऊर्जा उपयोग तर्क संगत नहीं है। पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ जल विद्युत उत्पादन के अच्छे अवसर है परन्तु परा–जैव ईधन का अभाव है। जल विद्युत का अधिक विकास एवं उपयोग होना चाहिए । इसके विपरीत मैदानी क्षेत्रों में जहाँ कृषि गत अपशिष्ट पदार्थों एवं गोबर की अधिकता है वहाँ बॉयो गैस पर अधिक निर्भरता होनी चाहिए। समुद्रतटीय क्षेत्रों में जहाँ वायु प्रायः वेग से चलती है, अथवा समुद्रटीय लहरों एवं ज्वार से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है, पुरा–जैव स्त्रोतों से प्राप्त ऊर्जा

सिर्फ बड़े कारखानों या उपभोगता तक ही सीमित होनी चाहिए। वास्तव में ऊर्जा उत्पादन उपभोग प्रतिरूप ऊर्जा उत्पादन की क्षेत्रीय दशाओं, सम्भावनाओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए। सर्वत्र ऐसा सतत् प्रयास होना चाहिए कि पुरा–जैव स्त्रातों पर क्रमशः निर्भरता कम होती जाए तथा स्थानीय उपलब्ध सतत् नवयकरणीय स्त्रोतों का अधिकाधिक उपयोग हो।

वन संरक्षण

पर्यावरणीय नियोजन सुचारू संचालन में वनों की विशिष्ट भूमिका हैं क्योंकि वन विविध प्रकार की वनस्पतियों एवं प्राणियों के आधार है। इन्हीं वनस्पतियों एवं जन्तुओं के माध्यम से भोजन श्रंखला अग्रसर होती है तथा जैव भू–रासायनिक चक्रों की आवृति होती है। आश्चर्य नहीं की वनों के समाप्त होने से अनेक पर्यावरणीय समस्यायें उत्पन्न होती है, जिसका व्यापक दूरगामी दुष्परिणाम होता है। अतः वन संरक्षण अनिवार्य है। वन संरक्षण की निम्न विधियों को अपनाना आवश्यक है–

1 वन संरक्षण का सबसे पहला एवं महत्त्वपूर्ण कदम विधमान वनों की सुरक्षा है–

वनों को सर्वाधिक खतरा आग लगने से होता है। आग प्रायः मनष्यों द्वारा असावधानी से फेंके गये बिड़ी, सिगरट, चिनगारी एवं विद्युत की हाई वोल्टेज तार लाइनों से लगती है। विशेषकर शुष्क मौसम में वनों में आग लगने की विशेष सम्भावना होती है। अतः वनों में आग लगने तथा फेलने से बचाने के लिए विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। वनों के अन्दर ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए। जिससे आग लगने का खतरा उत्पन्न हो, साथ ही ऐसी व्यवस्था रहनी चाहिए जिससे लगी आग पर शीध्र ही नियन्त्रण पाया जा सके। इसके लिए

(अ) वनों के बीच स्थान–स्थान पर निरीक्षक ग्रह होने चाहिए जहाँ अग्निशमक उपकरण एवं उपादान की व्यवस्था तथा चौकीदारों की तैनाती रहे। ऐसे निरीक्षण ग्रहों के बीच परस्पर संचार के माध्यम उपलब्ध होने चाहिए। जब वन सूखे हो उस समय अधिक देख–रेख की आवश्यकता होती है।

(ब) वनों में बीच–बीच में अग्नि रक्षा पथ, अग्नि अवरोधक पथ बनाये जाने चाहिए। ये क्रमशः वन की परिधि एवं वन के बीच–बीच में वनस्पति मुक्त गलियारे होते हैं। ऐसे गलियारों को सूखी घासों एवं पत्तियों से मुक्त रखना आवश्यक है। ऐसी दशा में वन के किसी भाग में आग लगने पर उसे सीमित रखने में आसानी होती है।

2 वनों की सबसे बडी समस्या अत्याधिक अविवेक पूर्ण वृक्ष कटाव है। इस कटाव का कारण आर्थिक लाभ अतः वन संरक्षण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कदम चयनात्मक कटाई तथा संघृत उत्पादन विधि को अपनाना है। जिले में वन का प्रतिशत 15.08 प्रतिशत

हैं। सन्तुलित पर्यावाण के लिए 33 प्रतिशत का होना बहुत जरूरी है। जिले में अधिकतम प्रतिशत दक्षिण–पूर्वी भाग में जहाँ 40 से 60 प्रतिशत वनों के अन्तर्गत है। जिले के उत्तरी–पूर्वी व उत्तरी तथा पश्चिमी भाग में सबसे कम वन क्षेत्र जो 10 प्रतिशत से भी कम पाया जाता है। इसका प्रमुख कारण यहाँ भूमि को कृषि कार्यों व अन्य क्षेत्रों में उपयोग में लेना है। जबकि अच्छे पर्यावरण के लिए वनों का होना बहुत जरूरी है। सरकार के द्वारा वनों का कटाव रोकना अति आवश्यक है। इसके लिए साधन रहित निर्धन लोगों को रोजगार के वैकल्पिक साधन उपलब्ध कराना अति आवश्यक है।

3 वनों के विकास में दीर्धकालिन नीति के रूप में वन क्षेत्र में स्थानीय स्थिति में प्राकृतिक रूप से उगने वाली वनस्पतियों को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए। पर्यावरणीय नियोजन में विविधता पूर्ण वनों को एकरूपतापूर्ण वनों से अधिक प्राथमिकता मिलनी चाहिए। क्षेत्र में वनों का प्रतिशत बहुत कम है। अतः उसको बढ़ाने के लिए सरकार को स्थानिय निवासियों के सहयोग से अधिक वृक्षारोपण करके अधिक करना चाहिए।

4 यथा सम्भव वन क्षेत्र के निकट वायु प्रदुषण उत्पन्न करने वाली गैसे विशेषकर सल्फर डॉइक्लोराइड़, नाइट्रोजन एवं ऑक्साइड़ छोड़ने वाले कारखाने नहीं स्थापित किये जाने चाहिए। इनसे निकले अम्लीय तत्त्वों से वृक्ष रोग ग्रस्त हो जाते है।

5 प्राकृतिक वनस्पति को सर्वाधिक क्षति समीपस्थ ग्रामवासियों द्वारा खुले पशु चराने, चारा के लिए पेड़ों की ड़ालों को काटने अथवा पत्तियाँ तोड़ने एवं ईधन के लिए स्वस्थ वृक्षों को काटने से होती है। इस प्रकार की क्षति से बचने के लिए सामाजिक वानिकी को प्रोत्साहित करना श्रेयस्कर है। सामाजिक वानिकि में गाँव की परती भूमि, सड़कों एवं मार्गों के किनारे की परती भूमि तथा ऐसी अन्य सार्वजनिक बंजर भूमि पर ऐसे वृक्ष लगाने चाहिए जिनसे पशुओं को चारा तथा ईधन की लकड़ी सुलभ हो सके। इससे ग्रामवासियों द्वारा संरक्षित वनों में प्रवेश करके वनों को क्षतिग्रस्त करने की समस्या हल होती है। यह एक वैकल्पिक व्यवस्था है। जिससे वन संरक्षण होता है।

6 वनों का अर्थ बड़े वृक्षों वाला क्षेत्र नहीं होता है। ऐसे क्षेत्र जो प्राकृतिक रूप से उगी घास झाड़ियों एवं वृक्षों से आच्छादित हो वन है। प्रमुख बात यह है कि उसमें विविधता पायी जाये। कोई भी ऐसा कदम जो ऐसे वनों को सुरक्षा प्रदान करे उसमें पशु चारण अथवा मनुष्य द्वारा अनावश्यक छेड़–छाड़ को रोक कर तथा उनकी जैविक विविधता एवं प्राकृतिक उत्पादकता में वृद्धि कर उन संरक्षण की दृष्टि से उपादेय होगा।

संक्षेप में वन संरक्षण के लिए एक ऐसी लोचपूर्ण नीति अपनाने की आवश्यकता होती हैं जो स्थानीय दशाओं के अनुरूप उपयुक्त विधियों का ऐसा सम्मिश्रण प्रस्तुत

कर जिससे वनाच्छादित क्षेत्रों के संकुचन वन में जैविक विविधता का ह्रास्य तथा उनकी प्राकृतिक उत्पादकता में कमी पर अंकुश लगाने में समर्थ हो।

भूमि संरक्षण

भूमि से दीर्घकालीक दृष्टिगोचर से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए संरक्षण अनिवार्य है। भूमि संरक्षण का उद्देश्य भूमि को अपने स्थान पर कायम रखना, भूमि की उर्वरता तथा अन्य तत्त्वों की अभिवृद्धि करना अथवा कम से कम अपेक्षित मात्रा एवं अनुपात में बनाये रखना तथा दीर्घकाल तक उत्पादन करते रहने के लिए इसकी उत्पादन क्षमता में वृद्धि करना हैं।

भूमि संरक्षण के लिए सर्वाधिक आवश्यक कदम भूमि का उपयोग करने वालों में यह जागरूकता लाना है कि भूमि को अपने पर कायम रख जा सकता है तथा इसकी उर्वरता एवं उत्पादन क्षमा में वृद्धि कर सम्भव है। भूमि संरक्षण की विधियाँ तथा उपाय भूमि की पारिस्थितिकी स्थिति तथा समय के अनुसार अलग अलग होते है। पारिस्थितिकी का तात्पर्य जलवायु वनस्पति धरातल आदि सभी तत्त्वों की विशेषताएं है जिनका भूमि पर प्रभाव पता है। इसके अर्न्तगत प्रचालित भूमि उपयोग पद्धति तथा परम्परायें सम्मिलित है। भूमि संरक्षण की विधि ऐसी होनी चाहिए जो इन सभी पारिस्थितियों में उपयोगी हो सके।

भूमि की उर्वरता का ह्रास रोकने की दिशा में सबसे पहला कदम भूमि उपयोग नियोजन है जिसका मूल तत्त्व, भूमि की उपयोग तथा भूमि की उपयोग तथा भूमि की उत्पादन शक्ति में सामंजस्य करना है। इसके अर्न्तगत भूमि के विभिन्न आवश्यक उपयोगी जैसे वन, कृषि, अन्य उपयोग आदि में समुचित आवंटन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। भूमि उपयोग नियोजन के अर्न्तगत भूमि की क्षमता के अनुसार उचित फसलों का चुनाव हो जाने के पश्चात समुचित भूस्वामित्व बनाये रहना, भूमि की उर्वरा शक्ति तथा इसके आवश्यक तत्त्वों की सापेक्षित मात्रा को संतुलित रखना तथा उनकी अभिवृद्धि करना भी शामिल है। भूमि के अनुचित उपयोग से मिट्टी में तीन विकार उत्पन्न होते है।

1. भौतिक 2 रासायनिक एवं 3 जैविक

यद्यपि तीनों परस्पर सम्बन्धित समस्यायें उत्पन्न करते हैं, तथापि इनमें प्रथम का संरक्षण के दृष्टि्कोण से अधिक महत्त्व है क्योंकि इसके द्वारा अन्य दो भी नियन्त्रित होते है। भौतिक विकार का तात्पर्य भूमि मे एक या अन्य तत्त्वों की कमी अथवा मिट्टी का कटाव है।

मिट्टी के तत्त्वों के असंतुलन को उस तत्त्व विशेष नाइट्रोजन, पोटेशियम, फास्फोरस, कैलशियम, जैव पदार्थ आदि की बाहर से उर्वरकों एवं खाद द्वारा आपूर्पि

करके दूर किया जा सकता है। ऐसा करने से भूमि के कटाव की प्रवृति भी कम हो जाएगी। मिट्टी का कटाव रोकने के लिए भूमि का गलत उपयोग बन्द करना तथा भूमि का कटाव अधिक हो गया हो तो मिट्टी को अपने स्थान पर बनाये रखने के लिए उपाय करना चाहिए । पृष्ट प्रवाह रोकने के लिए भूमि पर आवरण आच्छादन के लिए पत्तियाँ, घास , आदि ड़ालना अनिवार्य होता है जिसमें वर्षा की बूँन्दों से मिट्टी की पपड़ी न उखड़ सके । कभी–कभी ऐसी मिट्टी में कुछ समय के लिए फसल उत्पादन बन्द करना भी आवश्यक हो जाता है। अल्प सरित प्रवाह द्वारा हुए कटाव को रोने के लिए अनुप्रस्थ जुताई अर्थात् समोच्च जुताई सर्वाधिक सफल होती है। इसमें भूमि की ढ़ाल कई भागों में बटती है तथा ढ़ाल प्रवणता भंग हो जाती है। चूँकि अल्प सरित कटाव पानी के ढ़ाल की ओर तिव्र गति से बहने से होता है तथा समोच्च जुताई से इस प्रकार पानी के बहाव में रूकवटें पैदा होती है, इसलिए पानी की कटाव शक्ति कम हो जाती हैं समोच्च रेखाओं के अनुसार जुताई करने के बाद समोच्च फसल पद्धति से भी इस प्रकार की फसलें समानान्तर समोच्च पट्टियों में लगाई जाती है। इनमें कुछ घनी उगने वाली फसलों एवं कुछ कतार में उगने वाली फसलों की पट्टियाँ प्रकारान्तर से लगायी जाती है। घनी उगने वाली फसलों से कटकर आने वाली मिट्टी रूक जाती है। सीढ़ीदार खेत बनाकर तथा पार्श्व जलप्रवाह की व्यवस्था करके भी अल्पसरित कटाव रोका जा सकता है।

अवनालिका प्रवाह रोकने के लिए प्रत्येक 'वी' आकार अथवा 'यू' आकार की खाइयों मे स्थान–स्थान पर बाँध बनाने की आवश्यकता पड़ती है। तीखे ढ़ालों पर ये बाँध थोड़ी–थोड़ी दूरी पर तथा समढ़ालों पर अपेक्षाकृत दूर–दूर बनाये जाते हैं। बाँधों के कारण ऊपर से बहकर आती हुई मिट्टी भरने लगती है तथा कालक्रम में खाई पट जाती है। इसके पश्चात लतायें, घास, झाड़ियों तथा पेड़ों को लगाने से भी कटाव रूक जाता है जहाँ ऐसा कटाव बहुत अधिक हो गया है, भारी मशीन द्वारा भूमि को समतल करके उसमें वनस्पति लगाना ही लाभदायक होगा।

मिट्टी के रासायनिक एवं जैविक विकारों को दूर करने के लिए भी ठोस एवं दीर्घकालीन उपाय अनिवार्य है। इसके लिए कृषि पद्धति इस प्रकार की होनी चाहिए जिसमें मिट्टी में आवश्यक तत्त्वों की कमी नहीं प्रत्युत–अभिवृद्धि हो। कम से कम जिस मात्र में इन तत्वों का कृषि प्रक्रिया में मिट्टी से शोषण होता है उतनी मत्रा की पुनः आपूर्ति होना आवश्यक है। इसके लिए कृषि पद्धति में निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना अपेक्षित है–

भूमि क्षरण नियन्त्रण के उपाय

1 कृषि विधियाँ 2. वृक्षारोपण

1. कृषि विधियाँ

विभिन्न कृषि विधियों का सही उपयोग करके मृदा क्षरण को कम कर सकते हैं जैसे–

1. जुताई

भूमि क्षरण को रोकने के लिये जुताई की संख्या गहराई व विधि का विशेष महत्त्व है। ग्रीष्म ऋतु में खाली खेत छोड़ना, जुताई करने की अपेक्षा हानिकारक है, क्योंकि ग्रीष्म में जुताई किये गये खेत में अधिक पानी शोषित हो सकता है जो कि भूमि क्षरण को कम करता है।

जल द्वारा भूमि क्षरण वाले खेत की जुताई की संख्या कम रखना ही लाभप्रद है क्योंकि जहाँ पर जुताई से अपधावन की मात्रा कम होती है क्योंकि जहाँ पर जुताई से अपधावन की मात्रा कम होती है वहीं पर मिट्टी के कण भी ढीले पड़ जाते हैं अर्थात जल क्षरण का पहला चरण पूरा हो जाता है। अतः जुताई की कम संख्या ही लाभप्रद है।

2. फसलों का चयन

खेत में उगाई जाने वाली फसलों को भूमि संरक्षण के उद्देश्य से निम्न भागों में विभाजित किया जाता है

क्षरण अरोधी फसलें – दाल वाली फसलों जैसे उड़द, मूंग, लोबिया, ज्वार, लुसर्न, मूँगफली, हुलगो व कुल्थी आदि।

छोटे दानें वाली फसलों में जई, जौ, गेहूँ व बाजरा आदि व विभिन्न प्रकार की घासें इस वर्ग के अन्दर सम्मिलित है।

क्षरण अरोधी फसलें – इस वर्ग में वे फसलें जिनका वानस्पतिक आच्छादन, जिनकी बीज दर नम अथवा कतारों से कतारों या पौधों सें पौधों की दूरी अधिक होती है, सम्मिलित की जाती है। जैसे मक्का व कपास आदि ।

विभिन्न अधिक आच्छादन प्रदान करने वाली फसलों के मुख्य लाभ निम्नलिखित है–

1 वानस्पतिक आच्छादन वर्षा की बूंदों के सीधे भूमि पर आक्रमण को रोकता है।

2 अपधावन की गति व मात्रा को कम करता है।

3 मृदा जलस्त्राव को बढ़ाता है।

4 मृदा में जीवाँश पदार्थ की मात्रा बढ़ाकर भूमि के विभिन्न रासायनिक, भौतिक व जैविक क्रियाओं में सुधार करता है। मृदा में जीवाँश पदार्थ, मृदा कणों को

आपस में बाँधकर रखता है व मृदा जल को रोक व सोख कर मृदा क्षरण को कम करता है।

3. फसल चक्र

भूमि की उर्वरता को स्थिर रखने में फसल चक्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है। फसल चक्र में क्षरण आरोधी फसल का होना आवश्यक है। अगर भूमि व जलवायु के आधार पर क्षरण अवरोधी फसल चक्र में रखनी ही पड़ती है तो अरोधी फसलों व अवरोधी फसलों का मिश्रण अधिक लाभकारी पाया जाता है। फसल चक्र के प्रमुख उद्देश्य निम्न होते हैं–

1 क्रमबद्ध खेती।

2 मृदा उर्वरता में वृद्धि।

3 विभिन्न खरपतवार, बीमारी व कीट पंतगों के आक्रमण की रोकथाम।

4 खेतों की भूमि क्षरण से सुरक्षा।

किसी भी क्षेत्रों में लगातार अवरोधी फसल जैसे ज्वार आदि के उगाने की अपेक्षा अगर फसल चक्र में अवरोधी फसल जैसे हुगली, मूंगफली, उर्द, बरसीम, मूंग व लोबिया आदि को सम्मिलित कर लिया जाये तो भूमि क्षरण को रोकने में फसलें महत्त्वपूर्ण योग देती हैं। शोलापुर भूमि संरक्षण केन्द्र (महाराष्ट्र में) विभिन्न फसल चक्रो का अध्ययन करके यह परिमाण निकला कि लगातार ज्वार की खेती करने की तुलना में फसल चक्र में चना, ज्वार रखना रखना अधिक लाभदायक है जैसा कि निम्न सारणी से प्रदर्शित है[4] (सारणी संख्या 6.1)

सारणी संख्या 6.1

Showing the beneficial effect of ROTATION on yield.

Treatment	Sholaspur	Comparative increase over continuous Jowar	Ahmed Nagar	Comparative increase over continuous Jowar%
continuous Jowar	454	.	255	.
Gram Jowar	563	131	416	163

Source: Manoj Sharma " Soil Scienc'' PP-536

4 कृत्रिम आवरण

भूमि की सतह पर भूसा, पत्तियों या पोलेथीन का कृत्रिम आवरण बहुत ही लाभकारी पाया जाता है। कृत्रिम आवरण की भूमि आवरण सतह पर जितनी मोटी परत होती है, उतनी ही लाभकारी यह सिद्ध होगी। मल्च के प्रयोग से भूमि में नमी की मात्रा

सरणी संख्या 6.2 Showing the effect of Jowar Stalk mulch on conservation of moisture& chking soil erasion.

Observation	Length of expts. Plot in feet					
	33feet		66feet		132 feet	
	Without Mulch	With Mulch	Without Mulch	With Mulch	Without Mulch	With Mulch
1. Run of in inches	4.57	1.89	.4.48	1.54	2.86	1.22
2. Soil loss in tons\acre	0.39	0.39	1.52	3.40	. 0.92	0.28

Source: Manoj Sharma " Soil Scienc'' PP-536-537

व ताप का नियन्त्रण भी रहता हैं। वानस्पतिक मल्च से, मृदा मे जीवाँश पदार्थ की मात्रा बढ़ती है। शोलापुर (महाराष्ट्र में) में ज्वार के अवशेष द्वारा, भूमि क्षरण व अपधावन पर निरीक्षण किया गया । ज्वार के अवशेष दो टन प्रति एकड़ के हिसाब से प्रयोग किये गये। आठ वर्षो के इस प्रकार के प्रयोग के परिमाण निम्नलिखित है– सारणी संख्या 6.2

उपयुक्तानुसार प्रत्येक प्लोट में जहाँ पर मल्च का प्रयोग किया गया है, भूमि क्षरण एवं अपधावन कम मात्रा में होता है।

5 पट्टियों में फसल उत्पादन

जिन क्षेत्रों में जल द्वारा भूमि क्षरण की सम्भावना होती है भूमि पर अवरोधी व अरोधी फसलों को एकान्तर पटिट्यों में उगाते हैं। अवरोधी फसल की पट्टि अपधावन की मात्रा व गति को करने के साथ–साथ ऊपर से अपधावन में बहाकर लाई गई

मिट्टी को भी अपने क्षेत्र जमा कर देती है। पट्टियों में फसल उत्पादन की निम्न किस्में है।

6 खादों का प्रयोग

भूमि में पौधों के खाद्य तत्त्वों की पूर्ति के लिये विभिन्न प्रकार के जीवांश जैसे गोबर कम्पोस्ट व हरी खाद तथा अकार्बनिक खाद खेतों में डालते हैं। विभिन्न जीवांश पदार्थ जो भूमि में मिलाये जते है वे भूमि के कणों को आपस में बाँधते हैं जिससे मृदा कण तितर–बितर नहीं हो पाते जीवांश पदार्थ खेत में मिलाने पर पानी अपने अन्दर रोकता है अतः अपधावन की मात्रा कम होती है। इस प्रकार जीवांश खाद भूमि में जल कटाव के दोनों चरणों, कणों के वितरण व बहाकर ले जाने की प्रक्रिया को प्रभावित कर, मृदा क्षरण को कम करते हैं। हरी खाद की फसलें इन गुणों के अलावा, खाली खेत की तुलना में विभिन्न वानस्पतिक आच्छादन का लाभ पहुँचाकर भूमि क्षरण को रोकती है।

7 बुआई की विधियाँ

खेतों में बुआई छिटकवाँ विधि की तुलना में कतारों में बुआई लाभदायक रहती हैं। क्योंकि कतार यदि ढाल के विपरित दिशा में बोदें तो वे पानी के कटाव की गति कम देते हैं। छिटकवाँ विधि में इस प्रकार की रूकावट नहीं होती। इसके अतिरिक्त यदि फसलों की खाईयों या डोलियों में अगर बुआई करें तो ये खइयाँ या डोली भी ढ़ाल के पिरीत दिशा में ही बनानी चाहिए।

8 बीज की दर

खेतों में जहाँ पर जल द्वारा भूमि क्षरण की सम्भावना होती है, बीज की दर इतनी रखें कि प्रति इकाई क्षेत्रफल पौधों की संख्या, भूमि धरातल को अधिक वानस्पतिक आवरण प्रदान कर सके। ऐसे क्षेत्रो में साधारण खेतों की तुलना में बीज की दर अधिक रखते हैं।

9 सिंचाई विधियाँ

इस प्रकार की विधि को अपनाये जिसमें कम पानी से खेत में लगाकर अधिक क्षेत्रफल सींचा जा सके। बाढ़ विधि हमेशा ऐसे क्षेत्रों में हानिकारक होती हैं। बौछारी विधि से सिंचाई अधिक लाभदायक हैं। ऐसे क्षेत्रों में आवश्यकता होने पर ही सिंचाई दें क्योंकि नमी, भूमि में जितनी कम रहेगी, वर्षा के पानी को भूमि उतना ही अधिक सोख सकेगी।

10 निकाई गुड़ाई

निकाई गुड़ाई से भूमि ढीली होती है अतः भूमि क्षरण की सम्भावना बढ़ सकती है, दूसरी ओर ढीली भूमि जल का शोषण अधिक करके, भूमि को जल कटाव से सुरक्षित रखती है। इसके अतिरिक्त निकाई गुड़ाई में खरपतवार नष्ट करके भी वानस्पतिक आच्छादन रहित किया जाता है अतः भूमि क्षरण की सम्भावना बढ़ती है, दूसरी ओर खरपतवार के द्वारा उपयोग किये जाने वाले खाद्य तत्व व पानी, फसलों के द्वारा चूषित कर लिये जाते हैं अतः फसलों की वानस्पतिक वृद्धि होकर अधिक से अधिक पैदावार होती है जो कि हमारा मुख्य उद्देश्य हैं।

1. **कटाई–** फसलों की देर पकने वाली जातियाँ खेत में उगाये जिससे कि वर्षा का मौसम समाप्त होने के बाद फसल की कटाई हो। ऐसी फसलें जिनकी कई बार कटाई करनी पड़ती है, फसल को भूमि से सटाकर न काटे बल्कि भूमि से ऊपर फसल का कुछ भाग छोड़कर काटना चाहिये। अगर सम्भव हो सके तो फसल काटते समय, फसल के अधिक से अधिक अवशेष खेत में ही छोड़ दे जो कि मृदा को जल क्षरण के बचाता हैं।

2 वृक्षरोपण :भूमि संरक्षण में वनों की महत्ता को ध्यान में रखतें हुए भूतपूर्व केन्द्रीय खाद्य एवं कृषि मन्त्री श्री के.एम.मुन्शी ने जून 1950 मे वन महोत्सव अथवा अधिक वृक्ष लगाओं आन्दोलन प्रारम्भ किया। इससे पहले वृक्ष लगाने का आन्दोलन कभी देश मे नहीं हुआ था। इसी वर्ष लाखों वृक्ष विभिन्न क्षेत्रों में लगाये गये। ''प्रत्येक वर्ष वन महोत्सव एक वार्षिक राष्ट्रीय त्यौहार के रूप में 1–8 जुलाई तक मनाया जाता है।''

वृक्षारोपण एवं वनों की सुरक्षा इनकी निम्नलिखित महत्ता को ध्यान में रखकर करनी चाहिये–

1. वृक्षों से भूमि के क्षरण को जल अथवा वायु की मार से सुरक्षा होती हैं।
2. वृक्षों से किसी स्थान की जलवायु सुहावनी होती हैं।

यदि किसी क्षेत्र से काट दिये जाये तो वहाँ पर वार्षिक वर्षा कम हो जाती है तापक्रम इन क्षेत्रों में बढ़ जाता हैं। हमारे देश में, गोवर्धन, वृदावन, मधुवन व शिवालिक के वृक्ष नष्ट होने पर वहाँ की जलधारायों में केवल रेत ही रहे गयी हैं। इसके अतिरिक्त जहाँ आजकल राजस्थान (80000sq. miles) में रेत ही रेत कभी अच्छा सघन वन था। आजकल राजस्थान का यह रेगिस्थान 100 मील की लम्बी पट्टि में आधा मील प्रति वर्ष उत्तर प्रदेश की उर्वरा भूमि को ढ़ककर नष्ट कर रहा हैं।

FLATE No. 16

वृक्षारोपण कार्यक्रम

जल संरक्षण

वन के समान ही जल पर्यावरण संरक्षण में अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है वस्तुतः जल के बिना जीवन सम्भव नहीं है। जल संचरण से ही वनस्पतियों एवं जीवों को पोषण तत्त्व प्राप्त होता हैं तथा उनके शरीर की क्रियाशीलता बनी रहती हैं। स्वच्छ जल सर्वसुलभ नहीं रहे गया है। अतएव जल संरक्षण पर विशेष ध्यान देना अनिवार्य हो गया है। जल संरक्षण के निम्न तीन महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है–

(1) जल की उपलब्धता बनाये रखना।

(2) जल को प्रदुषित होने से बचाना तथा

(3) संदुषित जल को स्वच्छ करके उसका पुनर्चक्रण।

1 जल की उपलब्धता बनाये रखना

जल की उपलब्धता जल के निश्चित भण्ड़ार बनाये रखने पर निर्भर है। प्रवाहित जल सतत् प्रवाहित होता रहता है। प्रवाहित जल की अधिक उपादेयता है। अतएव जल संरक्षण का प्रारम्भ वर्षा की बूँदों के धरातल पर गिरने के साथ ही होता है। यदि वर्षा के पानी को सतह पर तेजी से न बहने देकर उसे भूमिगत होने की परिस्थितियाँ पैदा की जाये तो

(1)वाष्पीकरण से कम जल वायुमण्ड़ल में विलीन होगा

(2) भूमिगत जल सागरों में जल का आयतन बढ़ेगा,

(3) मिट्टी में आर्द्रता बढ़ेगी तथा

(4) जल का मंद गति से निरन्तर प्रवाह बना रहेगा। अतएव जल संरक्षण, जलचक्र में उस भाग को नियंत्रित करने से होता है। जिसमें वर्षा का जल धरातल पर प्रवाहित होता हुआ समुद्र में पहुँचता है मनुष्य, जन्तुओं एवं वनस्पतियों के उपयोग में आने वाला जल सदैव समुद्र की ओर जाने को प्रवृत्त रहता है अतएव इसकी गति को कम करके इसका बहुविधि अधिकाधिक उपयोग करना जल संरक्षण का प्रमुख सिद्धान्त है। सतह पर अथवा भूमिगत जल का संचय

करके जल प्राप्ति की नियमिता में वृद्धि करने से उसकी उपयोगीता बढती है। भूमिगत जल संरक्षित जल है क्योंकि

(अ) इसका प्रवाह अतिमन्द होता हैं।

(ब) यह स्वच्छ होता हैं तथा

(स) इससे कोई नुकसान नहीं होता। अतएव अधिकाधिक सतह पर प्रवाहित जल को भूमिगत होने को प्रेरित करना जल संरक्षण की दिशा में सही कदम है। जल भूमिगत तभी होगा जब

(i) धरातल पर वनस्पति का आवरण हो गया

(ii) खुली कृषिगत भूमि फसल या घास से आच्छादित रहे अथवा जमीन समतल है तो जोती हुई हो। उसी प्रकार नालों एव नदियों सतहगत प्रवाहित जल को भी व्यर्थ न बहने देकर छोटे–छोटे जलाशयों में संचित करना बेहतर है। परन्तु इस उद्देश्य से एक या दो बड़े बाँधों को बनाने की अपेक्षा नदी के पूरे मार्ग में विशेषतया अधिक ढ़ाल प्रवणता युक्त पहाड़ी क्षेत्रों में थेड़ी–थोड़ी दूरी पर अनेक छोटे–छोटे बाँध एवं जलाशय बनाना बहतर है। ऐसे बाँध समस्या को कम करते हैं। बाधों द्वारा निर्मित कृतिम जलाशयों से जल का बहुविधि उपयोग करने मे सुविधा होती है–

(क) इन जलाशयों से नियंत्रित मात्रा में नियमित रूप से बाँधों के फाटकों से जल प्रवाहित करके विद्युत उत्पादन की जा सकती है।

(ख) जलाशयों का जल पारश्र्वती नहरों में मोंड़कर सिंचाई के काम में लाया जा सकता है।

(ग) समीवर्ती नगर गाँवों को पेयजल की आपूर्ति की जा सकती हैं।

(घ) मत्स्य पालन किया जा सकता हैं।

(ड़) ऐसे जलाशय नौकायन आदि मनोरंजन के साधन हो सकते हैं।

(च) ये जलाशय भूदृश्य को मनोरम बनाते है।

इस प्रकार छोटे–बडे बाँधों की श्रंखला सतह पर प्रवाहित जल के बहुविध प्रयोग से उसकी उपयोगिता में अभिवृद्धि करते हैं। देश में होने वाली मानसूनी वर्षा असमान , अनिश्चित व अनियमित है। फलस्वरूप कुछ क्षेत्रों में जल की कमी देखने को मिलती है वहीं दूसरी और जल व्यर्थ में बह जाता है।

यदि नदियों को आपस में जोड़कर एक जलग्रिड बना लिया जाये तो अल्प समय में लुटायी जाने वाली वर्षा की दौलत बेकार सागर में बहाये जाने की बजय उसका कई वर्षों तक उपयोग हो सकता है। जिले में बनास व चम्बल नदियों को यदि जोड़ा जाकर जिले में जल संरक्षण किया जा सकता है। जिससे भविष्य में पानी की आपूर्ति निश्चित की जा सके । यह जल संरक्षण का प्रमुख उद्देश्य है।

2 जल को प्रदुषित होने से बचाना

जल को प्रदुषित न होने देना। जल प्रदुषण के प्रमुख स्त्रोत

(1) बडे नगरों के वाहितमल तथा औद्योगिक अपशिष्ट जल के जलाशयों व प्राकृतिक प्रवाह के बहाव को नियमित करने के लिए आवश्यक नियम बनाये जाने चाहिये तथा वर्तमान नियामों का सख्ती से पालन हो यह सुनिश्चित किया जाना चाहिये।

(2) कारखानों का बहिस्त्राव है कि बिना किसी परिष्करण के नदियों में जा पहुँचना हैं। इसे रोकने के लिए वाहितमल को नदी में मिलने से पहले स्वच्छ करना कानूनी रूप से अनिवार्य होना चाहिए। उस प्रकार के मल को पानी से छानकर उनके उर्वरक बनाने के संयंत्र उपलब्ध है। ऐसे संयंत्रों के उपयोग से साफ किया हुआ जल ही नदी में जायेगा। इसी प्रकार, उद्योगपतियों पर कारखानों से निकलने वाले अपद्रव्यों को भी छानकर ही जल नदी में छोड़ने की बाध्यता होनी चाहिए।

(3) जलाशयों में शहरी मलवा निस्तारण तथा सोच क्रिया पूर्णतः प्रतिबंधित हो तथा दोषी को सख्त दण्ड़ का प्रावधान हो।

3 संदुषित जल को स्वच्छ करके उसका पुनर्चक्रण

संदूषित जल को विभिन्न प्रक्रियाओं–प्राथमिक द्वितीयक, तृतीयक द्वारा स्वच्छ करके पुनरूपयोग में लाना। प्रथम प्रकार में भौतिक विधियों का उपयोग होता है। जो दो चारणों में पूरा होता है–

(1) सन्निछालन के अन्तर्गत विभिन्न आकार के छिद्रों वाली जालियों से संदूषित जल को प्रवाहित करके उसमें तैरते हुए अवांछित पदार्थों, कूड़ा एवं करकट से भरे हुऐ छोटे जीवों को विलग किया जाता है। तत्पश्चात्

(2) अवसान का सहारा लिया जाता है। अवसान में जल को एक पिसाई मशीन में प्रवाहित किया जाता है तो बचे हुए सूक्ष्म पदार्थों को बारिक चूर्ण में परिणत कर देती है। तब यह संदूषित जल मन्द गति से अनेक अवसान कक्षों से प्रवाहित किया जाता है जिससे जल में निलम्बित ठोस पदार्थ चूर्ण अवसादित हो जाते हैं। इस अवस्था में जल में क्लोरिन मिलाकर छोड़ दिया जाता है। अब जल सादारणतया साफ हो जाता है पर अभी हानिकारक जीव एवं कार्बनिक पोषक तत्त्वों से मुक्त नहीं रहता।

द्वितीय स्वच्छीकरण के अन्तर्गत जैव–रासायनिक विधियों का उपयोग किया जाता है। यह उपचार ऐसे टैंकों में होता है जिन्हें वात विहीन आयंक पाचक कहते हैं। यहाँ स्वच्छीकरण का कार्य अवायवी सूक्ष्म जीव करते हैं। जल से मिथेन जैसे–जैसे विलग हो जाती है जिनकों अलग टैंक में एकत्र करके ईधन के काम लिया जा सकता है।

तृतीयक स्वच्छीकरण द्वारा द्वितीयक उपचार के पश्चात् निकले जल में से फास्फेट एवं नाइट्रेट को विलग किया जाता है। अब जल में शैवाल वृद्धि की सम्भवना नहीं रहती। इस चरण के पूरा होने पर वाहित मलयुक्त जल भी इतना शोधित हो जाता है कि पेयजल हेतु उपयोग किया जा सकता है। इनके साथ ही वे सभी अनुसंगी प्रयत्न किसे जाने चाहिए जिससे किसी भी प्रकार की गन्दगी नदी में न मिल पाये।

पर्यावरण हेतु आवश्यक वर्तमान दृष्टिकोण–

1 पर्यावरण आचार सहिता का विकास करना।

2 पर्यावरण के क्षेत्र में प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता।

3 पर्यावरणीय दावों के लिये विशेष न्यायालय।

4 जनहित याचिकाओं का प्रोत्साहन।

5 नगर नियोज को महत्त्व देना।

6 अपशिष्टों का पुनः चक्रण।

7 पर्यावरण के क्षेत्र में शोध।

8 पर्यावरण साहित्य का निर्माण और उसका वितरण।

9 जैविक कृषि को बढ़ावा देना ।

10 विकास योजनाओं को शुरू करने से पहले पर्यावरण पर उनके प्रभावों का आकलन करना

11 पर्यावरणीय प्रबंधन के लिए व्यापक आधार पर आंकड़ें जमा कराना और उनके विश्लेषण की क्षमता विकसीत करना।

12 लोगों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता तथा पर्यावरण संरक्षण की भावना विकसीत करनी चाहिऐ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Singh, L. R., Singh, Savindra and other (1984) : "Environmental Management, Allahabad Geographical Society, Geography Dept. Allahabad University.

2. सिंह, सविन्द्र (1995) : ''पर्यावरण भूगोल'', प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद, पृष्ट–467।

3. सिंह, सविन्द्र : ''पर्यावरण नियोजन तथा प्रबन्धन'', पृष्ट–470

4. शर्मा, मनोज : ''पर्यावरण भूगोल'', इशिका पब्लिकेशन हाऊस जयपुर, पृष्ट–535–540

सप्तम – अध्याय

कृषि विकास स्तर का मापन

तथा

सारांश एवं

भावि कृषि विकास

हेतु सुझाव

कृषि विकास स्तर का मापन तथा सारांश एवं भावि कृषि विकास हेतु सुझाव

प्रस्तुत शोध प्रबन्धन के पूर्व अध्यायों में सवाई माधोपुर जिले की कृषि विकास स्तर एवं पर्यावरणीय नियोजन के विभिन्न आयामों पर प्रकाश ड़ालने का प्रयास किया गया है। जिसमें क्षेत्र के भौगोलिक परिवेश के अन्तर्गत कृषि विकास स्तर के लिए उपलब्ध आधुनिक सुविधाओं, कृषि प्रारुप का बदलता हुआ स्वरुप, सिंचाई स्वरुप, हरित क्रान्ति का प्रभाव आदि विषयों की चर्चा की गई है। जिनमें पिछले 20 वर्षों के अध्ययन में सिंचाई सुविधाओं का विकास, कृषि में तकनीकीकरण एवं आधुनिक आदानों में धनात्मक परिवर्तन देखने को मिला है। आज क्षेत्र का कृषि विकास स्तर परम्परागत ढ़ंग का ही नहीं अपितु आधुनिक सुख सुविधाओं से ओतप्रोत है। यहाँ की कृषि में व्यापारिक कृषि के लक्षण उभरने लगे है। अतः प्रस्तुत अध्याय में कृषि विकास स्तर में आधुनिकीकरण को मापने का प्रयास किया गया है। कृषि विकास के आधुनिकीकरण का अध्ययन आयामों में से प्रमुख नौ चयनित सूचकांकों को आधार मानकर किया गया है–

1. भौगोलिक क्षेत्रफल का कुल काश्त क्षेत्रफल (प्रतिशत में)
2. शस्य गहनता सूचकांक
3. शुद्ध काश्त क्षेत्रफल का सिंचित क्षेत्रफल (प्रतिशत में)
4. सिंचाई गहनता
5. आधुनिक यंत्र एवं औजारों का उपयोग
6. यांत्रिक ऊर्जा का प्रति हजार शुद्ध काश्त क्षेत्रफल पर उपयोग
7. उन्नत किस्म के बीजों का प्रति हजार शुद्ध काश्त क्षेत्रफल पर उपयोग
8. रासायनिक खाद का उपयोग (किलोग्राम प्रति हेक्टेयर)
9. जैविक ऊर्जा का प्रति हजार शुद्ध काश्त क्षेत्रफल पर उपयोग

उपयुक्त सुचकांकों को आधार मानकर सवाई माधोपुर जिले के कृषि विकास स्तर को मापन प्रमापीकरण विधि द्वारा किया गया है। प्रमापीकरण प्रादेशीकरण वर्गीकरण अर्थात विकास स्तर का वर्गीकरण एक प्रक्रिया है। जिसमें विभिन्न चर मूल्यों एवं तत्त्वों को उनकी विशषताओं व गुणों के साथ सामुहिक रुप से व समानताओं के साथ जोड़ ले तो इस प्रकार समरुप भेदों वाले क्षेत्रों की आसानी से विपरीत गुण वाले

क्षेत्रों से अलग किया जा सकता है तथा उन्हें प्रदेश के रुप में समझा जा सकता है। प्रमापीकरण विधि का विवरण इस प्रकार है–

प्रमापीकरण विधि =

प्रथम चरण :– सूचकांक को समान्तर माध्य ज्ञात करना

सूत्र = $\bar{X} = \frac{\sum X}{N}$

यहाँ पर

$\bar{X}$ = समान्तर माध्य

X = सूचकांकों का कुल योग

N = सूचकांकों की कुल संख्या

द्वितीय चरण = सुचकांकों से प्रमाप विचलन ज्ञात करना।

सूत्र =

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}}$$

यहाँ पर σ = प्रमाप विचलन

$d = X - \bar{X}$ = वास्तविक माध्य से ज्ञात किया गया विचलन

d^2 = वास्तविक मध्य से निकले गये विचलनों का वर्ग

$\sum d^2 X$ = विचलनों का कुल योग

N = सूचकांकों की संख्या

तृतीय चरण

$$\text{प्रमापीकरण मान} = \frac{X - \bar{X}}{\sigma}$$

यहाँ पर X = सूचकांकों का वास्तविक मान

$\bar{X}$ = समान्तर माध्य

σ = प्रमाप विचलन

चर्तुथ चरण –

सामुहिक सूचकांक ज्ञात करना । प्रत्येक भू–अभिलेख निरीक्षक वृत के सभी नौ सूचकांक के प्रमापीकरण मान को जोड़कर कुल योग में सूचाकांकों अर्थात 9 का भाग देते है।

अत : सामुहिक सूचकांक = प्रमापीकरण के मानों का योग / सूचकांकों की संख्या

उपर्युक्त विधि द्वारा परिकलित परिणामों को जिन्हें सारणी संख्या 7.1 में व मानचित्र 7.1 में प्रदर्शित किया गया है। मानचित्र 7.1 का अवलोकन से यह तथ्य भी सामने उभरकर आता है कि कृषि विकास स्तर के परिणाम में विभिन्न सूचकांकों को क्षेत्र की भौगोलिक दशाओं ने प्रभावित किया है। कृषि विकास स्तर में सहायक आर्थिक एंव सामाजिक दशायें भौगोलिक दशाओं की तुलना में कम है लेकिन उस पर किसान आधुनिक संविधाओं से विजय प्राप्त करने की भरसक कोशिश करे रहे हैं। आर्थिक, सामाजिक एवं भौगोलिक दशाओं का वर्णन पूर्व अध्यायों में यथावत किया गया है। प्रमापीकरण विधि द्वारा परिकलित परिणामों के आधार पर सवाई माधोपुर जिले को चार कृषि विकास स्तर वर्गों या खण्ड़ों में विभाजित किया गया है।

क्षेत्र के चार कृषि विकास स्तर का विवरण इस प्रकार है।

1. अत्याधिक विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग
2. विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग
3. मध्य विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग
4. अल्प विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग

MAP No. 7.1

SAWAI MADHOPUR DISTRICT MODERNISATION LEVEL OF AGRICULTURAL DEVELOPMENT - 2012-13

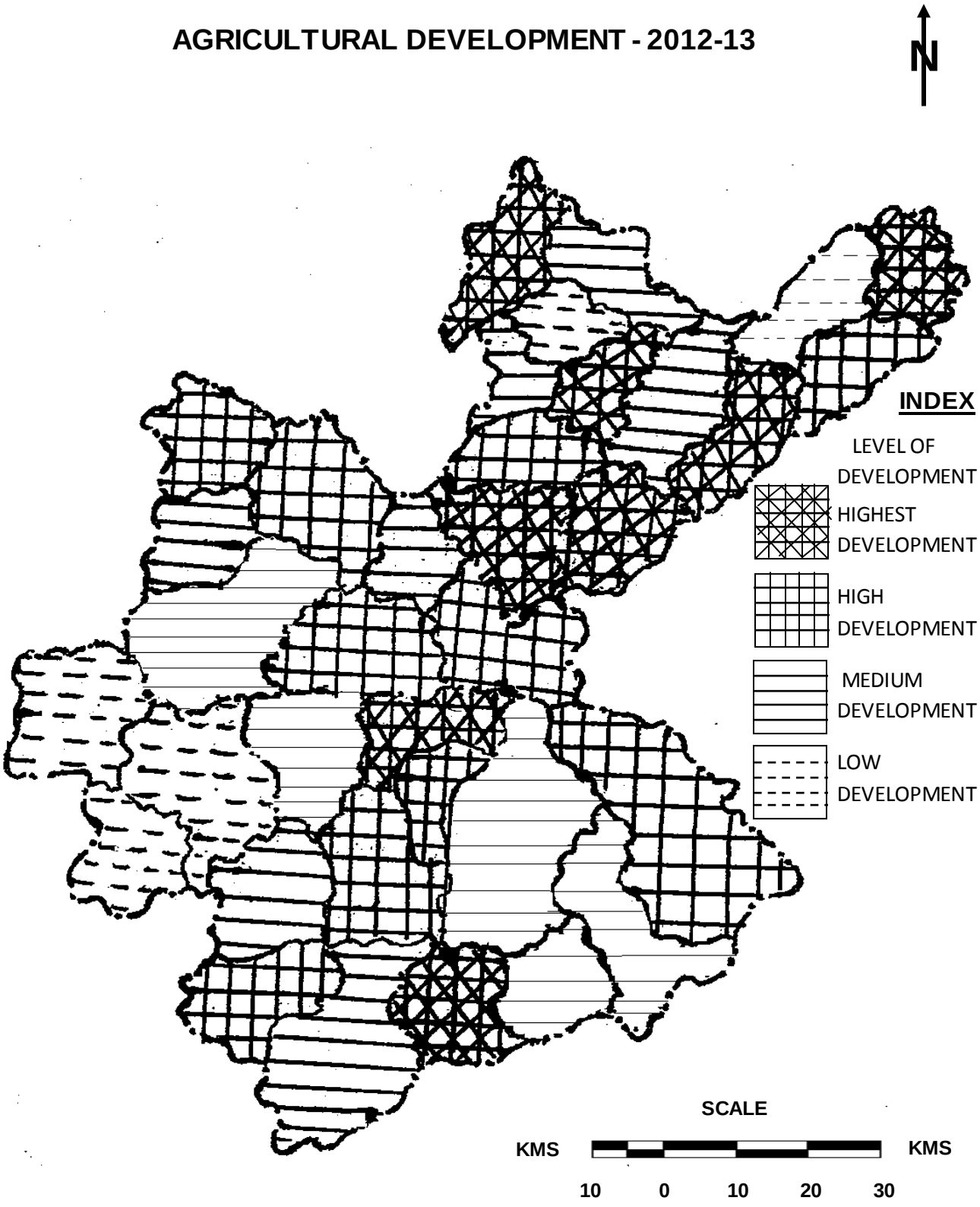

1. अत्याधिक विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग

इस वर्ग में सवाई माधोपुर जिले के उत्तरी , उत्तरी–पूर्वी व दक्षिणी भाग में स्थित 8 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को सम्मिलित किया गया है। इन में खण्ड़ीप, सुकार, खड़ेली, कुनकटा कलाँ, बाड़ कलाँ, बाटोदा, रवांजना डूंगर, व बहरावण्ड़ा खुर्द भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को इस अत्याधिक विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण के वर्ग में सम्मिलित किया गया है। (मानचित्र 7.1) । इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक + 0.51 से भी अधिक है। काश्त क्षेत्र, दुपज क्षेत्र, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग, उन्नत बीजों के अन्तर्गत क्षेत्र, ट्रेक्टरों का अनुपात की दृष्टि से यह वर्ग अत्याधिक विकसित है। जिन क्षेत्रों में सिंचित क्षेत्र अधिक है वहीं कृषि विकास हुआ हैं। इस क्षेत्र में पिछले 20 वर्षों में कृषि विकास के स्तर में अत्याधिक परिवर्तन हुआ है।

2. विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग

इस वर्ग में जिले के उत्तरी–पश्चिमी व मध्यवृर्ती भाग को सम्मिलित किया गया है। इस में जिले के 35 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में से 10 को सम्मिलित किया गया है। (मानचित्र 7.1)। इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक + 0.26 से 0.50 है। इस वर्ग में कुल नौ सूचकांकों में से 6 में धनात्मक तथा 3 में ऋणात्मक परिवर्तन की ओर संकेत कर रहे हैं। वास्तविक बोये गये, दुपज क्षेत्र, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग, जैविक ऊर्जा, ट्रेक्टरों का अनुपात की दृष्टि से यह वर्ग अत्याधिक विकसित वर्ग के बाद इसका द्वितीय स्थान है। जिन क्षेत्रों में सिंचित क्षेत्र व उन्नत बीजों के अन्तर्गत क्षेत्र, यांत्रिक ऊर्जा, के उपयोग की दृष्टि से तृतीय स्थान पर है।

3. मध्य विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग

मध्य विकसीत वर्ग में सवाई माधोपुर जिले के दक्षिणी–पूर्वी व मध्यवृर्ती भाग को सम्मिलित किया गया है। इस में जिले के 35 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में से 12 को सम्मिलित किया गया है। इन में फलौदी, कुश्तला, सुरवाल, खण्डार, मेई कलाँ, बहरावण्ड़ा कलाँ, पिपलवाड़ा, बौंली, मलारना चौड़, लिवाली, जहारा, गंगापुर, को सम्मिलित किया गया है। (मानचित्र 7.1)। इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक + 0.01 से 0.25 है। जिले में इस वर्ग का कृषि विकास की दृष्टि से तीसरा स्थान है। सिंचित क्षेत्र की दृष्टि से इस वर्ग का द्वितीय स्थान है। दुपज क्षेत्र, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग, यांत्रिक ऊर्जा, ट्रेक्टरों का अनुपात की दृष्टि से इसका तीसरा स्थान है। नौ

सूचकांकों में से 5 में धनात्मक तथा 4 में ऋणात्मक परिवर्तन की ओर संकेत कर रहे है।

4. अल्प विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग

इस वर्ग में सवाई माधोपुर जिले दक्षिणी–पश्चिमी भाग में स्थित 5 (शिवाड़, भगवतगड़, चौथ का बरवाड़ा, बामनवास, व पिपल्दा) भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को सम्मिलित किया गया है। (मानचित्र 7.1)। इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक – 0.25 है। दुपज क्षेत्र, सिंचित क्षेत्र, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग, यांत्रिक ऊर्जा, उन्नत बीजों के अन्तर्गत क्षेत्र, ट्रेक्टरों का अनुपात की दृष्टि से इसका चौथा स्थान है

सारणी संख्या 7.1

सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का मापन

2012–13

क्र. सं.	वर्ग	सामुहिक सूचकांक	सम्मिलित भू–अभिलेख निरीक्षक वृत	संख्या
1	अत्याधिक विकसित	+ 0.51 से अधिक	खण्ड़ीप, सुकार, खड़ेली, कुनकटा कलाँ, बाड़ कलाँ, बाटोदा, रवांजना डूंगर, व बहरावण्ड़ा खुर्द	8
2	विकसित कृषि	+0.26 से 0.50	रवांजना चौड़, बालेर, सेलू, सवाई माधोपुर, बेराड़ा, भाड़ौती, रवांजना डूंगर, मित्रपुरा, बजीरपुर,	10
3	मध्यम विकसित	+ 0.01 से 0.25	फलौदी, कुश्तला, सुरवाल, खण्डार, मेई कलाँ, बहरावण्ड़ा कलाँ, पिपलवाड़ा, बौंली, मलारना चौड़, लिवाली, जहारा, गंगापुर, को	12
4	अल्प विकसित	– 0.25 से अधिक	शिवाड़, भगवतगड़, चौथ का बरवाड़ा, बामनवास, व पिपल्दा	5

सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास स्तर हेतु समस्यायें

अध्ययन क्षेत्र में कृषि विकास धीमी गति से हो रहा है। इसका प्रमुख कारण क्षेत्र की प्रतिकूल भौगोलिक परिस्थितियों के साथ–साथ अन्य अनेक कारण कृषि विकास में समस्या प्रकट करते है जिनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है–

1. भौगोलिक परिस्थितियों की प्रतिकूलता

जिले में धरातल की विषमता कृषि हेतु उपजाऊ भूमि का अभाव, वर्षा का कम होना, ग्रीष्म ऋतु के ताप स्थिरता में अन्तर, मिट्टी में लवणीयता एवं क्षारीय अंशों की अधिकता, कृषि हेतु उपर्युक्त भूमिगत जल का अभाव एवं जल तल का नीचा होना आदि भौगोलिक परिस्थितियाँ क्षेत्र के कृषि विकास एवं आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में अवरोध के रुप में है। जिले में यधपि पर्याप्त वर्षा हो भी जाती है किन्तु सिंचाई वर्षा हेतु विशेष सुविधाओं के नहीं होने के कारण बांध आदि नहीं बनाये गये है। जिससे वर्षा का पानी वह जाता है। मिट्टी अपरदन की समस्या भी कृषि को प्रभावित करती है। प्रति वर्ष उपजाऊ भूमि अपरदन के द्वारा 2.5 प्रतिशत नष्ट हो जाती है।

2. कृषि का वर्षा पर आश्रित होना

अध्ययन क्षेत्र में सिचाई के साधनों के अभाव के कारण कृषि कार्य वर्षा पर आश्रित है। यहाँ वर्षा की मात्रा एवं वितरण अनिश्चित एवं अनियमित है। इसी कारण भारतीय कृषि मानसून का जुंआ कहलाती है। इस प्रकार जिले में भी वर्षा की मात्रा एवं वितरण अनिश्चित एवं अनियमिता पायी जाती है इस कारण सवाई माधोपुर जिले की कृषि विकास का मानसून का जुंआ कहे सकते है। सिंचाई साधनों का अभाव भी कृषि विकास एवं आधुनिकीकरण को प्रभावित करता है। जिले में सिंचाई 90.5 प्रतिशत कुओं व नलकूपों के द्वारा होती है। अतः प्रतिवर्ष भूमिगत जल का स्तर नीचे गिरता जा रहा है। यहाँ पहले टूयूबेबलों में पानी 250 से 300 फीट पर निकलता था लेकिन अब भूमिगत जल स्तर में गिरावट के कारण 350 से 450 फीट फीट पर निकलता है। यह समस्या गढ़ती ही जा रही है। पानी की उपयुक्त मात्रा पर ही उन्नत बीज, रासायनिक खाद एवं कीटनाशक औषधियों का उपयोग सम्भव है। सिंचाई के अभाव में व्यापारिक फसलों का उत्पादन कम होता है। अतः अध्ययन क्षेत्र में वर्षा की कमी एवं सिंचाई सुविधाओं की कमी कृषि विकास के आधुनिकीकरण को प्रभावित करती है।

3. अशिक्षित किसान

जिले की जनसंख्या में साक्षरता का प्रतिशत 2011 के आंकडों के आधार पर 66.67 प्रतिशत है। अर्थात अधिक जनसंख्या निरीक्षर है। किसान अशिक्षित होने के कारण वर्तमान समय में हो रहे आधुनिक परिवर्तनों एवं योजनाओं के बारे में लाभ प्राप्त

नहीं कर पाते। वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा कृषि में हो रहे परिवर्तनों को किसान स्वयं प्रयोग करने से डरते है। किसानों के पास पूँजी की कमी होती है जिससे वह कृषि में नये–नये प्रयोग नहीं कर पाते है।

4. कृषि भूमि पर जनसंख्या का अधिक भारः

अध्ययन क्षेत्र की जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना से ज्ञात होता है कि जिले की लगभग 72.44 प्रतिशत जनसंख्या अपनी अजीविका हेतु कृषि पर निर्भर है। जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार बढ़ रहा है। कृषि भूमि का विभाजन दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इस कारण क्षेत्र में विस्तृत पैमाने की कृषि असंभव है। जनसंख्या भार के कारण ही क्षेत्र में जोतों का आकार घटता जा रहा है। क्षेत्र के किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण आधुनिक मशीनो एवं आदानों का उपयोग कम हो पाता है।

5. जोतों का आकार छोटा होने के कारण कृषि में मशीनीकरण का उपयोग अधिक लाभप्रद नहीं हो पाता है।

6. क्षेत्र के किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने से उन्नत किस्म के खाद, बीज, उन्नत सिंचाई के साधनों एवं मशीनों का एवं अन्य आदानों का उपयोग कम कर पाते है।

7. जिले के किसान अभि भी रुढ़िवादिता के आधार पर कृषि कार्य करते है।

सांराश

सवाई माधोपुर जिला राजस्थान के उत्तरी–पूर्वी भाग में 25° 45' से 26° 41' उत्तरी अक्षांशों तथा 75° 59' से 77° 0' पूर्वी दंशान्तरों के मध्य स्थित है। जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 4979.47 वर्ग किलोमीटर है। इसकी पूर्व से पश्चिम लम्बाई 55 किलोमीटर तथा उत्तर से दक्षिण चौडाई 86.90 किलोमीटर है। जिले में सात तहसील है, जिनमें 2 नगरीय क्षेत्र व 35 भू–अभिलेख निरीक्षक वृत है। जिले के पश्चिम भाग में अरावली व दक्षिणी–पूर्वी भाग विंध्यन पर्वत श्रेणियाँ स्थित है। इस क्षेत्र के पूर्वी मैदानी भाग को दो भागों में बांटा गया है, चम्बल बेसिन व बनास बेसिन है। इस क्षेत्र की प्रमुख सदावहानी नदी चम्बल व बनास है। यहाँ जलवायु अर्द्धशुष्क प्रकार की है। यहाँ औसत वार्षिक वर्षा 650 मिलीमीटर है। जिले की कुल जनसंख्या (2011) 1335551 है। जिसमें 704031 पुरूप तथा 631520 महिला है इस प्रकार 1000 पुरूषों के पिछे 897 महिलाएं है। सन 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या में 10,69,084 ग्रामीण तथा 2,66,467 नगरीय जनसंख्या है। कुल जनसंख्या में पिछले 10 वर्षों में 26.

94 प्रतिशत वृद्धि हुई है। जो समप्त भारत की 17.06 प्रतिशत व राजस्थान राज्य की 21.24 प्रतिशत की जनसंख्या वृद्धि से कहीं अधिक है। वर्तमान में 43.28 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या है। इसमें पिछले दशक में मामूली वृद्धि (1.28 प्रतिशत) हुई है। कार्यिक जनसंख्या का प्रतिशत सबसे अधिक (51.7 प्रतिशत) खण्डार तथा सबसे कम (38.83 प्रतिशत) गंगापुर तहसील में है। कार्यशील जनसंख्या का 63.93 प्रतिशत जनसंख्या कृषि में लगी हुई है।

सवााई माधोपुर जिले में सन् 2011 में साक्षरता का प्रतिशत 65.39 प्रतिशत है। सबसे अधिक पुरूषों में साक्षरता 81.51 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 47.51 प्रतिशत है। गंगापुर तहसील में 75.95 प्रतिशत साक्षरता है।

जिले में जनसंख्या का औसत घनत्व 297 व्यक्ति (2011) प्रति वर्ग किलोमीटर है, जो राज्य के औसत घनत्व 200 से अधिक है। जनसंख्या धनत्व में सन् 1921 से निरन्तर वृद्धि हो रही है। सर्वाधिक वृद्धि 1991–2001 के दशक में हुई । जनसंख्या का सर्वाधिक घनत्व (538 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी) गंगापुर तहसील में है। सन 2011 की जनसंख्या के अनुसार अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या 564737 है जो 42.28 प्रतिशत है। 20.87 प्रतिशत अनुसूचित जाति व 21.40 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति हैं। यहाँ राष्ट्रीय राज मार्ग 54.76 किलोमीटर, राज्य राज मार्ग 179.4 किलोमीटर तथा सड़कों की कुल लम्बाई 1901.57 किलोमीटर है।

जिले के 16.38 प्रतिशत क्षेत्र पर वन है, जो सन् 1952 की वन नीति के अनुसार निर्धारित 33 प्रतिशत से कम है, अतः जिले में वनों का विस्तार करने की आवश्यकता है। 20 वर्षों में जिले में 6.44 प्रतिशत की कमी आयी है। सन् 2012 में वनों के अन्तर्गत सर्वाधिक क्षेत्र (40 प्रतिशत से अधिक) दक्षिण–पूर्वी क्षेत्र में है। यहाँ बनास नदी घाटी, पहाड़ी क्षेत्र तथा रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान मे वनों का विस्तार है। 12.99 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि एवं 7.45 प्रतिशत कृषि अनुपलब्ध भूमि है 20 वर्षों में क्रमशः 2.81 व 1.28 प्रतिशत की कमी हुई है। 4.36 प्रतिशत भूमि परती भूमि है। इस का कारण कुल बोये गये क्षेत्र में वृद्धि है।

शुद्ध बोया गया क्षेत्र 58.69 प्रतिशत है। सन् 2012–13 में शुद्व बोया गया क्षेत्र के अन्तर्गत सर्वाधिक क्षेत्र (70 प्रतिशत से अधिक) उत्तरी व पश्चिमी क्षेत्र में है एंव सबसे कम (40 प्रतिशत से कम) दक्षिण व दक्षिण–पूर्वी क्षेत्र में है। 20 वर्षो में 18.85 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले में सर्वाधिक वृद्धि (20 प्रतिशत से अधिक) उत्तरी –पश्चिमी क्षेत्र है। यहाँ सुविधाओं, रासायनिक उर्वरकों, तकनीकी विकास, परती भूमि व कृषि अयोग्य भूमि को कृषि कार्यों में परिवर्तन करना है।

जिले में सन् 2012 में 80.42 प्रतिशत कुल बोया गया क्षेत्र है। 20 वर्षों में इस क्षेत्र के अर्न्तगत 32.92 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। 20 वर्षों में दो फसलीय क्षेत्र के

अन्तर्गत 14.06 प्रतिशत वृद्धि हृई है। सन् 2012 में दो फसलीय क्षेत्र के अन्तर्गत सर्वाधिक वृद्धि (45 प्रतिशत से अधिक) उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में हुई है।

जिले में सन् 2012 में 137.113 प्रतिशत शस्य गहनता है। 2012 में सर्वाधिक शस्य गहनता उत्तर, उत्तरी–पूर्वी व मध्यवर्ती क्षेत्र में 150 है। यहाँ दो फसलीय व सिंचाई व रासायनिक उर्वरकों का विकास है। पश्चिमी क्षेत्र में 120 से कम शस्य गहनता है। 20 वर्षों में 17.73 प्रतिशत वृद्धि हुई है। सर्वाधिक वृद्धि दक्षिण, मध्यवर्ती व उत्तरी क्षेत्रों में 25 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई है। सबसे कम वृद्धि दक्षिण–पूर्व व उत्तरी –पूर्वी क्षेत्रों में 15.10 प्रतिशत वृद्धि हुई है। यहाँ वर्षा की कमी, सिंचाई साधनों की कमी है। श्रेणी क्रम में सरसों की फसल प्रथम क्रम पर, द्वितीय क्रम पर गेंहू व तृतीय क्रम पर बाजरा है। प्रो. के. दोई व प्रो. जे. कोस्ट्रोसिकी की विधियाँ से शस्य संयोजन प्रदेश ज्ञात किये गये है। प्रो. के. दोई की विधि पूर्ण रूप से मात्रात्मक है, जबकि कोस्ट्रोविकी की विधि में फसलों के गुणात्मक एंव मात्रात्मक दोनों विशेषताओं का समावंश है।

सन् 2012 में खरीफ के अन्तर्गत बाजरा, ज्वार, खरीफ की दालें, तिल, चावल है। वर्ष 2012 में 32.74 प्रतिशत खरीफ फसलें व 67.26 प्रतिशत रबी फसलें बोई है। 20 वर्षों में खरीफ फसलों 22.31 प्रतिशत बाजरा की कमी हुई एवं रबी फसलों में वृद्धि हुई है। खरीफ की प्रथम फसल बाजरा है रबी प्रथम फसल सरसों है।

कृषि भूमि उपयोग दक्षता और कृषि उत्पादकता की वृद्धि में सिंचाई का स्थान सर्वोपरि है। कुल कृषि का 60 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित है तथा 40 प्रतिशत असिंचित है। वर्षों की मात्रा की अनिश्चिता तथा अनियमितता के कारण फसलों का उत्पादन अनिश्चित हो जाता है तथा अनियमितता के कारण फसलों का उत्पादन अनिश्चित हो जाता है। सिंचाई की वृद्धि होने पर अधिक उत्पादन देने वाले बीज, रासायनिक, उर्वरकों, कीटनाशक दवाओं के प्रयोग में भारी वृद्धि हुई है, जिससे फसलों में विविधता लायी जा सकती है। सन् 2012 में कुओं द्वारा सिंचाई 48.68 प्रतिशत, नलकूपों द्वारा 39.94 प्रतिशत, तालाबों द्वारा 7.67 प्रतिशत तथा नहरों द्वारा 4.79 प्रतिशत व अन्य साधनों द्वारा 6.88 प्रतिशत सिंचाई की जाती है। जिले में 20 वर्षों में सर्वाधिक परिवर्तन नलकूपों द्वारा (35.74 से प्रतिशत) सिंचित क्षेत्र में वृद्धि हुई है। कुल सिंचित क्षेत्र का 58.98 प्रतिशत सरसों, 31.20 प्रतिशत गेंहू एंव 1.22 प्रतिशत चने का सिंचित क्षेत्र है। इस प्रकार 91.4 प्रतिशत क्षेत्र इन तीनों फसलों के अर्न्तगत है। जिले में 98. 41 प्रतिशत क्षेत्र गेंहू एवं 76.20 प्रतिशत सरसों सिंचाई के द्वारा होती है। उत्तरी भाग में सिंचाई के साधनों की अल्पता है। जिसका फसलों के उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है। सिंचित फसलों में सबसे अधिक क्षेत्रफत्र गेंहू का है। पिछले 20 वर्षों में खाद्यान्न फसलों में गेंहू के सिंचित क्षेत्र अत्याधिक वृद्धि हुई है।

पछले 20 वर्षों मे सरसों के क्षेत्र में 552.02 प्रतिशत की वृद्धि हुई । जबकि गेंहू के क्षेत्र में 128.50 प्रतिशत के वृद्धि हुई। जिले में शुष्क कृषि की फसलों में प्रथम स्थान तारामीरा 95.92 प्रतिशत, चना 81.15 प्रतिशत व सरसों 23.79 प्रतिशत शुष्क कृषि पद्धति से की जाती है।

जिले में दो दशकों से कृषि विकास के स्तर में तकनीकीकरण का विकास हो रहा है। यांत्रिक शक्ति का निवेश सन् 1992–93 में ट्रेक्टरों में 2732 ट्रेक्टर थे जो 2012–13 में 15231 हो गये, 20 वर्षों में 12499 ट्रेक्टर की वृद्धि हुई। वहीं थ्रेशरों की संख्या में 1181 की वृद्धि हुई। परम्परागत कृषि साधनों में हल की संख्या सन् 1992–93 में 47021 थी वह सन् 2012–13 में घटकर 12054 रहे गई। गाड़ियों की संख्या सन् 1992–93 में 27543 थी जो घटकर सन् 2012–13 में 7451 इसमें 19570 की कमी हुई। सन् 1992–93 में ड़ीजल पम्पों की संख्या 22993 थी जो बढ़कर 45210 हो गई। इसमें 31.00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। विद्युत पम्प 1992–93 में 2145 संख्या थी वह बढ़कर 2012–13 में 10256 हो गई । 2012–13 में 29500 हेक्टेयर क्षेत्र पर 2026 क्विंटल बाजरे, गेंहू में 7552 क्विंटल, सरसों का 1595 क्विंटल, ज्वार का 110 क्विंटल, तील का 190 क्विंटल उन्नत किस्म के बीज का प्रयोग किया गया । रासायनिक खाद में नत्रजन सन् 2002–03 में 8906 मैट्रिक टन जो बढ़कर सन् 2012–13 में 201260 मैट्रिक टन हो गया , एक दशक में 11254 मैट्रिक टन नत्रजन रासायनिक खाद के प्रयोग में वृद्धि हुई। फास्फोरस में 1670 मैट्रिक टन, पोटाश में 153 मैट्रिक टन खाद की वृद्धि हुई।

कृषि विकास के स्तर को पर्यावरणीय दशाऐं व पर्यावरणीय दशाऐं कृषि विकास के स्तर को प्रभावित करती है। इनका सम्बनध शरीर की रक्त वहानियों के समान माना जा सकता है। पर्यावरणीय नियोजन में विभिन्न सिद्धान्तों को अपनाना चाहिए। इनमें वृक्षारोपण कार्यक्रम व सामाजिक वाहिनिक कार्यक्रम आदि है।

सवाई माधोपुर जिले में कृषि विकास स्तर के आधुनिकीकरण के मापन के लिए 9 चर मूल्यों को लेकर सामुहिक सूचकांक सांख्यिकीय विधि से इनका सिमांकन किया गया है। सामुहिक सूचकांकों का वर्गीकरण करके चार कृषि विकास स्तर के आधुनिकीकरण वर्गों में वर्गीकृत किया गया है। अत्याधिक विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण वर्ग में सवाई माधोपुर जिले के उत्तरी, उत्तरी–पूर्वी व दक्षिणी भाग में स्थित 8 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को सम्मिलित किया गया है। इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक + 0.51 से भी अधिक है। काश्त क्षेत्र, दुपज क्षेत्र, रासासनिक उर्वरकों के उपयोग, उन्नत बीजों के अन्तर्गत क्षेत्र, ट्रेक्टरों का अनुपात की दृष्टि से अत्याधिक विकसित वर्ग है। विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग में जिले के उत्तरी–पश्चिमी व मध्यवृती भाग को सम्मिलित किया गया है। इस में जिले के 10 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को सम्मिलित किया गया है। इस वर्ग का

सामुहिक सूचकांक + 0.26 से 0.50 है। इस वर्ग में कुल नौ सूचकांकों में से 6 में धनात्मक तथा 3 में ऋणात्मक परिवर्तन की ओर संकेत कर रहे हैं। मध्य विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण का वर्ग मध्यम विकसित वर्ग में सवाई माधोपुर जिले के दक्षिणी–पूर्वी व मध्यवृती भाग को सम्मिलित किया गया है। इस में जिले के 12 भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों को सम्मिलित किया गया है। इन में फलौदी, कुश्तला, सुरवाल, खण्डार, मेई कलाँ, बहरावण्ड़ा कलाँ, पिपलवाड़ा, बौंली, मलारना चौड़, लिवाली, जहारा, गंगापुर, को सम्मिलित किया गया है। इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक + 0.01 से 0.25 है। अल्प विकसित कृषि विकास स्तर का आधुनिकीकरण वर्ग में सवाई माधोपुर जिले दक्षिणी–पश्चिमी भाग में स्थित 5 भू–अभिलेख निरीक्षक वृत है। इस वर्ग का सामुहिक सूचकांक – 0.25 है। दुपज क्षेत्र, सिंचित क्षेत्र, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग, यांत्रिक ऊर्जा, उन्नत बीजों के अन्तर्गत क्षेत्र, ट्रेक्टरों का अनुपात की दृष्टि से इसका चौथा स्थान है।

सुझाव

अध्ययन क्षेत्र की कृषि विकास स्तर एवं पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने एवं उनके विकास के लिए निम्न सुझाव दिये जा सकते है–

1. वन विकास

अध्ययन क्षेत्र में वन 16.38 प्रतिशत भाग पर ही है। जो कि बहुत कम है। इसे ओर अधिक बढ़ाया जाना चाहिए क्योंकि वन क्षेत्र को बढ़ाकर के हम भौतिक आर्थिक व जलवायविक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। वन विकास से मृदा अपरदन, पर्यावरण प्रदुषण, वर्षा की कमी आदि समस्याओं से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रुप से लाभ मिल सकता है। इसलिए जरुरी है कि किसान अपनी भूमि की मेंढ, पड़त भूमि में वन लगाकर आर्थिक लाभ भी प्राप्त कर सकते है। सरकारी व निजी संस्थाओं को कृषि विकास की रक्षा के लिए वन विकास में सहयोग करना चाहिए।

2. शुष्क कृषि पद्धति

अध्ययन क्षेत्र में शुष्क कृषि पद्धति का प्रचलन है। इस पद्धति से सरसों, चना, जौ अच्छी मात्रा में उगाये जा सकता है। इसलिए जब कोई फसल पानी की थोड़ी मात्रा से ही पैदा हो रही हो एवं लाभ भी अधिक मिले तो सिंचाई की क्या आवश्यकता है। इसलिए शुष्क कृषि से भूमिगत जल की बचत आर्थिक उत्पादन और पर्यावरणीय लाभ हो रहा हो तो शुष्क कृषि करना अव्यावश्यक है। अध्ययन क्षेत्र में इस पद्धति की अच्छी सम्भावनाऐं है। इस प्रकार के बीज परिष्कृत किये जाने चाहिए जिनको पानी की कम आवश्यकता है।

3. सिंचाई सुविधाओं में बढ़ोतरी

अध्ययन क्षेत्र में 90.5 प्रतिशत सिंचाई कुओं व नलकूपों द्वारा होती है। जिसके कारण प्रतिवर्ष भूमिगत जल स्तर में गिरावट हो रही है। कहीं–कहीं पर तो कुओं में पानी का अभाव हो गया है। इसलिए जरुरी है कि क्षेत्र में कुओं से सिंचाई के दबाव को कम करने के लिए यहाँ के वर्षा जल व बनास तथा चम्बल नदी के जल का सदुपयोग किया जाये। इसके लिए नहरों से सिंचाई की व्यवस्था करनी होगी। अतः वर्षा जल के उपयोग के लिए नदियों पर छोटे–छोटे बांध बनाये जावें। जिससे पर्यावरणीय अवक्रमणी नहीं होगा और कुओं से सिंचाई में कमी होगी। बनास व चम्बल नदी पर भी सिंचाई हेतु लिफ्ट योजनाओं का निर्माण किया जाये। पिछले 20 वर्षों में सिंचित क्षेत्र में 25 प्रतिशत सिंचित भूमि की वृद्धि हुई है। यदि नियोजित तरीके से कार्य किया जाये तो प्रतिवर्ष 2 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र की वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार प्रति वर्ष 3552 हेक्टेयर सिंचित भूमि की वृद्धि हो सकती है।

4. भूमि सुधार

कृषि विकास के सन्तुलन एवं पर्यावरणीय विकास के लिए मृदा अपरदन एवं प्रदुषण पर रोक लगाना जरुरी है। प्रतिवर्ष क्षेत्र की उपजाऊ भूमि अपरदन के कारण कृषि अयोग्य होती जा रही हैं। इसलिए भूमि के विकास हेतु भूमि अपरदन को रोकना जरुरी है। इसके लिए किसानों को प्रशिक्षण देना, मोड़ेबन्दी करना और कृषि की वैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाना चाहिए। परती भूमि व कृषि अयोग्य भूमि को सुधार कर कृषि योग्य किया जाना चाहिए। पिछले 20 वर्षों में अध्ययन क्षेत्र की परती भूमि 8. 05 प्रतिशत की कमी हुई है।

5. चकबन्दी व्यवस्था

कृषि भूमि की चकबन्दी करना जरुरी है क्योंकि अध्ययन क्षेत्र की कृषि भूमि छोटे–छोटे टुकड़ों में बंटी हुई है। यदि किसानों की भूमि एक स्थान पर हो तो उसके समय, श्रम और धन की बचत हो सकती हैं। इसमें सरकार विशेष कानून बनाकर सुधार कर सकती है। अध्ययन क्षेत्र में जोत का औसत आकार 1.97 हेक्टेयर है। इस चकबन्दी द्वारा 2.47 तक बढ़ाया जा सकता है।

6. आधार भूत सुविधा

कृषि विकास को उच्च दशा में बनाये रखने के लिए आधारभूत सुविधाओं में विकास किया जाना चाहिए जैसे कि यातायात के साधनों, कृषि साधनों, सहकारिता, विद्युत, मण्ड़ी, खाद–बीज आदि सुविधाएं किसी भी क्षेत्र के विकास हेतु आवश्यक होती है अध्ययन क्षेत्र में अभि इनका उच्च विकास नहीं हुआ है। सिंचाई के समय प्रतिदिन

8 घण्टे बिजली की व्यवस्था होनी चाहिए। उच्च स्तर के खाद एवं बीज समय पर किसानों को उपलब्ध होने चाहिए।

7. शिक्षा का प्रसार

सवाई माधोपुर जिले की कृषि विकास को वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित करने के लिए यह आवश्यक होता है कि किसानों में शिक्षा का प्रसार होना चाहिए जिससे कि वे कृषि में आधुनिक तकनीकों को सहज समझ सके। जिले में साक्षरता का प्रतिशत 65.39 है। यहाँ पुरुष साक्षरता 81.51 प्रतिशत व महिला साक्षरता 47.51 प्रतिशत है। इस प्रकार लगभग पुरुषों की तुलना में महिलाओं की साक्षरता दर बहुत कम है। जिले में महिला साक्षरता का विकास किया जाने की अत्यन्त आवश्यकता है। साथ ही प्रचार प्रसार कार्यक्रमों का विकास करना चाहिए जिससे की अध्ययन क्षेत्र के किसान प्रसार के माध्यमों से कृषि विकास को स्वतः ही उन्नत कर सके। विभिन्न सरकारी, गैर सरकारी स्वैच्छिक संगठनों एवं बुद्धिजीवी वर्ग को इस कार्य हेतु आगे आना होगा। विभिन्न मनोरंजन एवं क्षेत्रीय वातावरण के अनुरुप कार्यक्रमों का समावेश कर के ग्रामीणों में शिक्षा के प्रति रुचि जगानी होगी। इस कार्य के लिए महाविद्यालय, विद्यालयों एवं प्रशिक्षण विद्यालयों के अध्यापकों व छात्रों को भागीदार बनाकर प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। अध्ययन क्षेत्र के महाविद्यालयों में भी कृषि को एक विषय के रुप में पढ़ाया जाना चाहिए या अलग से कृषि महाविद्यालय खोला जाना चाहिए। शिक्षा को रोजगार के साथ जोड़ा जाना चाहिए।

8. जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश

अध्ययन क्षेत्र में कृषि विकास में सबसे अधिक बाधक तत्त्व जनसंख्या की अधिक वृद्धि है यदि जनसंख्या वृद्धि पर अकुंश लगा दिया जाये तो अनेक कृषि संम्बन्धि समस्यायें स्वतः ही दूर हो जायेगी। जिले में 26.94 प्रतिशत जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ कृषि विकास स्तर में गिरावट होगी अतः क्षेत्र के कृषि विकास के संतुलन एवं विकास के लिए जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाना जरुरी है। इस प्रक्रिया में यहाँ के लोग स्वतः सहयोग कर सकते है। जनसंख्या वृद्धि में कमी के लिए सरकारी स्तर पर भी प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए। अतः इस क्षेत्र में परिवार नियोजन के साधनों का तीव्र गति से प्रसार करना होगा तथा प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों पर प्रदर्शन, केन्द्रीय व क्षेत्र मनोरंजन साधन के माध्यम से सीमित परिवार के महत्त्व को ग्रामीणों को समझाना होगा।

9. पशुओं के स्तर में सुधार

सवाई माधोपुर जिले में व्यापारिक पशुपालन में सर्वाधिक समस्या उन्नत नस्ल के पशुओं का अभाव है। अल्प विकसीत व पिछेड़ हुए क्षेत्रों में (मेई कला बहरावण्डा कलाँ, बालेर, खण्ड़ीप, फैलोदी, सूरवाल रवांजना चौड़ आदि भू–अभिलेख निरीक्षक वृतों में) पशुओं की संख्या तो अधिक पाई जाती है किन्तु उत्तम नस्ल के स्थान पर शत प्रतिशत देशी नस्ल के पशु है। इसका प्रमुख कारण उत्तम नस्ल के पशुओं का अभाव है, अतः कृषकों को उत्तम नस्ल के पशु पालने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों का प्रसार करके अच्छी नस्ल के पशु उपलब्ध करवाने चाहिए। पशु चिकित्सालयों का विस्तार, चल पशु चिकित्सालय इकाइयों व साप्ताहिक पशु चिकित्सा शिविर लगाये जाने चाहिए।

10. जैविक संसाधन की रक्षा

कृषि विकास स्तर में ऊर्जा के द्वारा भौतिक एवं जैविक तत्वों में परस्पर गतिशीलता होती रहती है। किसी एक तत्व के विनास के लिए सभी कारक प्रभावित होते है। कृषि उपज बढ़ाने के लिए किसान रासायनिक खाद एवं कीटनाशक दवाओं का उपयोग करते है। जिस कारण सभी जैविक तत्व (कृषि के लिए लाभदायक जीवाणु) सामाप्त हो रहे है। कृषि में सहायक कैंचुआ अब समाप्त प्रायः हो गये है। अतः कृषि विकास में सहायक जैविक तत्वों की रक्षा के लिए उपयुक्त तकनीक का विकास किया जाना जरुरी है।

11. सामाजिकी वानिकी

समाज का आदर्श स्वरुप स्थापित करने के लिए मानव मात्र को वानिकीकरण के प्रति अपने को सजग रखना चाहिए। वन्य जीव व पेड़ पौधों के विकास के लिए कार्य किये जाने चाहिए। खेतों की मेंड़, रास्तों पर कृषि अयोग्य भूमि पर पेड़ अधिक से अधिक पेड़ पौधें लगाकर स्थानीय लोगों की जलाऊ लकड़ी की प्राप्ति हो सके। जब कभी कोई पेड़–कटे तो उसके स्थान पर दस पेड़ लगाये तथा अपने को पौधों के प्रति दयालू बनाना चाहिए। क्षेत्र में वन मात्र 16.38 प्रतिशत है। इसको 33 प्रतिशत बढ़ाया जाना चाहिए।

12. चम्वल बीहड़ों एवं बनास नदी बेसिन में सुधार

अध्ययन क्षेत्र में चम्बल के बीहड़ 225 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले है। बनास बेसिन का विस्तार 575 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। यदि प्रति वर्ष एक प्रतिशत भूमि को भी सुधारा जाये तो अगल 5 वर्षो में हमें 25 वर्ग किलोमीटर भूमि कृषि के लिए मिल सकती है।

13. सरकारी ऋण प्रक्रिया को सरल बनाया जाए

जिले में 60.88 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र है जो बहुत कम होने के कारण कृषि उत्पादन सिंचाई पर निर्भर है कई बार फसलें नष्ट हो जाती है या सुखा पड़ जाता है तो किसानों को ऋण की अत्याधिक आवश्यकता होती है, किन्तु ऋण प्रक्रिया बहुत ही जटिल होने के कारण तथा अज्ञानता होने के कारण साहूकारों से ऋण लेना पड़ता है, जिसकी ब्याज दर काफी अधिक होती है। ऋणदात्री संस्थाओं को ऋण उपलब्ध कराने की प्रक्रिया अपनी चाहिए जिससे निर्धन किसानों को लाभ मिल सके। इसके लिए प्रत्येक पंचायत स्तर पर कृषक बचत समितियों का गठन किया जाना चाहिए। इन समीतियों में प्रत्येक सदस्य से प्रतिमाह या तिमाही किस्त जमा की जानी चाहिए तथा कुल जमा राशि में से किसी भी जरुतमंद कृषक को कृषि कार्य के लिए ब्याज रहित ऋण देकर इन का काम काज हानिरहित होना चाहिए। इन समीतियों के माध्यम से ही एक या एक से अधिक कृषकों की भूमि पर सामुहिक नलकूप व कुएं लगाने के लिए साधन उपलब्ध करवाकर सामुहिक सिंचाई को प्रोत्साहित किया जा सकता हैं।

14. भूमि की उर्वरा शक्ति को नष्ट होने से बचाना चाहिए तथा नहरी सिंचाई का विकास किया जाए। किसानों को नहरी सिंचाई का ज्ञान कराना चाहिए ताकि आवश्कता से अधिक सिंचाई कर किसान भूमि की उर्वरा शक्ति को नष्ट होने से बचाया सके।

BIBLIOGRAPHY

(A) BOOKS ON AGRICULTURAL GEOGRAPHY

1. Anderson, J. R. (1970) : "A Geography of Agriculture",Iowa: W. M. C. Brown Company Publishers.
2. Angel Utset (2009) : " Climate Variability, Modeling Tools and Agricultural Decision Making (Climate Change and Its Couses, Effects and Prediction)
3. Ashton, J.& S.J.Rogers (1967) :"Economic Change and Agricultural ",Edinburgh: Oliver & Boyd.
4. Baker, O.E. (1923) : " Land Utilisation in the united States", Geographical Aspect of the Problem, Geography Rev. 13, PP 9 -15 .
5. Bansil, P.C. (1977) : "Agricultural Problems of India", Vikas, New delhi .
6. Bhtia, S .S. (1965) : Pattern of Crop Concentration and Diversification in India", economic Geography.
7. Boserup, E. (1965) : "The Condition of Agricultural Growth", Allen and Unwin, London .
8. Brian, W. Ilbery (1986) : "Agricultural Geography : Social and Economic

Analysis".

9. Bruno Dorin Anthomas Jullien (2004) : "Agricultural Incentives in India : Past Trends and Prespective Paths Towards Sustainable Development".

10. Bhatia, S.S. (1967) : "A new Measure of Crop Efficiency in Uttarpradesh" Economic Geography, Journal Volume 43 No.3.

11. Chauhan. D. S. (1936) : "Studies in the Utilisation of Agricultural Land " Shivlal and Co., Agra.

12. Chauhan. T. S. (1987) : " Agricultural Geography : A Study of Rajasthsan State", Academic Publishers, Jaipur.

13. Candolle, A.D. (1967) : " Origin of Cultivated Plants", 2nd Ed., Hafner, New York.

14. Cohen, R. L. (1959) : The Economics of Agricultural", Cambridge: University Press.

15. Chakravorty, A. K. (1973) : " Micro-Climatology & Its Aoolication to Developed of Agriculture of Arid Regions of Rajasthan'', Natational Geography.

16. Chew, H. C. (1958) : " Fifteen Years of Agricultural Change".

17. Coppock, J. T. (1968) : "Changes in Land Use in Great Britain", in Land Use and Resources : Studies in Applied

Geography, Special Publication No. 1.

18. Chhedi Lall (2004) : "Horizontal Subsurface Drainage Theoeies for Agricultural Land ".

19. Cppock, J.T. (1965) : " The Cortographic Representation of British Agricultural Statistics".

20. Copock, J.T. (1964) : "Agricultural Atlas of England and Wales ", Faber and Faber, London.

21. Courtenay, P.P.(1968) : "Plantation Agriculture",London: G.Bell and Sons.

22. Dablberg, K.A. (1979) : "Beyond the Green Revolation-The Ecology and politics of Global Agricultural Development", Plenum Press, New Yourk.

23. Dasgupta, S. (1989) :"Diffusion of Agricultural Innovation on Village India", Wiley Easten Ltd. New Delhi.

24. Dasgupta,S.P.Ed , (1980) : "Atlas of Agricultural Resources of India",NATMO.

25. David, B. Griage (1995): "An Introduction to Agricultural Geography".

26. David B.Griag.(1983) : "The Dynamics of Agricultural Change : The Historical Experience".

27. David B.Griag (2009) :"The Agricultural Revolution in South Luncashir", (Cambridge Studies in Economic History).

28. Dube, R.S. (1991) : "Applied Agricultural Geography".

29. Dunn, E.S. (1954) : "The Location of Agricultural Producton ", University of Florida Ganevell.

30. Eneydi, G. (1976) : "The Changing Face of Agricultural in Eastern Euroe".

31 Enyedi, G.Y (1964) : "Geographical Types of Agriculture", Aplied Geography in Hungary , Budapest.

32. Farrner, B.H (974) : "Agriculture Colonization in India Since Independence", OxFord University Press,London.

33. Ganguli, B.N.(1964): "Landuse and Agricultural Panning", Geography Reviend of Inida, 26(2).

34. Genawat,S.(1985) : "Agricultural Landuse and Population- A Gegoraphical Analysis of Salumbar Tehsil",Sukhadia University, Udaipur.

35. Robinson, G.M.(2003):"Geographies of Agricultural : Globalisation , Restractaring, and Sustainability".

36. Gregor , H.F. (1970): "Agricultural Geography", Prentice Hall, Enlewood Ciff, N.J.

37. Grigg,D.B (1969) :"The Agricultural Systems of the World", Cambridge University Press.

38. Gujar, R.K (1987) : "Irrigation for Agricultural Mordemisation",

39. Gupta, N.L (1966) : "Land Utilization in Udaipur Plateau",

University Udaipur.

40. Harris, D.R. (1969) :"The Ecology of Agricultural Systems", in Trends in Geography, Cooke, R.V. and Johnson, J.H.(Eds.) Pergmon Press, Landon.

41. Hayami-Yunro & Vernon Ruttan (977) : "Agricultural Development An International Perspective", John Hopkins Press, Baltimore.

42. Husain,M. (1979) : "Agricultural Geography"Inter-India Publication, Delhi.

43. Husain, M. (1994) : "Agricultural Geography" , Anmol Publication Pvt. Ltd; New Delhi- 1100062.

44. Husain, M. (2004) : "Systematic Agricultural Geography Rawat Publication,jaipur.

45. Hutchinson, S.J.ed. (1974) : "Evolutionary Studies in World Crops", Camgridge University Press, Cambridge.

46. James, P.E.& Jones, C.F. (1974) : "American Georaphy Investory and Prospet, Syracuse University Press, PP-30.

47. Jain, C.K. (1988) : "Patterns of Agricultural Development Madhya Predesh", Northem Book Center, New Delhi.

48. Jain, S.C. (1965) : "Agricultural Development in India", Allahabad : Kitab Mahal.

49. Jha, B.N. (1980) : "Problems of Land Utilization, A Case Study o Kosi

Region", Llassical, publishing, New Dehih.

50. Kalwar, S.C.(2008) :"Wastelands and Planning Development", Concept Publishing Company, New Delhi.

51. Kostrowicki, J. (1976) : "World Types of Agricultural", I.G.U. Commission on Agricultural Typology (Mimeographed).

52. Kostrowicki, J. (1964) : "Geographical Typology of Agriculture: Principles and Method Geographica Plonica.

53. Kostrowicki, J. (1968) : "Some Methods and Techniques to Determine Crop and Other Land Use in Polish Land Use Studies Crop Combination Proceeding of the I.G.U. India, PP -1-11.

54. Manish Dubey (2009) : "International Encyclopaedia of Agricultural Geogoraphy".

55. Mark Overton (1996) : "Agricultural Revolution in England : The Transformation of the Agrarian Economy 1500-1850", (Cambridge Studies in Historical Geography).

56. Hanif, M.(2006) : " Encylopaedia of Agricultural Geography ".

57. Misra, R.P (1968) : " Diffusion of Agricultural Innovations", Mysore : Instt. of Development Studies.

58. Mohammad, Ali (1978) : " Studies in Agriculture Geography, Rajesh Publication, New Delhi.

59. Morgan, W.B & R.J.C.Munton (1971): :"Agricultural Geography", Methusn and Co. , Landon.

60. Nitya Nand (1972) : "Crop Combination in Rajasthan", Geography Revi. of Indian, Vol. 34 (1), Calcutta, PP 44-60.

61. NCAER (1960) : Techno Economic Suruey of M.P. Asia Publishing House, Bombay, Is ted.(1960).

62. Owen, J.Furuseth (1982) : "Agricultural Land in an Urban Society Resource Publication M. Geography.

63. Randnawa, M.S (974): "Green Revolution : A Case Study of Panjab, Vikash Publication Con., New Delhi.

64. Randnawa, M.S. (1958) :"Agrculture and Animal Husbandry in India", ICAR New Delhi.60. Peter D. Moor (2006): "Agricultural and Urban Areasa Biomes of theEarth".

65. Peter, Johnston (2004) : "Planning and Managing Agricultural and Ecological Experiments".

66. Shafi, M. (2006) : "Agricultural Geography"7jy32, Dorling Kendersley (India) Pvt. Ltd.

67. Sharma, B.L. (1983) : "Agricultural Typology of Rajasthan", Pink Publishing, Udaipur.

68. Sharma, B.L.(1991): " Applied Agricultural Geography".

69. Shukla, Laxmi :" Reading in Agricultural Geograpy" Scientific Pulisher,

(1991) 5, New Pali Road, Jodhpr.

70. Singh, G.B. (1979) : " Transformation of Agricultural", Vishal Publication Kurukshetra.

71. Singh, J. (1974) : "An Agricultural Attas of India : A Geography Analysis", Vishal Publications, Kurukshetra.

72. Singh, J.& S.S. Dhillon (1984-1994) : "Agricultural Geography" Tata Mc Graw-Hill Publishing Companay limited, New Delhi.

73. Singh, Jasbir (1974) : "Agricultural Atlas of India", Vishal Publications. Kurukshetra.

74. Subramaniam, C. : "New Stratrgy in Indian Agriculture", Vikash Publication House Ltd. , New Delhi.

75. Singh, S.S.(1998) : "Crop Managment Kalyani Pulishers, Ludhiand.

76. Swapakashan. K. (1994) : "Crop Disease : Inovative techniques and Managment Kayani Pulishers, Ludhiand.

77. Sharma, R.K (2008) : "Woman in Agriculture", M.D.Publication Pvt. Ltd.

78. Sach Childanand (1972) :"Social Dimension of Agricultural Development", National Pliblishing House, New Delhi.

79. Thomas, A.Rumney : "The Study of Agricultural Geography : A Scholorly Guide and Bibliography".

80. Timmons, J.F. (1944): " Distibution of World Land Resources", Land Policy Review, PP.8-14.

81. Vyas, V.S. (2007) : "Policies For Agricultural Development" Rawat Publication.

82. Weaver, J.C (1954) :"Crop Combination Regions in Tte MiddleWest", Geography Reviend. Vol. 4 (a) PP 44-48, 175-200.

83. Zobler Leonard,(1962:"The Economic Histoical view of Natural Resources Use and Conservation", Economic Geography, Vol.38, PP 89.

(B) BOOKS ON ENVIRONMENT GEOGRAPHY

1. Chadha , S.K.(1992) : Conserving India Environment, Pointer Publishers.
2. Kirkby & Morgan(1980):"SoilErosion"A Wiley Interscience Publication.
3. Katiyar, V.S. (1997) : "Environmental Concems, Development Resouress and Sustainable Development".
4. Miller & Donahue (2002) :" Soil in our Environment", 7th Ed
5. Mathur, H.S (1988) : " Environmental Resources", The Crisis of Development, RBSA. Publication. Jaipur.
6. Singh, P. (ed.), (1989) : "Problem of Wasteland and Forest ecology of India", Ashish Publishing House, New Delhi.
7. Singh, A.L. (1985) : "The Problem of Wastelands in India With Special referenc to U.P", B.R. Publishing Corporation, New Delhi.

7. **Sharma, H.S. & M.L. Sharma: " Environment Design and (1987) Development", Scientific Publishers, Jodhpur.**

8. **Singh, R.L and Singh, J. (1984): " Environmental Mangement", U.b.B.P. and N.G.S.I., Allahabad.**

9. अवस्थी, एन. एम. (1995) :'' पर्यावरण भूगोल'', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

10. कलवार, एस.सी. (1996) : ''पर्यावरण व परती भूमि'', पोइन्टर पब्लिकेश, एस.एम.एस. हाइवे, जयपुर।

11. कलवार, एस.सी. (2001) : ''पर्यावरण संरक्षण,'' पोइन्टर पब्लिकेशन, एस.एम.एस हाइवे, जयपुर।

12. कोली, एच. एन. (1996) : ''पर्यावरण एवं मानव संसाधन'' प्रकाशित शोध ग्रन्थ, पोइन्टर पब्लिकेशन,जयपुर।

13. गुर्जर, आर.के. (1997) : ''पर्यावरण प्रबन्धन एवं विकास'', पोइन्टर पब्लिकेशन, एस.एम.एस. हाइवे, जयपुर।

14. गुर्जर, आर.के. (2001) :''जल प्रबन्धन विज्ञान'', पोइन्टर पब्लिकेशन, एस.एम.एस. हाइवे, जयपुर ।

15. जाट, बी.सी. (2000) :''जलग्रहण प्रबन्धन'', पोइन्टर , एस.एम.एस. हाइवें, जयपुर।

16. लोढा, आर.ए. (1999) :''मानव और पर्यावरण'', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर, दिल्ली।

17. नेगी, पी.एस. (1991) :''पारिस्थितिकीय विकास एवं पर्यावरण भूगोल़'', रस्तोगी प्रकाशन, मेरठ।

18. स्वर्णकार, जी. पी. (1998) :''पर्यावरण और जनसंख्या'', पोइन्टर पोइन्टर , एस.एम.एस. हाइवे, जयपुर। ।

19. शर्मा, बी.एल. (1990) :'' पर्यावरण नियोजन एवं पारस्थितिकीय विकास'', साहित्य भवन,, आगरा।

CENSUS HANDBOOKS

1 1982 Rajasthan District Gazetterers Sawai Madhopr,District

2. Census Report of populatin 2011, Rajasthan. Directorate of Census Operations, Rajasthan, Jaipur.

3. District.Census Handbooks Sawai Madhopr district 1971,1981,1991, 2001,2011.

4. Statisical Abstract of Rajasthan- Directorate of Economic and Statices, Rajasthan, Jaipur.

4 Report on the LiveStock Census of Rajathan, 2007 Board of revenue Govt. of Rajastha, Ajmer.

6 National wasteland Development Board and ministry of Environment and forest, govt. of India – 1985, Technical Task Grop Report, wasteland- Definition and classification.

7 1961 Ministry of food and Agriculture, Govvt of India- waqsteland Survey and Reclamation Committe Report on the Location and Utilization of wastelands in India Port X, U.P. New Delihi.

8 1965 Plinning Commission, Committe on Natural Resoures- Study of Survey and Reclamations of Ravines in India.

9 2000 Agro-Ecological Assesment of soil Resources of Rejasthan for land use Planning , national Bureau of Soil Survey & land use Planning (ICAR) Nagpur.

Other Book

1. **Bhargava, V.S. : " History of Rajathan" (From ancient time to 1956). Nakoda Publishing House.**
2. ओझा. आर. (1985) :'' जनसंख्या भूगोल'', प्रतिभा प्रकाशन, कानपुर।
3. कुमार, पी.एण्ड शर्मा के. (1990) : ''कृषि भूगोल'' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
4. कौशिक, एस.डी. (1986) : ''मानव एवं आर्थिक भूगोल'', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
5. कौशिक, एस.डी. (1986) :''भौगोलिक विचार धाराऐं एवं विधितंत्र'', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
6. गुप्ता, एन. एल. (1987) : ''राजस्थान में कृषि विकास'', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
7. चौहान, वी.एम. (2002) : ''भारत का विस्तृत भूगोल'', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
8. चौहान, तेजसिंह (1994) : ''राजस्थान एटलस'', भूगोल विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, विज्ञान प्रकाशन, जोधपुर।
9. जोशी, वाई.जी. (1972) : ''नर्मदा बेसिन का कृषि भूगोल'', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
10. दूबे, आर.एन. एण्ड़ सिन्हा बी.एस. :'' आर्थिक विकास एवं नियोजन'', नेशनल पब्लिशिंग (1981) हाऊस, नई दिल्ली।
11. नाथुरामका, लक्ष्मीनारायण (2002) :''राजस्थान की अर्थव्यवस्था'', कॉलेज बुक हाऊस, जयपुर।
12. नागर, केलाशनाथ (1986) : '' सांख्यिकी के मूल तत्त्व'', कॉलेज बुक हाऊस जयपुर।
13. बसन्त, मोघे (1985) : '' राजस्थान में कृषि उत्पादन '', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर ।
14. भल्ला, एल. आर. (2007) : '' राजस्थान का भूगोल'', कुलदीप पब्लिकेशन, अजमेर।
15. मोघे, बसन्त एवं माथुर सी.एम. : ''राजस्थान की मृदाएँ एवं उनका प्रबन्ध'', राजस्थान (1984) हिन्दी अकादमी, जयपुर।

16. लोढा, आर.एम.(1999) : '' राजस्थान का भूगोल'', हिमांशु एवं माहेश्वरी, पब्लिकेशन अदयपुर, दिल्ली।

17. सक्सेना, एच. एम. (1987) :''राजस्थान का भूगोल'', राजस्थान हिन्दी गन्थ अकादमी, जयपुर।

18. सिंह, अमर एण्ड रजा मेहन्दी (1983) :'' संसाधन एवं संरक्षण भूगोल'', प्रगति प्रकाशन, मेरठ।

19. सिंह, छिद्रदा (1984) : '' खरीफ फसलों की वैज्ञानिक खेती एवं फसल परिस्थितिकी'', भारती भारत प्रकाशन, मरेठ।

20. सेक्सना, के.सी. एण्ड शर्मा, एन.सी. : (1976) ''शस्य विज्ञान के आधुनिक सिद्धान्त'', अनुवादक एवं प्रकाशन निदेशालय, गोविन्द बल्लभ विश्वविद्यालय, पंत नगर उत्तर प्रदेश ।

21. शर्मा, कालूराम (अनुवादक) : कर्नल जेम्स टॉड कृत, ''राजस्थान का इतिहास **"**, श्याम प्रकाशन ,जयपुर , द्वितीय संस्करण (2002)।

22. शर्माः बी.एल. (1987) : ''कृषि भूगोल'', साहित्य भवन ,मध्यप्रदेश, आगरा।

23. श्री वास्तव, दयाशंकर (1993) : ''कृषि के परिवर्तनशील प्रतिरूपों का भौगोलिक अध्ययन'', क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।

Unpublished Thesis

I Ph.D.Thesis

1 Genawat, S. (1985) : "Agricultural Land Use and Population-A Geographical Analysis of Salumbar Tehsil' Sukhadia university, Udaipur.

2 Gupta, N.L. (1966) :'Land Utilization in Udaipur plateau', Udaipur University, Udaipur.

3 Lodha, K. (1986) : 'Changing pattern of agricultural and utilization in Udaipur basin', Sukhadia University .

4 Khan, M.Z.A. (1990) : 'Land utilization in chhabra Tehsil' with special reference to wasteland utilization, kota district, Raj; Sukhadia University, Udaipur.

II M.Phil Dissertations :

1 Sati, D.n. 1984 ' Changing cropputtern in Udaipur basin', Sukhadia University, Udaipur.

2 कोली, हरिनारायण (1991) : ''हाड़ौती पठार में कृषि का परिवर्तन कोटा जिले का भौगोलिक अध्ययन'', एम. फिल. लधु शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।